अवामी
ग़लत फहमियाँ और उनकी इस्लाह
मौलाना तत्हीर अहमद रज़वी बरेलवी
मकतबा इमामे आज़म
425, मटिया महल, जामा मस्जिद, दिल्ली-6
इस्लामी कुतुब खाना
बरेली (यू.पी.)

إِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَ اللّٰهِ الْإِسْلَام

बेशक अल्लाह के यहाँ मज़हब सिर्फ इस्लाम है। (कुरआन)

ग़लत फ़हमियाँ और उनकी इस्लाह

उबैदे ग़ौसो ख़्वाजः रज़ा व कुल औलिया
मुहम्मद जमालुद्दीन ख़ान क़ादिरी रज़वी
ज़िलअ़ बहराइच शरीफ़ यूपी, अल-हिन्द
मोबाइल नम्बर +917860520899

मुरत्तिब
मौलाना तत्हीर अहमद बरेलवी

इस्लामी कुतुब ख़ाना
धौंरा, ज़िला बरेली, उत्तर प्रदेश—243204
फोन—2223043, कोड—0581

Publisher

ISLAMI KUTUB KHANA
Raza Market, Dhounra, Distt. Bareilly, (U.P.) - 243204
Phone : 0581-3252466, Mobile : 9319295813

बेशक अल्लाह के यहाँ मज़हब सिर्फ़ इस्लाम है। (कुरआन)

ग़लत फ़हमियाँ और उनकी इस्लाह

ज़रूरी नोटः मुसन्निफ की इजाज़त के बगैर इस किताब को न छपवायें।

नाम किताबा	ग़लतफ़हमियाँ और उनकी इस्लाह
मुरत्तिब	मौलाना तत्हीर अहमद रज़वी बरैलवी
नाशिर	मकतबा इमामे आज़म-दिल्ली
पेशकर्दा	मोहम्मद जलालुद्दीन कादरी निज़ामी
ब-ऐहतिमाम	मोहम्मद ईमामुद्दीन कादरी
प्रूफरीडिंग	मास्टर मोहम्मद कमर साहब-धौरा
सने इशाअत	2016 ई०
तअदाद	1100
कीमत	
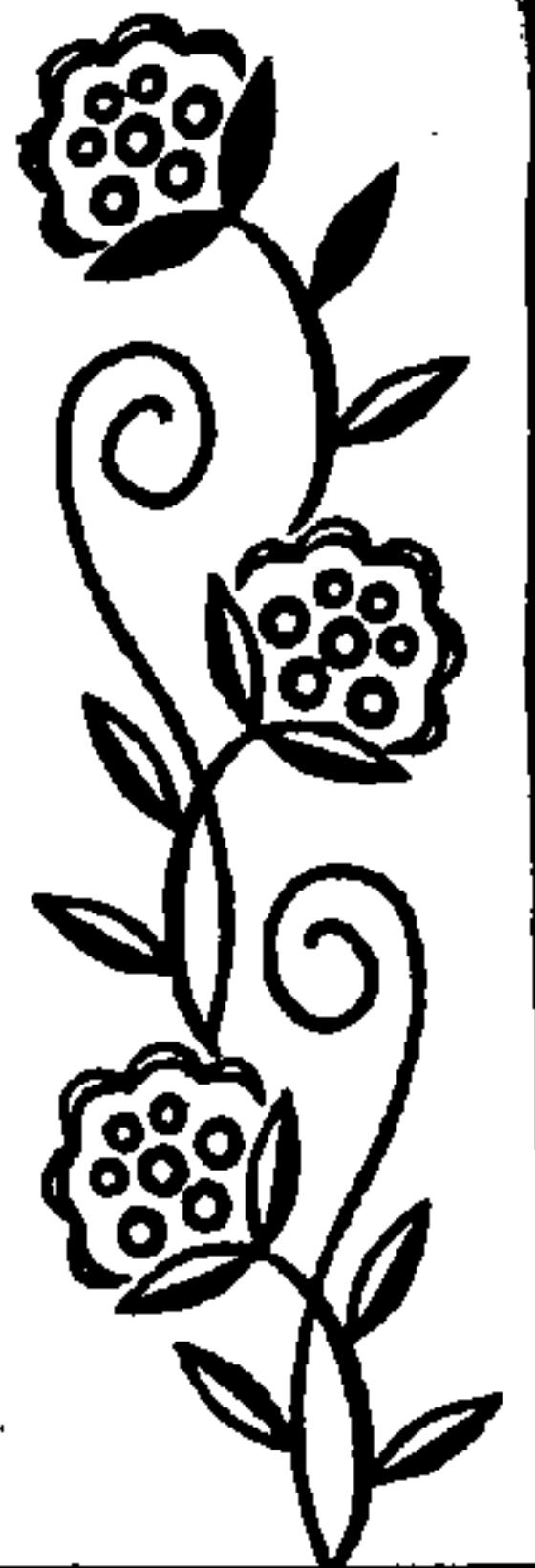
MAKTABA IMAME AZAM

مکتبہ امام اعظم دہلی

۴۲۵/۲- اردو مارکیٹ مٹیا محل جامع مسجد دہلی ۶

Mobile No. 9958423551, 9560054375, 9958724473

e-mail : maktabaimameaazam@gmail.com, nizamuddinnizami@gmail.com

फ़ेहरिस्त

पेशे लफ़्ज़

आने वाले सफ़हात में कुछ वह ज़रूरी अहकामे शरअ़ जमा किये गए हैं जिन से हमारे बहुत से मुसलमान भाई बे ख़बर हैं या वह मसाइल व अहकाम के मामले में कुछ का कुछ समझे हुए हैं। मज़हबे इस्लाम एक दरमियानी रास्ता है। जो न इतना आसान कि इन्सान को उसकी ख़्वाहिशात और नफ़्सानी तक़ाज़ों पर छोड़ दिया जाए और मज़हब को बिल्कुल आज़ाद ख़्याली बे राह रवी या गुन्डा गर्दी बना दिया जाए।

यही वजह है कि इस्लाम को इन्सान ने बड़ी तेज़ी के साथ कबूल किया और आनन फ़ानन वह दुनिया का सब से ज़्यादा मक़बूल मज़हब बन गया और किसी एक तबक़े, नस्ल या गिरोह और इलाक़े का नहीं बल्कि सारी दुनिया में हर नस्ल, हर इलाक़े और तबक़े के लोग इस्लाम से वाबस्ता हो गए। छोटे, बड़े, अमीर, ग़रीब, सुल्तान और रिआ़या, देहाती और शहरी, कमज़ोर व ताक़तवर, काले और गोरे हर क़िस्म और हर इलाक़े, मुल्क व वतन के लोग अब भी मुसलमान नज़र आयेंगे और पहले भी होते रहे हैं और आज ज़मीन के चेहरे पर बसने वाले इन्सानों में सब से बड़ी आबादी इस्लाम के नाम लेवाओं की है। अगरचे अब काफ़ी लोग बराए नाम ही मुसलमान हैं हक़ीक़त यह है कि अगर आज अहले इस्लाम, इस्लाम के उसूल व ज़वाबित की पाबन्दी करके सही मअ़ना में मुसलमान बन जायें तो दुनिया में जो लोग अभी इस्लाम की लज़्ज़त से ना आशना हैं वह सब इस्लाम के दामन से वाबस्ता हो कर मुसलमान बन जायेंगे और बहुत जल्द दुनिया में सिर्फ़ एक ही मज़हब होगा - और वह इस्लाम। मगर

अफ़सोस कि आज मुसलामानों ने ही इस्लाम छोड़ दिया और वह कुफ़्र और उसके शिआर को अपना कर बड़े खुश नज़र आ रहे हैं।

मछली ने ढील पाई है लुक़्में पे शाद है
सय्याद शादमाँ है कि काँटा निगल गई

इनमें कुछ लोग तो वह हैं कि अपने दुनियावी बे-जा शौक़, अरमान और ख़्वाहिशात पूरी करने के लिए दौलत कमाने में इतने मसरूफ़ हैं कि उन्हें इस्लाम को समझने और उसकी ख़ूबियों से वाक़िफ़ होकर अमल करने के लिए सोचने का ही मौक़ा मयस्सर नहीं और शायद उन्हें मरने से पहले यह मौक़ा मिल भी नहीं पाएगा। मौत ही उनकी आँखें खोलेगी और सोते से जगाएगी, बेहोशी दूर करेगी। लेकिन इसके बावुजूद ऐसे लोगों की तादाद भी काफ़ी है जो इस्लाम की ख़ूबियों से वाक़िफ़ हैं। और चाहते हैं कि हम इस्लाम को तर्ज़े ज़िन्दगी बनायें लेकिन कुछ असबाब उनकी राह में हाइल हैं ऐसे अपने भाईयों के लिए अनक़रीब मेरा इरादा एक छोटी सी किताब मुरत्तब करने का है। जिसको पढ़ कर उन के लिए रास्ता आसान हो सके और तौफ़ीक़ रब्बे करीम की तरफ़ से है। وَمَا تَوْفِيْقِيْ اِلَّا بِاللّٰهِ تَعَالٰى अवाम से राब्ता रखने उन में रहने सहने के बाद मैंने देखा कि इस्लाम और उसके अहकाम से मुतअ़ल्लिक़ उनमें कुछ ग़लतफ़हमियाँ राइज हो गई हैं। उनको देख कर मैंने चाहा कि क़लमबन्द करके उनकी इस्लाह कर दी जाए। खुलासा यह कि यह एक अवामी जाइज़ा है जो आपके पेशे नज़र है।

तसनीफ़ व तालीफ़ का मशग़ला हो या वअ़ज़ व तक़रीर का काम हमारा आईडियल आज के पुरफ़ितन दौर में मसलके

आलाहज़रत है जो इस्लाम व सुन्नत का सही तर्जमान है और वह मुजद्दिदे उम्मत आलाहज़रत मौलाना अहमद रज़ा ख़ाँ साहब अलैहिर्रहमतु वर्रिद्‌वान की तसनीफ़ कर्दा एक हज़ार से ज़्यादा किताबें, फ़तावा व रसाइल हैं जो अब दुनिया भर में छप कर फैल चुके हैं।

साथ ही साथ मस्जिदों के इमाम हों या मुक़र्रिरीन व वाइज़ीन हर क़िस्म के मुसलेहीन से मेरी गुज़ारिश है कि वह अवाम की इस्लाह कभी झिड़क कर या डांट कर न करें बल्कि प्यार व महब्बत से उन्हें हक़ीक़ते मसअला समझायें अगर मान जायें तो ठीक वरना उन्हें उनके हाल पर रहने दें। अनपढ़ लोगों से बहस व मुबाहिसा और मसाइल में झगड़ा करने से हदीसे पाक में मना किया गया है।

तत्हीर अहमद रज़वी बरेलवी

ज़रूरी नोट : अहले इल्म से गुज़ारिश है कि किताब में कोई कमी या ग़लती नज़र आए या किसी बात में किसी को कोई शक हो तो ख़त लिख कर या टेलीफ़ोन के ज़रिए इत्तिला दें। मैं शुक्र गुज़ार हूँगा।

डाक का पता यह है :

तत्हीर अहमद रज़वी TATHEER AHMAD RAZVI

पोस्ट धौंरा, ज़िला बरेली POST DHOUNRA, DIST. BAREILLY

पिन कोड (PIN) : 243204

फ़ोन (PHONE) : 0581-3952466

मोबाइल (MOBILE) : 9319295813, 9319371323

अल्लाह को ऊपर वाला कहना

कुछ लोग अल्लाह तआ़ला को नाम लेने के बजाए उसको ऊपर वाला बोलते हैं। यह निहायत ग़लत बात है बल्कि अगर यह अक़ीदा रख कर यह लफ़्ज़ बोले कि अल्लाह तआ़ला ऊपर है तो यह कुफ़्र है। क्यूंकि अल्लाह की ज़ात ऊपर नीचे आगे पीछे दाहिने बायें तमाम सम्तों हर मकान और हर ज़मान से पाक है बरतर व बाला है। इन सब दिशाओं पूरब पच्छिम उत्तर दक्खिन ऊपर नीचे दाहिने आगे पीछे ज़मान व मकान को उसी ने पैदा किया है तो अल्लाह तआ़ला के लिए यह नहीं बोला जा सकता कि वह ऊपर है या नीचे है पूरब में है या पच्छिम में है क्यूंकि जब उसने इन चीज़ों को पैदा नहीं किया था वह तब भी था कहाँ था और क्या था इसकी हक़ीक़त को उसके अलावा कोई नहीं जानता। अगर कोई कहे कि अल्लाह तआ़ला अ़र्श पर है तो उससे पूछा जाए कि जब उसने अ़र्श को पैदा नहीं किया था तब वह कहाँ था? यूंही अगर कोई कहे कि अल्लाह तआ़ला ऊपर है तो उससे पूछा जाए कि ऊपर को पैदा करने से पहले वह कहाँ था?

हाँ अगर कोई शख़्स अल्लाह तआ़ला को ऊपर वाला इस ख़्याल से कहे कि वह सब से बुलन्द व बाला है और उसका मर्तबा सब से ऊपर है तो यह कुफ़्र नहीं है लेकिन फिर भी अल्लाह तआ़ला को ऐसे अल्फ़ाज़ से बोलना सही नही जिन से कुफ़्र का शुबहा हो और अल्लाह तआ़ला को ऊपर वाला कहना बहर हाल मना है जिससे बचना ज़रूरी है।

कुछ लोग अल्लाह तआ़ला को "मालिक" कहते हैं, कि मालिक ने चाहा तो ऐसा हो जाएगा या मालिक जो करेगा वह होगा वग़ैरा वग़ैरा। यह भी अच्छा तरीक़ा नहीं है सब से ज़्यादा सीधी सच्ची और अच्छी बात यह है कि अल्लाह को अल्लाह ही कहा जाए क्यूंकि उसका नाम लेना सबसे अच्छी इबादत है। और

उसका ज़िक्र करना ही इन्सान का सबसे बड़ा मक़सद। और मुसलमान की पहचान ही यह है कि उसको अल्लाह का नाम लेने और सुनने में मज़ा आने लगे।

बोलचाल में कुफ़्री बातें

आम लोग बातचीत में कुफ़्र के शब्द बोल कर इस्लाम से ख़ारिज हो जाते हैं और ईमान से हाथ धो बैठते हैं इसका ख़्याल रखना निहायत ज़रूरी है क्यूंकि हर गुनाह की बख़्शिश है लेकिन अगर कुफ़्र बक कर ईमान खो दिया तो बख़्शिश और जन्नत में जाने की कोई सूरत नहीं बल्कि सब दिन जहन्नम में जलना लाज़िमी है।

हदीस शरीफ़ में है कि हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया कि शाम को आदमी मोमिन होगा तो सवेरे को काफ़िर और सुबह को मोमिन होगा तो शाम को काफ़िर।

कालिमात कुफ़्र कितने हैं और किस किस बात से कुफ़्र लाज़िम आता है इसकी तफ़सील बयान करना दुश्वार है लेकिन हम अवाम भाईयों के लिए चन्द हिदायतें लिखे देते हैं। इन्शा अल्लाह ईमान सलामत रहेगा।

(1) आप बा-अदब हो जाइये। अल्लाह तआला उसके रसूल, फ़रिश्ते, ख़ानए काबा, मसाजिद, कुर्आने करीम, दीनी किताबें, बुज़ुर्गाने दीन, उलमाए किराम, वालिदैन; इन सब का अदब ताज़ीम और महब्बत दिल में बिठा लीजिये। बा-अदब इन्सान का दिल एक खरे खोटे को परखने की तराज़ू हो जाता है कि न ख़ुद उसके मुँह से ग़लत बात निकलती है और कोई और बके तो उसको नागवार-गुज़रती है। इसीलिए अनपढ़ बा-अदब अच्छा है पढ़े लिखे बे-अदब से। ख़ुदाए तआला फ़रमाता है :

وَمَنْ يُّعَظِّمْ شَعَائِرَ اللّٰهِ فَاِنَّهَا مِنْ تَقْوَى الْقُلُوْبِ ط

तर्जमा : जो अल्लाह की निशानियों की ताज़ीम करे तो यह दिलों की परहेज़गारी है।

(2) हंसी मज़ाक़ तफ़रीह व दिललगी की आदत मत बनाइये और कभी हो तो उसमें दीनी मज़हबी बातों को मत लाइये। ख़ुदा तआला, उसकी ज़ात व सिफ़ात, अम्बियाए किराम, फ़रिश्ते, जन्नत, दोज़ख़, अज़ाब, सवाब, नमाज़, रोज़ा वग़ैरह अहकामे शरअ़ का ज़िक्र हंसी तफ़रीह में कभी न लाइये वरना ईमान के लिए ख़तरा पैदा हो सकता है। शआ़इरे इलाहिय्यह (अल्लाह की निशनियों) के साथ मज़ाक़ कुफ़्र है।

(3) बाज़ लोग इस क़िस्म की बातें सब को ख़ुश करने के लिए बोल देते हैं जिनका बोलना और ख़ुशी के साथ सुनना कुफ़्र है। उन लोगों और ऐसी बातें करने वालों से दूर रहना ज़रूरी है। मसलन सब धरम समान हैं, ख़िदमते ख़ल्क़ ही धर्म है, देश पहले है धरम बाद में है, हम पहले फ़लां मुल्क के वासी हैं और मुसलमान बाद में, राम रहीम दोनों एक हैं, वेद व कुर्आन में कोई फ़र्क़ नहीं, मस्जिद व मन्दिर दोनों ख़ुदा के घर हैं या दोनों जगह ख़ुदा मिलता है, नमाज़ पढ़ना बेकार आदमियों का काम है, रोज़ा वह रखे जिस को खाना न मिले, नमाज़ पढ़ना न पढ़ना सब बराबर है, हम ने बहुत पढ़ ली कुछ नहीं होता है, यह सब कलिमात ख़ालिस कुफ़्र ग़ैर इस्लामी काफ़िरों की बोलियां हैं जिन को बोलने से आदमी काफ़िर इस्लाम से ख़ारिज हो जाता है।

सियासी लोग इस क़िस्म की बातें ग़ैर मुस्लिमों को ख़ुश करने, उनके वोट लेने के लिए बकते हैं हालांकि देखा यह गया है कि वह उनसे ख़ुश भी नहीं होते और ग़ैर मुस्लिम अपने ही धर्म वालों को आमतौर से वोट देते हैं। इस तरह इन नेताओं को न दुनिया मिलती है न दीन। और जिन ग़ैर मुस्लिमों के वोट आपको मिलना हैं वह अपना दीन ईमान बचा कर भी मिल सकते हैं। फिर

चन्द रोज़ दुनिया के इक़्तिदार, नोटों और वोटों की ख़ातिर क्या अपना ईमान बेचा जाएगा?

(4) मुसलमानों में जो नए नए फ़िरक़े राइज हुए हैं उन से दूर रहना निहायत ज़रूरी है। यह ईमान व अक़ीदे के लिए सब से बड़ा ख़तरा हैं मज़हबे अहलेसुन्नत बुज़ुर्गों की रविश पर क़ाइम रहना ईमान व अ़क़ीदे की हिफ़ाज़त के लिए निहायत लाज़िम हैं और मज़हबे अहलेसुन्नत की सही तर्जमानी इस दौर में आलाहज़रत मौलाना अहमद रज़ा ख़ाँ बरेलवी अ़लैहिर्रहमतु वर्रिद़वान ने फ़रमाई है। उनकी तालीमात ऐन इस्लाम हैं।

फ़िल्मी गानों में कुफ़्रियात

आजकल हिन्दुस्तान में फ़िल्मी मनाज़िर और उनके गानों के ज़रिए भी मुसलमानों को काफ़िर बनाने और उनके ईमान व अक़ीदे को तबाह करने की मुनज़्ज़म साज़िश चल रही है। फ़िल्म की मज़ेदारियों और उसकी लज़्ज़त और गानों की लुत्फ़ अन्दोज़ी के सहारे ऐसे कड़वे घूंट मुस्लिमनस्लों की घांटी से उतारे जा रहे हैं जिन से कभी वह बहुत दूर भागते थे और मुसलमान उन्हें बड़ी आसानी से अब हज़म करते चले जा रहे हैं, बल्कि सही बात यह है कि आजकल फ़िल्मों, टेलीवीज़नों के ज़रिए काफ़िर अपने धर्मों का प्रचार कर रहे हैं। आगे हम चन्द फ़िल्मी गानों के वह शेर लिख रहे हैं जिन का कुफ़्र होना इतना ज़ाहिर है कि उसके लिए किसी आलिम या मौलाना साहब से पूछने की क़तई ज़रूरत नहीं है बल्कि हर आदमी भी जान सकता है कि यह ख़ालिस काफ़िराना बकवासें हैं।

ख़ुदा भी आसमां से जब ज़मीं पर देखता होगा
मेरे महबूब को किसने बनाया सोचता होगा

अब आगे जो भी हो अन्जाम देखा जाएगा
ख़ुदा तराश लिया और बन्दगी कर ली

रब ने मुझ पर सितम किया है
सारे जहाँ का ग़म मुझे दे दिया है

इन गानों का जाइज़ा लीजिये और देखिये अल्लाह तआ़ला के बारे में यह अक़ीदा रखना कि वह आसमान से जब देखता होगा हालांकि मुसलमानों का अक़ीदा यह है कि अल्लाह रब्बुलइज़्ज़त हर चीज़ को हमेशा से देखता है और हमेशा देखेगा। ख़ुदाए तआ़ला के बारे में यह बकवास या मेरे महबूब को बनाने वाले के बारे में वह सोचता होगा हालांकि हर चीज़ का बनाने वाला सिर्फ़ ख़ुदाए तआ़ला ही है। और उस परवरदिगारे आलम के बारे में यह बकना कि वह सोचता होगा हालांकि उसका इल्म सोचने से पाक है, यह सब खुले कुफ़्र हैं। इसी तरह दूसरे गाने में, ख़ुदा तराश लिया और बन्दगी कर ली, कितना बड़ा कुफ़्र है इस्लाम से मज़ाक़ और कुर्आने करीम से ठट्ठा किया गया है जिस के खुले कुफ़्र होने में जाहिल मुसलमान को भी शक नहीं है।

तीसरे गाने में परवरदिगारे आलम को सितमगर बताना, उससे शिकवा करना और उसकी नाशुक्री करना कि उसने सारे जहान का ग़म मुझे दे दिया है। यह सब वह कुफ़्रियात हैं जो कितने मुसलमानों से बुलवा कर कहला कर गानों के ज़रिए उनके ईमान ख़राब कर दिये हैं और इस्लामी हदों से बाहर लाकर खड़ा कर दिया गया है।

ईमान व अक़ीदे से ज़्यादा अमल को अहमियत देना

हमारे काफ़ी अवाम भाई किसी की ज़ाहिरदारी नेकी और कोई अच्छा काम देखकर उसकी तारीफ़ करने लगते हैं और उससे मुतास्सिर (प्रभावित) हो जाते हैं जबकि इस्लामी नुक़्तए नज़र से कोई नेकी उस वक़्त तक कारआमद नहीं है जब तब कि

उसका ईनान व अक़ीदा दुरुस्त न हो।

रसूलुल्लाह स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम ने जब ऐलाने नबुव्वत फ़रमाया था तो पहले नमाज़, ज़कात, रोज़ा, हज और अहकाम व आमाल का हुक्म नहीं दिया था बल्कि यह फ़रमाया था कि अल्लाह को एक मानो, बुतों की पूजा व परस्तिश से बाज़ आओ और मुझको अल्लाह का रसूल मानो। आज भी जब किसी ग़ैर मुस्लिम को मुसलमान करते हैं तो सबसे पहले उसको नमाज़ रोज़े अदा करने अच्छाईयाँ करने और बुराईयाँ छोड़ने का हुक्म नहीं दिया जाता बल्कि पहले कलिमा पढ़ा कर मुसलमान किया जाता है फिर बाद में अच्छाई बुराई और अहकाम ए इस्लाम से उसको आगाह किया जाता है।

हदीस शरीफ़ में है रसूलुल्लाह स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि अगर कोई शख़्स उहुद पहाड़ के बराबर भी सोना राहे ख़ुदा में ख़र्च करे, ख़ुदाए तआ़ला क़बूल नहीं फ़रमायेगा, जब तक कि वह तक़दीर पर ईमान न लाये।

(मिश्कात शरीफ़ सफ़ा २३)

इस हदीस से ख़ूब वाज़ेह हो गया कि जो इस्लाम के लिए ज़रूरी अक़ाइद न रखता हो उसकी कोई नेकी, नेकी नहीं।

.क़ुर्आन करीम में भी फ़रमाने ख़ुदावन्दी है ''यह .क़ुर्आन हिदायत है मुत्तक़ीन (तक़वे वालों) के लिए जो बग़ैर देखे ईमान लाये हैं, और नमाज़ अदा करते और हमारे दिये हुए माल में से (हमारी राह में) ख़र्च करते हैं।'' (पारा १ रुकूअ़ १)

इस आयते करीमा में भी अल्लाह तआ़ला ने नमाज़ और राहे ख़ुदा में ख़र्च से पहले ईमान का ज़िक्र फ़रमाया है।

ख़ुलासा यह है कि जिस शख़्स का ईमान व अक़ीदा दुरुस्त न हो या वह ग़ैर इस्लामी ख़्यालात व अक़ाइद रखता हो उससे कभी मुतास्सिर (प्रभावित) नहीं होना चाहिए न उसकी तारीफ़ करना चाहिए चाहे वह कितने ही अच्छे काम करे।

.क़ुर्आने करीम में ग़ैर इस्लामी अक़ाइद रखने वालों की नेकियों और उनके कारनामों को बेकार व .फ़ुज़ूल फ़रमाया गया है और इसकी मिसाल उस ग़ुबार से दी गई है जो किसी चट्टान पर लग जाती है फिर उसे बारिश धोकर बहा देती है और उसका नाम व निशान तक बाक़ी नहीं रहता।

लैटरीन में क़िब्ले की तरफ़ मुँह या पीठ करना

हदीस शरीफ़ में है अल्लाह के रसूल ﷺ ने इरशाद फ़रमाया, जब तुम में से कोई रफ़ए हाजत करे तो क़िब्ले की तरफ़ न मुँह करे और न पीठ। (मिश्कात सफ़हा ४२)

इसके बरख़िलाफ़ अवाम तो अवाम बाज़ ख़वास अहले इल्म तक में इस बात का ख़्याल नहीं रखा जाता और पाख़ाना पेशाब के वक़्त आम तौर से लोग क़िब्ले की जानिब मुँह या पीठ कर लेते हैं। घरों में लैटरीन बनाते वक़्त मुसलमानों को ख़ास तौर से इस बात का ख़्याल रखना चाहिए कि बैठने की सीट इस तरह लगाई जाए कि इस्तिन्जा करने वाले का न मुँह काबे की तरफ़ हो और न पीठ। हिन्दुस्तान में लैटरीन की सीटें उत्तर-दक्खिन रखी जायें, पूरब और पच्छिम न रखी जायें। अगर किसी के यहाँ ग़लती से लैटरीन की सीट पूरब पच्छिम लगी हो तो हज़ार या पाँच सौ रुपयों के ख़र्च की फ़िक्र न करे। फ़ौरन उसे उखड़वा कर उत्तर-दक्खिन कराए। हो सकता है कि अल्लाह को उसकी यह नेकी पसन्द आ जाए और उसकी बख़्शिश हो जाए। दरअस्ल अदब बेहद ज़रूरी है। बे अदबी से महरूमी आती है ख़ैर व बरकत उठ जाती है। नहूसत इन्सान को घेर लेती है। और अदब से ख़ैर व बरकत आती है रहमत बरसती है। ज़िन्दगी पुर सुकून और बारौनक़ हो जाती है।

नमाज़े जनाज़ा के बाद उसी वुज़ू से दूसरी नमाज़ पढ़ना कैसा है?

कुछ जगहों पर लोग समझते हैं कि जिस वुज़ू से नमाज़ जनाज़ा पढ़ी हो उससे दूसरी नमाज़ नहीं पढ़ी जा सकती हालांकि यह ग़लत और बे अस्ल बात है। बल्कि इसी वुज़ू से फ़र्ज़ हों या सुन्नत व नफ़्ल हर नमाज़ पढ़ना ठीक है।

मय्यत को गुस्ल देने के बाद गुस्ल करना

मय्यंत को गुस्ल देने के बाद गुस्ल करना अच्छा है लेकिन ज़रूरी नहीं कि जिस ने मय्यत को गुस्ल दिया हो वह बाद में खुद गुस्ल करे इसको ज़रूरी ख़्याल करना ग़लत है।

क्या सतर खुल जाने से वुज़ू टूट जाता है?

अवाम में जो मशहूर है कि घुटना और सतर अपना या पराया देखने से वुज़ू जाता रहता है। यह एक बे-अस्ल बात है। घुटना या रान वग़ैरा सतर खुलने से वुज़ू नहीं टूटता। हाँ बग़ैर ज़रूरत सतर खुला रहना मना है और दूसरों के सामने सतर खोलना हराम है। (बहारे शरीअ़त, हिस्सा २, सफ़हा २८)

लोटे या गिलास को पाँच उंगलियों से पकड़ने का मसअला

पानी से भरे लोटे या बरतन को पाँच उंगलियों से पकड़ने को बुरा जाना जाता है और मकरूह ख़्याल किया जाता है। हालांकि यह एक जाहिलाना ख़्याल है। पाँच उंगलियों से अगर लोटे को पकड़ लिया जाए तो उससे पानी में कोई ख़राबी नहीं आती।

दूध पीते बच्चे का पेशाब पाक है या नापाक?

कुछ लोग समझते हैं कि दूध पीते बच्चों का पेशाब पाक है हालांकि ऐसा नहीं। इन्सान का पेशाब मुतलक़न नापाक है। चाहे वह दूध पीते बच्चों का हो या बड़ों का।

(फ़तावा रज़विया जिल्द २ सफ़हा १४६)

हलाल जानवरों के पेशाब की छींटों का मसअला

बहुत लोग हलाल जानवरों के पेशाब की छींटें अगर बदन या कपड़े पर लग जायें तो वह ख़ुद को नापाक ख़्याल कर लेते हैं यहाँ तक कि धोने या कपड़े बदलने का मौक़ा न मिले तो नमाज़ छोड़ देते हैं।

आलाहज़रत रदियल्लाहु तआला अन्हु फ़रमाते हैं :

''बैलों का गोबर, पेशाब नजासते ख़फ़ीफ़ा है। जब तक चहारुम (चौथाई) कपड़ा न भर जाए या कुल मिला कर इतनी पड़ी हों कि जमा करने से चहारुम कपड़े की मिक़दार हो जाए,

कपड़े को नजासत का हुक्म न देंगे और उससे नमाज़ जाइज़ होगी और बिलफ़र्ज़ उससे से ज़्यादा भी धब्बे हों और धोने से सच्ची मजबूरी यानी हरजे शदीद हो तो नमाज़ जाइज़ है।"

(फ़तावा रज़विया, जिल्द २, सफ़हा १६१)

हदीस शरीफ़ में है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया :

"जिसका गोश्त खाया जाता है उसके पेशाब में ज़्यादा हरज नहीं।"

यानी उसका पेशाब ज़्यादा सख़्त नापाक नहीं।

(मिश्कात बाब तत्हीरिन्नजासत, सफ़हा ५३)

खुलासा यह कि हलाल जानवरों मसलन गाय, भैंस, बैल, घोड़ा, ऊँट, बकरी का पेशाब नजासते ख़फ़ीफ़ा (हल्की नापाकी) है। कपड़े या बदन के किसी उज़्व **(part)** का जब तक चौथाई हिस्सा उसमें मुलव्विस न हो नमाज़ पढ़ी जा सकती है। और मामूली छींटे जो आम त्तौर पर किसानों के कपड़ों और बदन पर आ जाती हैं जिन से बचना निहायत मुश्किल है उनके साथ तो बिला कराहत नमाज़ जाइज़ है और नमाज़ छोड़ने का हुक्म तो किसी सूरत में नहीं चाहे ब-हालते मजबूरी गन्दगी कैसी ही और कितनी ही हो और धोने और बदलने की कोई सूरत न हो तो यूंही नमाज़ पढ़ी जाएगी। नापाकी बहुत ज़्यादा हो या कपड़े न हों तो नंगे बदन नमाज़ पढ़ी जाएगी। यह जो जाहिल लोग मामूली मामूली बातों पर कह देते हैं कि ऐसी नमाज़ पढ़ने से तो न पढ़ना अच्छा। यह उनकी जहालत व गुमराही है। सही बात यह है कि मजबूरी के वक़्त नमाज़ छोड़ने से हर हाल में और हर तरह नमाज़ पढ़ना अच्छा है।

परिन्दों की बीट (पाख़ाने) का मसअला

जो परिन्दे ऊँचे नहीं उड़ते, ज़मीन पर रहते हैं जैसे मुर्ग़ी और बतख़, उनकी बीट या पाख़ाना इन्सान के पाख़ाने और पेशाब की तरह नजासते ग़लीज़ा यानी सख़्त क़िस्म की नापाकी है। और जो परिन्दे ऊपर उड़ते हैं उनमें जो हलाल हैं उनकी बीट पाक है जैसे कबूतर, फ़ाख़्ता, मुर्ग़ाबी, मैना, घरेलू चिड़िया, गुलगुचिया वग़ैरा। जो परिन्दे हराम हैं जैसे कौआ, चील, शिकरा, बाज़ उनकी बीट नजासते ख़फ़ीफ़ा (हल्की नापाकी) है। उसका वही हुक्म है जो हलाल जानवरों के पेशाब का है।

हैज़ व निफ़ास वाली औरतों को मनहूस समझना

ज़च्चा पन और माहवारी में औरतों के साथ खाने पीने और उनका झूटा खाने में हरज नहीं। हिन्दुस्तान में जो बाज़ जगह उनके बरतन अलग कर दिये जाते हैं। उनके साथ खाने पीने को बुरा जाना जाता है या उनके बरतनों को नापाक ख़्याल किया जाता है यह हिन्दुओं की रस्में हैं। ऐसी बेहूदा रस्मों से बचना ज़रूरी है। अलबत्ता इस हालत में मर्द का अपनी औरत से हमबिस्तरी करना हराम है।

निफ़ास की मुद्दत

अक्सर औरतों में यह रिवाज है कि बच्चा पैदा होने के बाद जब तक चिल्ला पूरा न हो। चाहे ख़ून आना बन्द हो गया हो न नमाज़ पढ़ें न रोज़ा रखें और न अपने को नमाज़ के लाइक़ जाने यह महज़ जहालत है। जब निफ़ास यानी खून आना बन्द हो जाए

उसी वक़्त से नहा कर नमाज़ शुरू कर दें और अगर नहाना नुक़सान करे तो तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ें। यानी निफ़ास की मुद्दत चालीस दिन ज़रूरी ख़्याल करना ग़लतफ़हमी है जब तक ख़ून आए तभी तक औरत निफ़ास में मानी जाएगी। ख़्वाह चन्द दिन ही हुए हों। हाँ अगर चालीस दिन गुज़रने के बाद भी ख़ून आना बन्द न हो तो चालीस दिन के बाद नहा कर नमाज़ पढ़ेगी और जिन दिनों में उस पर नमाज़, रोज़ा फ़र्ज़ है उन दिनों में शौहर और बीवी का हमबिस्तर होना भी जाइज़ है।

क्या बच्चे को दूध पिलाने से औरत का वुज़ू टूट जाता है?

बाज़ जगह जाहिलों में यह मशहूर हो गया है कि औरत अगर बच्चे को दूध पिलाए और बावुज़ू हो तो उसका वुज़ू टूट जाता है। यह महज़ ग़लत है बच्चे को दूध पिलाना हरगिज़ वुज़ू नहीं तोड़ता और उसके बाद वुज़ू फिर से किये बग़ैर नमाज़ पढ़ सकती है दोबारा वुज़ू करने की हाजत नहीं।

हर नापाकी पर गुस्ल करना ज़रूरी नहीं

अक्सर देखा गया है कि लोगों से पूछा कि आपने नमाज़ क्यूँ नहीं पढ़ी तो वह जवाब में कहते हैं कि हम नहाए हुए नहीं हैं और होता यह है कि उन्होंने या तो पेशाब करने के बाद ढेले या पानी से इस्तिन्जा नहीं किया है या उनके बदन और कपड़े पर कहीं कोई नापाकी पेशाब या गोबर या कीचड़ वग़ैरा कोई गन्दगी लग गई है और वह यह ख़्याल करते हैं कि इन सूरतों में गुस्ल करना और नहाना ज़रूरी है और बिला वजह नमाज़ छोड़ कर बड़े गुनाहगार होते हैं हालांकि इन सब सूरतों में नहाने की

ज़रूरत नहीं बल्कि बदन या कपड़े के जिस हिस्से पर नापाकी लगी हो उसको धोना या किसी तरह उस नापाकी को दूर कर देना काफ़ी है या जिस कपड़े पर नापाकी है उस कपड़े को बदल दिया जाए। यह भी उस सूरत में है कि जब कि नापाकी दूर करने या उसको धोने पर क़ादिर हो वरना ऐसे ही नापाक कपड़े में नमाज़ पढ़ी जाए और अगर तीन चौथाई से ज़्यादा कपड़ा नापाक हो तो नंगे बदन नमाज़ पढ़े और अगर एक चौथाई पाक है बाक़ी नापाक तो वाजिब है कि उसी कपड़े से नमाज़ पढ़े।

(बहारे शरीअत, हिस्सा ३, सफ़हा ४६)

मगर यह सब उसी वक़्त है जब कि नापकी को दूर करने या धोने की कोई सूरत न हो और बदन छुपाने को कोई और कपड़ा न हो।

इन मसाइल की तफ़सील जानने के लिए फ़तावा आलमगीरी, फ़तावा रज़विया, बहारे शरीअत, क़ानूने शरीअत, निज़ामे शरीअत वग़ैरा किताबें पढ़ना चाहिए।

ख़ुलासा यह है कि नमाज़ किसी सूरत में छोड़ने की इजाज़त नहीं है और हर नापाकी पर नहाना फ़र्ज़ नहीं। ग़ुस्ल फ़र्ज़ होने की तो चन्द मख़सूस सूरते हे। जैसे मर्द औरत के साथ हमबिस्तर होना, दोनों में से किसी को एहतिलाम होना या जोश और झटकों के साथ मनी का ख़ारिज होना, औरतों को हैज़ व निफ़ास आना। तफ़सील के लिए दीनी किताबें पढ़ें।

नींद से वुज़ू कब टूटता है?

अक्सर देखा गया है कि मस्जिद के अन्दर नमाज़ के इन्तिज़ार में लोग बैठे हैं और उन्हें नींद की झपकी आ गई या ऊँघने लगे तो वह समझते हैं कि हमारा वुज़ू टूट गया और वह अज़ ख़ुद या किसी के टोकने से वुज़ू करने लगते हैं यह ग़लत है।

मसअला यह है कि ऊँघने या बैठे बैठे झोंके लेने से वुज़ू नहीं जाता। (बहारे शरीअत, हिस्सा दोम, सफ़हा २७)

तिर्मिज़ी और अबू दाऊद की हदीस में है रसूलुल्लाह ﷺ के सहाबए किराम मस्जिद शरीफ़ में नमाज़े इशा के इन्तिज़ार में बैठे बैठे सोने लगते थे यहाँ तक कि उनके सर नींद की वजह से झुक झुक जाते थे फिर यह दोबारा बग़ैर वुज़ू किये नमाज़ पढ़ लेते थे। (मिश्कात, मायूजिबुल वुज़ू, सफ़हा ४१)

नींद से वुज़ू तब टूटता है जब कि ये दोनों शर्तें पाई जायें
(१) दोनों सुरीन उस वक़्त ख़ूब जमे न हों
(२) सोने की हालत ग़ाफ़िल होकर सोने से मानेअ़ न हो।
(फ़तावा रज़विया, जिल्द १, सफ़हा ७१)

चित या पट या करवट से लेट कर सोने से वुज़ू टूट जाता है। उकड़ूँ बैठा हो और टेक लगा कर सो गया तो भी वुज़ू टूट जाएगा। पाँव फैला कर बैठे बैठे सोने से वुज़ू नहीं टूटता चाहे टेक लगाए हुए हो। खड़े खड़े या चलते हुए या नमाज़ की हालत में क़याम में या रुकू में या दो ज़ानू सीधे बैठ कर या सज्दे में जो तरीक़ा मर्दों के लिए सुन्नत है उस पर सो गया तो वुज़ू नहीं जाएगा। हाँ अगर नमाज़ में नींद की वजह से ज़मीन पर गिर पड़ा अगर फ़ौरन आँख खुल गई तो ठीक वरना वुज़ू जाता रहा। बैठे हुए ऊँघने और झपकी लेने से वुज़ू नहीं जाता।

क्या बीवी से हमबिस्तरी करने में सारे कपड़े नापाक हो जाते हैं?

काफ़ी लोग यह समझते हैं कि शौहर बीवी के हमबिस्तर होने से उनके सारे कपड़े नापाक हो जाते हैं यह ग़लत है बल्कि जिस कपड़े के जिस हिस्से पर नापाकी लगी हो सिर्फ़ वही नापाक है बाक़ी पाक है कपड़े के नापाक हिस्से को तीन बार धो दिया

जाए और हर बाद धोकर ख़ूब निचोड़ लिया जाए तो फिर उस कपड़े से नमाज़ पढ़ सकते हैं और जिस कपड़े पर नापाकी मसलन मर्द या औरत की मनी न लगी हो वह बग़ैर धोए पाक है।

कुत्ते का बदन या कपड़े से छू जाने का मसअला

कुछ लोग समझते हैं कि कुत्ते का जिस्म अगर इन्सान के जिस्म या कपड़े से लग जाये तो वह नापाक हो जाता है। यह उनकी ग़लतफ़हमी है। कुत्ते का सिर्फ़ छू जाना नापाकी नहीं लाता, हाँ अगर कुत्ते के जिस्म पर कोई नापाकी लगी हो और आप जानते हैं कि वह नापाक चीज़ है और वह उसके जिस्म से आपके लग गई तो जहाँ लगी वह जगह नापाक है। यूँही कुत्ते का पसीना और उसके मुँह की राल और थूक भी नापाक हैं। ये चीज़ें जहाँ लगेंगी उसे भी नापाक कर देंगी। और ऐसी कोई सूरत न हो तो सिर्फ़ छू जाना और बदन से लग जाना नापाकी के लिए काफ़ी नहीं है और इस तरह सिर्फ़ छू जाने से कपड़ा और बदन नापाक नहीं होगा।

अलबत्ता कुत्ता पालना इस्लाम में मना है। हाँ अगर शिकार या हिफ़ाज़त के लिए वाक़ई ज़रूरत हो, शौक़िया और बग़ैर ख़ास ज़रूरत के न हो तो इजाज़त है। तफ़सील के लिए देखिये फ़तावा रज़विया जिल्द १० क़िस्त १ सफ़ा १६६

क्या मिट्टी के ढीले से इस्तिन्जा करने के बाद पानी से धोना ज़रूरी है?

कुछ लोग समझते हैं कि ढीले से इस्तिन्जा करने के बाद अगर पानी से भी इस्तिन्जा नहीं किया और यूँ ही वुज़ू करके नमाज़ पढ़ ली तो नमाज़ नहीं होगी। हालाँकि ढीले से इस्तिन्जा करने के बाद पानी से धोना ज़रूरी नहीं, हाँ दोनों को जमा करना अफ़ज़ल है। अगर सिर्फ़ ढीले से इस्तिन्जा कर ले काफ़ी है और सिर्फ़ पानी से कर ले तब भी काफ़ी और दोनों को जमा करना बेहतर व अफ़ज़ल, और यह हुक्म दोनों सूरतों के लिए है, चाहे पाख़ाना किया हो या पेशाब।

हदीस में है एक मरतबा रसूलुल्लाह ﷺ ने पेशाब फ़रमाया। हज़रत उमर फ़ारूक़े आज़म रदियल्लाहु तआला अन्हु एक बरतन में पानी लेकर पीछे खड़े हो गये। हुज़ूर ने पूछा यह क्या है? अर्ज़ किया इस्तिन्जे के लिए पानी है। आपने इरशाद फ़रमाया, मुझ पर यह वाजिब नहीं किया गया कि हर पेशाब के बाद पानी से पाकी हासिल करूँ।

(मिश्कात सफ़ा ४४ सुनने अबू दाऊद जिल्द १ सफ़ा ७)

ख़ुलासा यह है कि पाख़ाना या पेशाब करने के बाद सिर्फ़ मिट्टी के ढेलों या पत्थरों वग़ैरह किसी भी नजासत को दूर या ख़ुश्क करने वाली चीज़ से इस्तिन्जा कर लेना तहारत के लिए काफ़ी है। पानी से धोना ज़रूरी नहीं, हाँ अफ़ज़ल व बेहतर है या अगर नजासत इस्तिन्जे की जगह से एक रुपया भर बदन के हिस्से पर फैल गई हो तो पानी से धोना ज़रूरी है।

इस मसअले को तफ़सील से जानने के लिए देखिए फ़तावा रज़विया जिल्द २ सफ़ा १६५

नोट :- जो लोग सफ़र में रहते हैं वह अपने साथ इस मक़सद के लिए कोई पुराना कपड़ा रख लिया करें। यह पानी न मिलने की सूरत में तहारत के लिए बहुत काम आता है।

नमाज़ में दाहिने पैर का अँगूठा सरकने का मसअला

आमतौर से देहातों में इस को बहुत बुरा जानते हैं। यहाँ तक कि नमाज़ में दाहिने पैर का अँगूठा अगर थोड़ा बहुत सरक जाए तो नमाज़ न होने का फ़तवा लगा देते हैं।

कुछ लोग इस अंगूठे को नमाज़ की किलया या खूंटा कहते भी सुने गए हैं। यह सब जाहिलाना बातें हैं किसी भी पैर का अंगूठा सरक जाने से नमाज़ में कोई ख़राबी नहीं आती। हाँ बिला वजह नमाज़ में जानबुझ कर कोई हरकत करना ख़्वाह जिस्म के किसी हिस्से से हो ग़लत व मकरूह है।

हज़रत अल्लामा मुफ़्ती जलालुद्दीन साहब क़िब्ला अमजदी फ़रमाते हैं :

दाहिने पैर का अंगूठा अपनी जगह से हट गया तो कोई हरज नहीं। हाँ मुक़तदी का अंगूठा दाहिने या बायें या आगे या पीछे इतना हटा कि जिस से सफ़ में कुशादगी पैदा हो या सीना सफ़ से बाहर निकले तो मकरूह है -----

(फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल, जिल्द १, सफ़हा ३७०)

ख़ुलासा यह कि अवाम में जो मशहूर है कि नमाज़ में दाहिने पैर का अंगूठा अगर अपनी जगह से थोड़ा सा भी सरक जाए तो नमाज़ नहीं होती, यह उनकी जहालत और ग़लतफ़हमी है।

सज्दे में पैर की उंगलियों का पेट ज़मीन पर न लगना

इस मसअले से काफ़ी लोग ग़ाफ़िल हैं और पैर की उंगलियों के सिर्फ़ सिरे ज़मीन से लग जाने को सज्दा समझते हैं और कुछ का तो सिर्फ़ अंगूठे का सिरा ही ज़मीन से लगता है और बाक़ी उंगलियां ज़मीन को छूती भी नहीं इस सूरत में न सज्दा होता है न नमाज़।

सज्दे में पैर की उंगलियों के सिर्फ़ सिरे नहीं बल्कि उंगलियों पर ज़ोर दे कर क़िब्ले की तरफ़ उंगलियों का पेट ज़मीन से लगाना चाहिए।

फ़तावा रज़विया शरीफ़ जिल्द १ सफ़हा ५५६ पर है :

सज्दे में कम अज़ कम एक उंगली का पेट ज़मीन से लगा होना फ़र्ज़ है और पाँव की अक्सर उंगलियों का पेट ज़मीन पर जमा होना वाजिब।

अज़ान के वक़्त बातें करना

अज़ान के वक़्त बातों में मशग़ूल रहना एक आम बात हो गई है अवाम तो अवाम बाज़ ख़वास अहले इल्म तक इसका ख़्याल नहीं रखते जब कि हदीस शरीफ़ में है :

"जो अज़ान के वक़्त बातों में मशग़ूल रहे उस पर ख़ात्मा बुरा होने का ख़ौफ़ है।"

मसअला यह है कि जब अज़ान हो तो उतनी देर के लिए न सलाम करे न सलाम का जवाब दे न कोई और बात करे यहाँ तक कि कुर्आन मजीद की तिलावत में अगर अज़ान की आवाज़ आए तो तिलावत रोक दे और अज़ान ग़ौर से सुने और जवाब दे। रास्ता चलने में अज़ान की आवाज़ आ जाए तो उतनी देर खड़ा हो जाए, सुने और जवाब दे अगर चन्द अज़ानें सुने तो सिर्फ़ पहली का जवाब देना सुन्नत है और सबका देना भी बेहतर है।

तकबीर खड़े हो कर सुनना

जब तकबीर कहने वाला "हय्या अ़लस्सलाह" और "हय्या अ़ललफ़लाह" कहे इमाम और मुक़तदी जो वहाँ मौजूद हैं उनको उसी वक़्त खड़ा होना चाहिए। मगर कुछ जगह शुरू तकबीर से खड़े होने का रिवाज पड़ गया है और वह लोग इस रिवाज पर इतने अड़ जाते हैं कि हदीसों और फ़िक़्ही किताबों की परवाह नहीं करते और मनमानी ज़िद और हटधर्मी से काम लेते हैं।

फ़तावा आलमगीरी जो बादशाह औरंगज़ेब आलमगीर रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैह के हुक्म से तक़रीबन साढ़े तीन सौ साल पहले उस दौर के तक़रीबन सभी बड़े बड़े उलमा ने मशवरे के साथ लिखी, उसमें है :

"मोअज़्ज़िन जिस वक़्त *हय्या अ़ललफ़लाह* कहे तब इमाम और मुक़तदियों को खड़ा होना चाहिए।"

(फ़तावा आ़लमगीरी, जिल्द १, सफ़हा ५८)

जुमे की दूसरी अज़ान मस्जिद के अन्दर देना

फ़िक़्हे हनफ़ी की तक़रीबन सारी किताबों में यह बात साफ़ लिखी हुई है कि कोई अज़ान मस्जिद में न दी जाए। ख़ुद हदीस शरीफ़ से भी यही साबित है और किसी हदीस और किसी इस्लामी मोतबर व मुसतनद किताब में यह नहीं है कि कोई अज़ान मस्जिद के अन्दर दी जाए। मगर फिर भी कुछ जगह कुछ लोग जुमे की दूसरी अज़ान मस्जिद के अन्दर इमाम के सामने खड़े होकर पढ़ते हैं और सुन्नत पर अमल करने से महरूम रहते

हैं और महज़ ज़िद और हटधर्मी की बुनियाद पर रसूले ख़ुदा ﷺ की प्यारी प्यारी सुन्नत छोड़ देते हैं।

और कुछ मक़ामात पर तो लाउडस्पीकर मस्जिद के अन्दर रख कर पाँचों वक़्त अज़ान पढ़ते हैं। इस तरह अज़ान देने वाले और दिलवाने वाले सब गुनाहगार हैं।

फ़तावा आलमगीरी में है :

''मस्जिद में कोई अज़ान न दी जाए।''

(आलमगीरी, बाबुल अज़ान, फ़स्ल २, सफ़हा ५५)

क्या दाहिनी जानिब से इक़ामत कहना ज़रूरी है?

आजकल यह ज़रूरी ख़्याल किया जाता है कि इक़ामत या तकबीर जो जमाअत क़ाइम करने से पहले मुअज़्ज़िन लोग पढ़ते हैं उस में पढ़ने वाला इमाम के पीछे या दाहिनी तरफ़ हो और बायें जानिब खड़े होकर तकबीर पढ़ने को ममनूअ ख़्याल करते हैं। हालांकि तकबीर बायीं तरफ़ से पढ़ना भी मना नहीं है।

सय्यिदी आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

''और इक़ामत की निसबत भी तअय्युने जेहत कि दाहिनी तरफ़ हो या बाईं तरफ़ फ़क़ीर की नज़र से न गुज़री ------ हाँ इस क़दर कह सकते हैं कि मुहाज़ात इमाम फिर जानिबे रास्त मुनासिब तर है।'' (फ़तावा रज़विया, जिल्द २, सफ़हा ४६५)

ख़ुलासा यह कि इमाम के पीछे या दाहिनी तरफ़ से पढ़ना ज़्यादा बेहतर है लेकिन बाईं तरफ़ से पढ़ना भी जाइज़ है। और इससे नमाज़ में कोई कमी नहीं आती और दाहिनी तरफ़ को ज़रूरी ख़्याल करना ग़लतफ़हमी है।

नमाज़ी के सामने से गुज़रना मना है हटना गुनाह नहीं

आमतौर से मस्जिदों में देखा गया है कि दो शख़्स आगे पीछे नमाज़ पढ़ते हैं यानी एक पिछली सफ़ में और दूसरा उसके सामने अगली सफ़ में। अगली सफ़ में नमाज़ पढ़ने वाला पीछे वाले से पहले फ़ारिग़ हो जाता है और फिर उसकी नमाज़ ख़त्म होने का इन्तिज़ार करता रहता है कि वह सलाम फेरे तब यह वहाँ हटे अैर इससे पहले हटने को नमाज़ी के सामने से गुज़रना ख़्याल किया जाता है, हालांकि ऐसा नहीं है। आगे नमाज़ पढ़ने वाला अपनी नमाज़ पढ़ कर हट जाए तो उस पर गुज़रने का गुनाह नहीं है।

ख़ुलासा यह कि नमाज़ी के सामने से गुज़रना मना है हटना मना नहीं है। सदरुश्शरीअ़ा हज़रत मौलाना अमजद अ़ली साहब आज़मी अ़लैहिर्रहमह फ़रमाते हैं :

"अगर दो शख़्स नमाज़ी के आगे से गुज़रना चाहते हों और सुतरह को कोई चीज़ नहीं तो उन में से एक नमाज़ी के समने उसकी तरफ़ पीठ करके खड़ा हो जाए और दूसरा उसकी आड़ पकड़ के गुज़र जाए। फिर वह दूसरा उसकी पीठ के पीछ नमाज़ी की तरफ़ पुश्त करके खड़ा हो जाए और गुज़र जाए। वह दूसरा जिधर से आया उसी तरफ़ हट जाए।" (आलमगीरी, रद्दुलमुहतार, बहारे शरीअ़त, हिस्सा सोम, सफ़हा १५६)

इस से ज़ाहिर है कि गुज़रने और हटने में फ़र्क़ है और गुज़रने का मतलब यह है कि नमाज़ी के सामने एक तरफ़ से आए और दूसरी तरफ़ निकल जाए यह यक़ीनन नाजाइज़ व गुनाह है। और अगर नमाज़ी के सामने बैठा है और किसी तरफ़ हट जाए तो यह गुज़रना नहीं है और इसमें कोई गुनाह नहीं है।

नमाज़ में इमाम के लिए लाउडस्पीकर का इस्तेमाल

नमाज़े बाजमाअ़त में इमाम के लिए लाउडस्पीकर के इस्तेमाल का रिवाज आम होता जा रहा है और लोगों ने नमाज़े बाजमाअ़त में इमाम के लिए जवाज़ के पहलू भी तलाश कर लिये और बहस व मुबाहिसे के ज़रिए अपने आराम का रास्ता ढूंढ लिया। और यह भी न सोचा कि नमाज़ का इस्लाम में क्या मक़ाम है। बेशक नमाज़ इस्लाम की पहचान है। बेशक नमाज़ जाने इस्लाम, रूहे इस्लाम, अलामते अहले ईमान हैं। बेशक नमाज़ पैग़म्बरे इस्लाम की आँखों की ठन्डक है। और उनके मुबारक दिल का आराम है। तो कम से कम इस अहम इस्लामी फ़रीज़े और ऐसी इबादत को जिस में बन्दा हर हाल से ज़्यादा अपने रब से क़रीब होता है, साइन्सी ईजादात और जदीद टैक्नालॉजी के हवाले न करके उस अन्दाज़ पर रहने दीजिये जैसा कि ज़मानए पाके रसूले गिरामी वक़ार अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम में होती थी। मगर अफ़सोस सद अफ़सोस नमाज़ में लोगों ने लाउडस्पीकर का इस्तेमान करके ज़मानए नबवी की यादों को भुला दिया। लम्बी लम्बी क़तारों में मुकब्बिरों की गूंजती हुई अल्लाहु अकबर की सदाओं को ख़्वाबे देरीना बना दिया।

जदीद तहक़ीक़ात से भी यह बात ख़ूब ज़ाहिर हो चुकी है लाउडस्पीकर से निकलने वाली आवाज़ इमाम की अस्ल आवाज़ नहीं होती। तो ज़ाहिर है कि जो लोग उस ख़ारिजी आवाज़ पर इक़्तिदा करते हैं उन सब की नमाज़ ख़राब हो जाती है। कभी कभी दरमियान में लाउडस्पीकर बन्द हो जाता है और उसी पर

भरोसा करके उसके आशिकों ने मुकब्बिरों का इन्तज़ाम भी नहीं किया होता है तो नमाज के साथ खिलवाड़ हो कर रह जाता है। मगर माइक्रोफ़ोन के दीवानों को इस सब से क्या मतलब उनके नज़दीक ज़्यादा लोगों को नमाज़ पढ़ाने के लिए सिवाए लाउडस्पीकर के और कोई ज़रीआ ही नहीं रह गया है।

सही बात यह है कि जिन उलमा ने नमाज़ में लाउडस्पीकर के इस्तेमाल को नाजाइज़ क़रार दिया, उन्होंने नमाज़ की शान को बाक़ी रखा, उसके मक़ाम को समझा। और जिन्होंने छूट दे दी उन्होंने नमाज़ की अहमियत को ही नहीं समझा। और वह मौलवी होकर भी नमाज़ की लज़्ज़त से नाआशना और उसकी बरकतों हिकमतों से महरूम रहे।

मग़रिब और इशा की नमाज़ कब तक पढ़ी जा सकती है?

काफ़ी लोग थोड़ा सा अँधेरा होते ही यह ख़्याल करते हैं कि मग़रिब की नमाज़ का वक़्त निकल गया। अब नमाज़ क़ज़ा हो गई और बे वजह नमाज़ छोड़ देते हैं या क़ज़ा की नियत से पढ़ते हैं। मग़रिब की नमाज़ का वक़्त सूरज डूबने के बाद से लेकर शफ़क़ तक है और शफ़क़ उस सफ़ेदी का नाम है जो पच्छिम की तरफ़ सुर्ख़ी डूबने के बाद उत्तर दक्खिन सुब्हे सादिक़ की तरह फैलती है।

हाँ मग़रिब की नमाज़ जल्दी पढ़ना मुस्तहब है और बिला उज़्र दो रकअतों की मिक़दार देर लगाना मकरूहे तनज़ीही यानी ख़िलाफ़े औला है। और बिला उज़्र इतनी देर लगाना जिस में कसरत से सितारे ज़ाहिर हो जायें मकरूहे तहरीमी और गुनाह है। (अहकामे शरीअत, सफ़हा १३७)

हाँ अगर न पढ़ी हो तो पढ़े और जब तक इशा का वक़्त शुरू नहीं हुआ है अदा ही होगी, क़ज़ा नहीं। और यह वक़्त सूरज डूबने के बाद कम से कम एक घन्टा अट्ठारह मिनट और ज़्यादा से ज़्यादा एक घन्टा पैंतीस मिनट है जो मौसम के लिहाज़ से घटता बढ़ता रहता है। यानी एक घन्टे के ऊपर १८ से ३५ मिनट के दरमियान घूमता रहता है। इशा की नमाज़ के बारे में भी कुछ लोग समझते हैं कि उसका वक़्त १२ बजे तक रहता है यह भी ग़लत है। इशा की नमाज़ का वक़्त फ़ज्रे सादिक़ तुलूअ़ होने यानी सहरी का वक़्त ख़त्म होने तक रहता है। हाँ बिला वजह तिहाई रात से ज़्यादा देर करना मकरूह है।

मस्जिद में भीख मांगना

आजकल मस्जिदों में सवाल करने और भीक मांगने का रिवाज बहुत बढ़ता जा रहा है। अमूमन देखा जाता है कि इधर इमाम साहब ने सलाम फेरा उधर किसी न किसी ने और बाज़ औक़ात कई कई लोगों ने अपनी अपनी आपबीती सुनाना और मदद करो भाईयो की पुकार लगाना शुरू कर दिया हालांकि यह निहायत ग़लत तरीक़ा है। ऐसे लोगों को इस हरकत से बाज़ रखा जाए और मस्जिदों में भीक मांगने से सख़्ती से रोका जाए।

सदरुश्शरीआ़ हज़रत मौला अमजद अ़ली साहब अ़लैहिर्रहमह फ़रमाते हैं :

''मस्जिद में सवाल करना हराम है और उस साइल को देना भी मना है।' (बहारे शरीअ़त, हिस्सा ३, सफ़हा १८४)

इसका तरीक़ा यह होना चाहिए कि ऐसे लोग या तो बाहर दरवाज़े पर सवाल करें या इमामे मस्जिद वग़ैरह किसी से कह दें कि वह उनकी ज़रूरत से लोगों को आगाह कर दें।

पंजवक़्ता नमाज़ में सुस्ती और वज़ीफ़े पढ़ना

काफ़ी लोग देखे गए कि वह नमाज़ों का ख़्याल नहीं रखते और पढ़ते भी हैं तो वक़्त निकाल कर जल्दी जल्दी या बे जमाअ़त के। और वज़ीफ़ों और तस्बीहों में लगे रहते हैं उनके वज़ीफ़े उनके मुँह पर मार दिये जायेंगे क्यूंकि जिसके फ़र्ज़ पूरे न हों उसका कोई नफ़्ल क़बूल नहीं। इस्लाम में सब से बड़ा वज़ीफ़ा और अमल नमाज़े बाजमाअ़त की अदाएगी है।

आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

"जब तक फ़र्ज़ ज़िम्मे बाक़ी रहता है कोई नफ़्ल क़बूल नहीं किया जाता।" (अलमलफूज़, हिस्सा अव्वल, सफ़हा ७७)

हदीस शरीफ़ में है कि हज़रते उमर ने एक दिन फ़ज्र की जमाअ़त में हज़रते सुलेमान बिन अबी हसमा को नहीं पाया। दिन में बाज़ार को जाते वक़्त उनके घर के पास से गुज़रे तो उनकी माँ से पूछा कि आज सुलेमान जमाअ़त में क्यूँ नहीं थे। उनकी वालिदा हज़रते शिफ़ा ने अर्ज़ किया कि रात भर जाग कर इबादत करते रहे फ़ज्र की जमाअ़त के वक़्त नींद आ गई और जमाअ़त में शरीक होने से रह गए। अमीरुल मोमिनीन हज़रते उमर फ़ारूक़े आज़म ने फ़रमाया कि मेरे नज़दीक सारी रात जाग कर इबादत करने से फ़ज्र की जमाअ़त में शरीक होना ज़्यादा अच्छा है। (मिश्कात, बाबुल जमाअ़त, सफ़हा ९७)
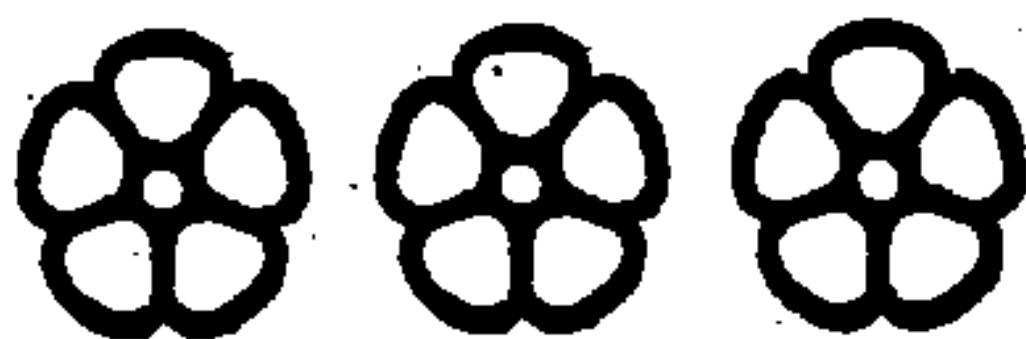
जुमे के ख़ुतबे में उर्दू अशआर पढ़ना

जुमे का ख़ुतबा सिर्फ़ अरबी ज़बान में पढ़ना सुन्नत है। किसी और ज़बान में ख़िलाफ़े सुन्नत। उर्दू अशआर अगर पढ़ना हों तो वह अज़ाने ख़ुतबा से पहले पढ़ लिये जायें। दूसरी अज़ान के बाद जो ख़ुतबा पढ़ा जाता है यह अरबी के अलावा और किसी ज़बान में पढ़ना सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

(फ़तावा रज़विया, जिल्द ३, सफ़हा ७५१)

इमाम का मेहराब में या दो सुतूनों के दरमियान खड़ा होना

कहीं कहीं देखने में आता है कि इमाम मेहराब में अन्दर है और मुक़तदी बाहर यह ख़िलाफ़े सुन्नत और मकरूह है। सदरुश्शरीआ मौलाना अमजद अली साहब अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं।

इमाम को तन्हा मेहराब में खड़ा होना मकरूह है और अगर बाहर खड़ा हो सिर्फ़ सज्दा मेहराब में किया या वह तन्हा न हो बल्कि उसके साथ कुछ मुक़तदी भी मेहराब में हों तो कुछ हर्ज नहीं, यूँ ही अगर मुक़तदियों पर मस्जिद तंग हो तो भी मेहराब में खड़ा होना मकरूह नहीं है। इमाम को दरों में खड़ा होना भी मकरूह है। (बहारे शरीअत हिस्सा सोम सफ़ा १७४ बहवाला दुर्रे मुख़्तार व आलमगीरी)

इसका तरीक़ा यह है कि इमाम का मुसल्ला थोड़ा पीछे हटा दिया जाये और वह थोड़ा पीछे हट कर इस तरह खड़ा हो कि देखने में महसूस हो कि वह मेहराब या दरों में अन्दर नहीं है बल्कि बाहर खड़ा है फिर चाहे सज्दा अन्दर हो, नमाज़ दुरुस्त हो जायेगी।

नसबन्दी कराने वाले की इमामत का हुक्म

नसबन्दी कराना इस्लाम में हराम है। लेकिन कुछ लोग ख़्याल करते हैं कि जिसने नसबन्दी करा ली अब वह ज़िन्दगी भर नमाज़ नहीं पढ़ा सकता। हालांकि ऐसा नहीं है बल्कि इस्लाम में जिस तरह और गुनाहों की तौबा है उसी तरह इस गुनाह की भी तौबा है।

यानी जिस की नसबन्दी हो चुकी है अगर वह सच्चे दिल से एलानिया तौबा करे और हराम कारियों से रुके तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ी जा सकती है।

(फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल, जिल्द १, सफ़्हा २७७)

क्या जिससे ज़ाती रन्जिश हो, उसके पीछे नमाज़ नहीं होगी?

अकसर ऐसा होता है कि इमाम और मुक़तदी के दरमियान कोई दुनियवी इख़्तिलाफ़ हो जाता है। जैसे आजकल के सियासी, समाजी, ख़ानदानों और बिरादरियों के इख़्तिलाफ़ात और झगड़े। तो इन वुजूहात पर लोग उस इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना छोड़ देते हैं और कहते हैं कि जिससे दिल मिला हुआ न हो उसके पीछे नमाज़ नहीं होगी, यह उनकी ग़लतफ़हमी है और वो लोग धोके में हैं।

सही बात यह है कि जो इमाम शरई तौर पर सही हो उसके पीछे नमाज़ दुरुस्त है चाहे उससे आपका दुनियवी झगड़ा ही क्यूँ न चलता हो। बातचीत, दुआ सलाम सब बन्द हो फिर भी आप

उसके पीछे नमाज़ पढ़ सकते हैं। नमाज़ की दुरुस्तगी के लिए ज़रूरी नहीं है कि दुनियवी एतबार से मुक़तदी का दिल इमाम से मिला हुआ हो। हाँ तीन दिन से ज़्यादा एक मुसलमान के लिए दूसरे मुसलमान से बुराई रखना और मेलजोल न करना, शरीअ़त में सख़्त नापसन्दीदा है।

हदीस में है रसूलुल्लाह स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया :

मुसलमान के लिए हलाल नहीं कि अपने भाई को तीन दिन से ज़्यादा छोड़ रखे। जब उससे मुलाक़ात हो तो तीन मरतबा सलाम कर ले अगर उसने जवाब नहीं दिया तो इसका गुनाह भी उसके ज़िम्मे है।

(अबू दाऊद किताबुल अदब जिल्द २ सफ़ा ६७३)

लेकिन इसका नमाज़ व इमामत से कोई तअ़ल्लुक़ नहीं, रन्जिश और बुराई में भी इमाम के पीछे नमाज़ हो जायेगी। और जो लोग ज़ाती रन्जिशों के बिना पर अपने नफ़्स और ज़ात की ख़ातिर इमामों के पीछे नमाज़ पढ़ना छोड़ देते हैं, ये ख़ुदा के घरों को वीरान करने वाले और दीने इस्लाम को नुक़सान पहुँचाने वाले हैं। इन्हें ख़ुदाए तआ़ला से डरना चाहिए, मरने के बाद की फ़िक्र करना चाहिए। क़ब्र की एक एक घड़ी और क़ियामत का एक एक लम्हा बड़ा भारी पड़ेगा।

आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत फ़रमाते हैं :

जो लोग बराहे नफ़्सानियत इमाम के पीछे नमाज़ न पढ़ें और जमाअ़त होती रहे और शामिल न हों, वो सख़्त गुनाहगार हैं। (फ़तावा रज़विया जिल्द ३ सफ़ा २२१)

मुक़तदी के सर पर इमामा और इमाम के सर पर न हो

अगर मुक़तदी सर पर इमामा जिसे साफ़ा और पगड़ी भी कहते हैं, बाँध कर नमाज़ पढ़े और इमाम के सर पर पगड़ी न हो तो इसको कुछ लोग बहुत बुरा जानते हैं। बल्कि कुछ यह समझते हैं कि इस सूरत में मुक़तदी की नमाज़ दुरुस्त नहीं हुई, यह ग़लत बात है।

अगर इमाम के सर पर पगड़ी न हो और मुक़तदी के सर पर हो तो मुक़तदी की नमाज़ दुरुस्त और सही हो जायेगी। आलाहज़रत रदियल्लाहु अन्हु से यह मसअला मालूम किया गया तो फ़रमाया बिला तकल्लुफ़ दुरुस्त है।

(फ़तावा रज़विया जिल्द ३ सफ़ा २७३, इरफ़ाने शरीअत सफ़ा ४)

इमाम के लिए मुक़र्रिर होना कितना ज़रूरी है?

आजकल काफ़ी जगह अवाम मस्जिद में किसी को इमामत के लिए रखते हें तो उस से तक़रीर कराते हें अगर वह धूम धड़ाके से ख़ूब कूद फांद कर हाथ पाँव फेंक कर जोशीले अन्दाज़ में जज़्बाती तक़रीर कर दे तो बड़े ख़ुश होते हैं और उसको इमामत के लिए पसन्द करते हैं यहाँ तक कि बाज़ जगह तो ख़ुश इलहानी और अच्छी आवाज़ से नातें और नज़्में पढ़ दे तो उसको बहुत बढ़िया इमाम ख़्याल करते हैं। इस बात की तरफ़ तवज्जोह नहीं देते कि उसका कुर्आन शरीफ़ ग़लत है या सही। उसको मसाइल दीनिया से बक़द्रे ज़रूरत वाक़फ़ियत है या नहीं। और उसका किरदार व अमल मनसबे इमामत के लिए मुनासिब है या नहीं।

अगरचे तक़रीर व बयान व ख़िताबत अगर उसूल व शराइत के साथ हो तो उससे दीन को तक़वियत हासिल होती है और हुई है। लेकिन इसमें भी कोई शक नहीं कि दीनदारी तक़वा शिआ़री और ख़ौफ़े ख़ुदा अमूमन कम सुख़न और सन्जीदा मिज़ाज लोगों में ज़्यादा मिलता है। ज़बान ज़ोर और मुँह के मज़बूत लोग सब काम मुँह और ज़बान से ही चलाना चाहते हैं। और इस्लाम गुफ़्तार से ज़्यादा किरदार से फैला है और आजकल के ज़्यादातर मौलवियों और इमामों के लिए बजाए तक़रीर व ख़िताबत के ज़िम्मेदार उलमाए अहलेसुन्नत की आम फ़हम अन्दाज़ में लिखी हुई किताबें पढ़ कर अवाम को सुनाना ज़्यादा मुनासिब और बेहतर है। खुलासा यह कि आज कल बाज़ जगह लोग जो इमाम के लिए मुक़र्रिर होना ज़रूरी ख़्याल करते हैं यह लोग ग़लती पर हैं।

इमाम का मुक़तदियों से ऊँची जगह खड़ा होना

कई जगह देखा गया है कि नमाज़ में इमाम मुक़तदियों से ऊँची जगह खड़ा होता है मसलन मस्जिद में अन्दर की कुर्सी ऊँची है और बाहर के हिस्से की नीची है और इमाम का मुसल्ला अन्दर के फ़र्श पर है और मुक़तदी बाहर या दोनों अन्दर हैं लेकिन इमाम के मुसल्ले के लिए फ़र्श ऊँचा कर दिया गया है, तो यह मकरूह है और इस तरह नमाज़ पढ़ने से नमाज़ में कमी आती है।

मसअला यह है कि इमाम का अकेले बुलन्द और ऊँची जगह खड़ा होना मकरूह है और ऊँचाई का मतलब यह है कि देखने से अन्दाज़ा हो जाये कि इमाम ऊँचा है और मुक़तदी नीचे और यह फ़र्क़ मामूली हो तो मकरूहे तनज़ीही और अगर ज़्यादा

हो तो तहरीमी है। हाँ अगर पहली सफ़ इमाम के साथ और बराबर में हो बाक़ी सफ़ें नीची हों तो कुछ हर्ज नहीं, यह जाइज़ है। इस मसअले की तफ़सील जानने के लिए फ़तावा रज़विया जिल्द न० ३ सफ़ा ४१५ देखना चाहिए। इस मसअले का ख़ास ध्यान रखना चाहिए क्यूँकि ख़ुद हदीस शरीफ़ में भी इससे मुताल्लिक़ मरवी है।

हदीस :- हज़रते हुज़ैफ़ा रदियल्लाहु तआला अन्हु से मरवी है कि रसूलुल्लाह सल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि जब इमाम नमाज़ पढ़ाये तो मुक़तदियों से ऊँची जगह खड़ा न हो।

(अबू दाऊद जिल्द न० १ सफ़ा ८८)

नमाज़ में नफ़्लों को फ़र्ज़ व वाजिब समझना

नमाज़े ज़ुहर, नमाज़े मग़रिब और इशा के अख़ीर में और इशा में वित्रों से पहले दो रकअत नफ़्ल पढ़ने का रिवाज है और उनको पढ़ने में हिकमत व सवाब है। लिहाज़ा पढ़ लेना ही मुनासिब है लेकिन इन नफ़्लों को फ़र्ज़ व वाजिब व ज़रूरी ख़्याल करना और न पढ़ने वालों को टोकना और उन पर मलामत करना और बुरा भला कहना ग़लत है, इस्लाम में ज़्यादती और शरई हदों से आगे बढ़ना है। इस्लाम में नफ़्ल व मुसतहब उसे कहते हैं जिसके करने पर सवाब हो और न करने पर कोई गुनाह व अज़ाब न हो तो आपको भी इस पर मलामत करने और बुरा भला कहने का कोई हक़ नहीं और जब ख़ुदाए तआला नफ़्ल छोड़ने पर नाराज़ नहीं तो आप टोकने वाले कौन हुए?

इस्लाम में अल्लाह तआला ने अपने बन्दों को जो रिआयतें और आसानियां दी हैं उन्हें लोगों तक पहुँचाना ज़रूरी है। अगर आप ऐसा नहीं कर रहे हैं। तो आप इस्लाम को बजाए नफ़ा

केनुक़सान पहुँचा रहे और लोग यह ख़्याल कर बैठेंगे कि हम इस्लाम पर चल ही नहीं सकते क्यूँकि वह एक मुश्किल मज़हब है लिहाज़ा उसकी इशाअ़त में कमी आएगी। आज कितने ऐसे लोग हैं जो सिर्फ़ इसलिए नमाज़ नहीं पढ़ते कि वह समझते हैं हम नमाज़ पढ़ ही नहीं सकते और मसाइल नमाज़ व तहारत पाकी व नापाकी से पूरी तरह वाक़फ़ियत न होने और ख़ुदा व रसूल की अता फ़रमाई हुई बाज़ रिआ़यतों और आसानियों पर आगाह न होने की बिना पर वह नमाज़ को छोड़ना गवारा कर लेते हैं और इन रिआ़यतों से नफ़ा नहीं उठाते हालांकि एक वक़्त की नमाज़ भी क़सदन छोड़ देना इस्लाम में कुफ़्र व शिर्क के बाद सब से बड़ा गुना है। उलमा व मस्जिदों के इमामों से मेरी गुज़ारिश है कि वह अवाम का ख़ौफ़ न करके उन्हें इस्लामी अहकाम पर अमल करने में मौक़ा ब-मौक़ा जो छूट दी गई और जो आसानियां हैं उन्हें ज़रूर बतायें ताकि ज़्यादा से ज़्यादा लोग इस्लाम और इस्लामियात को अपनायें। उन्हें नफ़्लों के बारे में देखा गया है कि अगर कोई शख़्स उन्हें न पढ़े तो कुछ अनपढ़ उस पर इल्ज़ाम लगाते हुए यह तक कह देते हैं कि नमाज़ पढ़े तो पूरी पढ़े इस से तो न पढ़ना अच्छा। यह एक बड़ी जहालत की बात है जो वह कहते हैं हालांकि सही बात यह है कि नफ़्ल तो नफ़्ल अगर कोई शख़्स सुन्नतें भी छोड़ दे सिर्फ़ फ़र्ज़ पढ़ ले तो वह नमाज़ को जान बूझ कर बिल्कुल छोड़ देने वालों से बहुत बेहतर है और उसे बे नमाज़ी नहीं कहा जा सकता। हाँ सुन्नतें छोड़ने की वजह से गुनाहगहार ज़रूर है क्यूँकि सुन्नतों को छोड़ने की इजाज़त नहीं और उन्हें जानबूझ कर छोड़ने की आदत डालना गुनाह है।

हाँ अगर उलझन व परेशानी और जल्दी में कोई मौक़ा है कि आप सुन्नतों के साथ मुकम्मल नमाज़ नहीं पढ़ सकते तो

सिर्फ़ फ़र्ज़ और वित्र पढ़ लेने में कोई हरज व गुनाह नहीं है। मसलन वक़्त तंग है पूरी नमाज़ नहीं पढ़ी जा सकती तो सिर्फ़ फ़र्ज़ पढ़ लेना काफ़ी है। खुलासा यह कि ज़ुहर व मग़रिब व इशा में जो नफ़्ल अदा किये जाते हैं उन्हें अदा करना बहुत अच्छा है मुनासिब व बेहतर है और पढ़ना चाहिए लेकिन उन्हें फ़र्ज़ व वाजिब व ज़रूरी समझना और न अदा करने वालों को टोकना उन्हें छोड़ने पर भला बुरा कहना ग़लत है जिसकी इस्लाह ज़रूरी है।

बग़ैर रूमाली के पाजामे या जांघिये को पहन कर नमाज़ पढ़ना

यह भी कुछ लोगों में एक आम ख़्याल है जिसकी कोई हक़ीक़त नहीं। पाजामे या जांघिये में रूमाली होना नमाज़ की दुरुस्तगी के लिए बिल्कुल ज़रूरी नहीं है। बग़ैर रूमाली के पाजामे और जांघिये से नमाज़ बिला कराहत जाइज़ है। हाँ जो लिबास और कपड़े ग़ैर मुस्लिमों के लिए मख़सूस हैं, उनको पहनना गुनाह है, और उनमें नमाज़ मकरूह है। अंग्रेज़ी पैन्ट और शर्ट में इस ज़माने में उलमाए किराम ने नमाज़ मकरूहे तनज़ीही होने का फ़तवा दिया है। जैसा कि बरेली शरीफ़ से छपी हुई फ़तावा मरकज़ी दारुल इफ़्ता सफ़ा २०७ पर इसकी तफ़सील मौजूद है। यह इसलिए नहीं कि पैन्ट में रूमाली नहीं होती बल्कि इसलिए है कि अंग्रेज़ों का ख़ास क़ौमी लिबास रह चुका है और अब भी दीनदार मुसलमान इस लिबास को अच्छा नहीं समझते।

लिहाज़ा अब भी अंग्रेज़ी पैन्ट और शर्ट में नमाज़ अदा करना मुनासिब और बेहतर नहीं और इस लिबास से बचना ही बेहतर है। लेकिन अगर पढ़ ली तो हो जाएगी।

नमाज़ में लंगोट बाँधने का मसअला

कुछ लोग समझते हैं कि पाजामा या तहबन्द के अन्दर लंगोट बाँध कर नमाज़ पढ़ने से नमाज़ नहीं होती। हालाँकि यह उन की ग़लतफ़हमी है। लंगोट बाँध कर नमाज़ पढ़ने से नमाज़ में कोई कमी नहीं आती। अलबत्ता यह ध्यान रखें कि वह इतना कसा हुआ और टाइट न हो कि नमाज़ में रूकूअ़ और सज्दे और बैठने में दिक़्क़त हो। (फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल जिल्द १ सफ़ा २५२, इरफ़ाने शरीअ़त सफ़ा ४)

पैन्ट और पाजामे की मोरी चढ़ाकर नमाज़ पढ़ना

कुछ लोग टख़नों से नीचा लटका हुआ पाजामा और पैन्ट पहनते हैं अगर उन्होंने इसकी आदत डाल रखी है और तकब्बुर व घमन्ड के तौर पर वह ऐसा करते हैं तो यह नाजाइज़ गुनाह है और इस तरह नमाज़ मकरूह लेकिन अगर इत्तिफ़ाक़ से हो या बेख़्याली और बेतवज्जोही से हो तो हर्ज नहीं, और जो लोग इससे बचने के लिए और टख़ने खोलने के लिए मोरी पायेंचे को चढ़ाते हैं वह गुनाह को घटाते नहीं बल्कि बढ़ाते हैं और नमाज़ में ख़राबी को कम नहीं करते बल्कि ज़्यादा करते हैं, यह पैन्ट और पाजामे की मोरी पायेंचे को लपेट कर चढ़ाना नमाज़ में मकरूहे तहरीमी है।

हदीस में है रसूलुल्लाह स़ल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम ने फ़रामाया कि मुझे हुक्म दिया गया कि मैं सात हड्डियों पर सज्दा करूँ, पेशानी, दोनों हाथ, दोनों घुटने और दोनों पंजे और यह हुक्म दिया गया कि मैं नमाज़ में कपड़े और बाल न समेटूँ।

(बुख़ारी, मुस्लिम, मिश्कात सफ़ा ८३)

इस हदीस की रोशनी में कपड़ा समेटना और चढ़ाना नमाज़ में मना है, लिहाज़ा पैन्ट और पाजामे की मोरी लपेटने और चढ़ाने वालों को इस हदीस से इबरत हासिल करना चाहिए।

लेकिन इस्लाह करने वालों से भी गुज़ारिश है कि नमाज़ में इस क़िस्म की कोताहियाँ बरतने वालों को नरमी और प्यार महब्बत से समझायें, मान जायें तो ठीक वरना उन्हें उनके हाल पर रहने दें और मुनासिब तरीक़े से इस्लाह करें। उनको डाँटना, झिड़कना और उनसे लड़ाई झगड़ा करना बहुत बुरा है। जिसका नतीजा यह भी हो सकता है कि वह मस्जिद में आना और नमाज़ पढ़ना छोड़ दें जिसका वबाल उन झिड़कने वालों पर है, क्यूँकि इसमें भी कोई शक नहीं कि बाज़ इस क़िस्म की ख़ामियों के साथ नमाज़ पढ़ने वाले बेनमाज़ियों से हज़ारों दर्जा बेहतर हैं ----- और नमाज़ में कोताहियाँ करने वालों को चाहिए अगर कोई उनकी इस्लाह करे तो बुरा मानने के बजाय उसकी बात पर अमल करें, उस पर गुस्सा न करें क्यूँकि वह जो कुछ कह रहा है आपकी भलाई के लिए कह रहा है अगर वह तुर्शी और सख़्ती से भी कह रहा है तो वह उसका फ़ेल है, आपका काम तो हक़ को सुन कर अमल करना है, झगड़ा करना नहीं।

.कुर्आन पढ़ने में सिर्फ़ होंट हिलाना और आवाज़ न निकालना

कुछ लोग .कुर्आन की तिलावत और नमाज़ या नमाज़ के बाहर कुछ पढ़ते हैं तो सिर्फ़ होंट हिलाते हैं और आवाज़ बिल्कुल नहीं निकालते हैं। उनका यह पढ़ना, पढ़ना नहीं है और इस तरह पढ़ने से नमाज़ नहीं होगी और इस तरह .कुर्आन की तिलावत की तो तिलावत का सवाब नहीं पायेंगे। आहिस्ता पढ़ने का मतलब यह है कि कम से कम इतनी आवाज़ ज़रूर निकले कि कोई रुकावट

न हो तो खुद सुन ले, सिर्फ़ होंट हिलना और आवाज़ का बिल्कुल न निकलना पढ़ना नहीं है और इस मसअले का ख़ास ध्यान रखना चाहिए। (फ़तावा आलमगीरी मिस्री जिल्द अव्वल सफ़ा ६५, बहारे शरीअत जिल्द ३ सफ़ा ६६)

क्या जमाअत से नमाज़ पढ़ने वाले को इमाम के साथ दुआ मांगना भी ज़रूरी है?

हर नमाज़ सलाम फेरने पर मुकम्मल हो जाती है उसके बाद जो दुआ मांगी जाती है यह नमाज़ में दाख़िल नहीं। अगर कोई शख़्स नमाज़ पढ़ने यानी सलाम फेरने के बाद बिल्कुल दुआ न मांगने तब भी उसकी नमाज़ में कमी नहीं। अलबत्ता एक फ़ज़ीलत से महरूमी और सुन्नत की ख़िलाफ़ वर्ज़ी है। कुछ जगह देखा गया कि इमाम लोग बहुत लम्बी लम्बी दुआयें पढ़ते हैं और मुक़तदी कुछ खुशी के साथ और कुछ बे रग़बती से मजबूरन उनका साथ निबाहते हैं। और कोई बग़ैर दुआ मांगे या थोड़ी दुआ मांग कर इमाम साहब का पूरा साथ दिये बग़ैर चला जाए तो उस पर एतराज़ करते हैं और बुरा जानते हैं। यह सब उनकी ग़लतफ़हमियाँ हैं इमाम के साथ दुआ मांगना मुक़तदी के ऊपर हरगिज़ लाज़िम व ज़रूरी नहीं वह नमाज़ पूरी होने के बाद फ़ौरन मुख़्तसर दुआ मांम कर भी जा सकता है। और कभी किसी मजबूरी और उज़्र की बिना पर बग़ैर दुआ मांगे चला जाए तब भी नमाज़ में कमी नहीं आती। हवाले के लिए फ़तावा रज़विया जिल्द सोम सफ़हा २७८ देखें।

नमाज़ में कुहनियाँ खुली रखना

बिला मजबूरी कुहनियाँ खोल कर जैसे आजकल आधी आस्तीन की शर्ट पहन कर कुछ लोग नमाज़ अदा करते हैं। यह मकरूह है और ऐसी नमाज़ को लौटाने का हुक्म है।

(फ़तावा रज़विया जिल्द ३ सफ़ा ४१६)

और जो लोग आस्तीन चढ़ा कर और कुहनियाँ खोल कर नमाज़ अदा करते हैं, उन पर दो गुनाह होते हैं, एक कपड़ा समेटने और चढ़ाने का और दूसरा कुहनियाँ खुली रखने का क्यूँकि नमाज़ में कपड़ा चढ़ाना मना है जैसे कुछ लोग सज्दे में जाते वक़्त दोनों हाथों से पाजामे के पायेंचे को पकड़ कर चढ़ाते हैं, यह भी नाजाइज़ व गुनाह है। इस क़िस्म के नमाज़ियों को प्यार व महब्बत से समझाते रहना चाहिए या बजाय एक एक को टोकने और रोकने के, सबको इकट्ठा करके मसअला बता दिया जाये ताकि कोई अपनी तौहीन महसूस न करे, क्यूँकि आजकल दीनी बातों पर टोका जाये तो लोगों में तौहीन महसूस करने की बीमारी पैदा हो गई है।

कमसिन बच्चों को मस्जिद में लाना

ज़्यादा छोटे ना समझ कमसिन बच्चों का मस्जिद में आना या उन्हें लाना शरअ़न नापसन्दीदा, नाजाइज़ व मकरूह है। कुछ लोग औलाद से बे जा महब्बत करने वाले नमाज़ के लिए मस्जिद में आते हैं तो अपने साथ कमसिन नासमझ बच्चों को भी लाते हैं। यहाँ तक कि बाज़ लोग उन्हें अगली सफ़ों मे अपने बराबर नमाज़ में खड़ा कर लेते हैं यह तो निहायत ग़लत बात है और इससे

पिछली सफ़ों के सारे नमाज़ियों की नमाज़ मकरूह होती है और उसका गुनाह उस लाने और बराबर में खड़ा करने वाले पर है और उन पर जो उससे हत्तल मक़दूर मना न करें। हाँ जो समझदार, होशियार बच्चे हों नमाज़ के आदाब से वाक़िफ़, पाकी और नापाकी को जानते हों उनको आना चाहिए और उनकी सफ़ मस्जिद में बालिग़ मर्दों से पीछे होना चाहिए। और ज़्यादा छोटे जो नमाज़ को भी एक तरह का खेल समझते और मस्जिद में शोर मचाते खुद भी नहीं पढ़ते और दूसरों की नमाज़ भी ख़राब करते हैं एसे बच्चों को सख़्ती के साथ मस्जिद में आने से रोकना ज़रूरी है।

हदीस में है फ़रमाया रसूलुल्लाह ﷺ ने :

"अपनी मस्जिदों को बचाओ बच्चों से पागलों से ख़रीदने और बेचने से और झगड़े करने से और ज़ोर ज़ोर से बोलने से।"

(इब्ने माजा, बाब मा यकरहु फ़िल मस्जिद, सफ़हा ५५)

यानी यह सब बातें मस्जिद में नाजाइज़ व गुनाह हैं।

सदरुश्शरीआ हज़रत मौलाना अमजद अली साहब आज़मी रहमतुल्लाहि तआला अलैह लिखते हैं :

"बच्चे और पागल को जिन से नजासत का गुमान हो मस्जिद में ले जाना हराम है वरना मकरूह।"

(बहारे शरीअत, हिस्सा सोम, सफ़हा १८२)

कुछ लोग कहते हैं कि बच्चे मस्जिद में नहीं आयेंगे तो नमाज़ सीखेंगे कैसे तो भाईयो समझदार बच्चों के सीखने के लिए मस्जिद है और नासमझ ज़्यादा छोटे बच्चों के लिए घर और मदरसे हैं। और हदीसे रसूल के आगे अपनी नहीं चलाना चाहिए।

मस्जिदों को सजाना इमामों को सताना

आजकल काफ़ी देखा गया है कि लोग मस्जिदों को सजाने, सँवारने में ख़ूब पैसा ख़र्च करते हैं और इमामों, मौलवियों को सताते, उन्हें तंग और परेशान रखते हैं, और कम से कम पैसों में काम चलाना चाहते हैं। जिसकी वजह से वह सजी, सँवरी ख़ूबसूरत मस्जिदें कभी कभी वीरान सी हो जाती हैं और उनमें वक़्त पर अज़ान व नमाज़ नहीं हो पाती।

इस बयान से हमारा मक़सद यह नहीं है कि मस्जिदों को सजाना और ख़ूबसूरत बनाना मना है। बल्कि यह बताना है कि किसी भी मस्जिद की अस्ली ख़ूबसूरती यह है कि उसमें दीनदार, ख़ुदाए तआला का ख़ौफ़ रखने वाला, लोगों को हुस्न व ख़ूबी और हिकमत व दानाई के साथ दीन की बातें बताने वाला आलिमे दीन इमामत करता हो चाहे वह मस्जिद कच्ची और सादा सी इमारत हो। किसी मस्जिद के लिए अगर नेक और सही इमाम मिल जाये तो लोगों को चाहिए कि उसको हर तरह खुश रखें, उसका ख़ूब ख़्याल रखें। बल्कि पीरों से भी ज़्यादा आलिमों, मौलवियों, इमामों और मुदर्रेसीन का ख़्याल रखा जाये क्यूँकि दीन की बक़ा और इस्लाम की हिफ़ाज़त इल्म वालों से है। अगर इमामों और मौलवियों को परेशान रखा गया तो वो दिन दूर नहीं कि मस्जिदें और मदरसे या तो वीरान हो जायेंगे या उनमें सबसे घटिया क़िस्म के लोग इमामतें करेंगे और बच्चों को पढ़ायेंगे। अच्छे घरानों और अच्छे ज़हन व फ़िक्र रखने वाले लोग इस लाइन से दूर हो जायेंगे।

खुलासा यह कि आलिमों और मौलवियों को चाहिए वो पैसे और माल व दौलत का लालच किये बग़ैर दीन की ख़िदमत करें और क़ौम को चाहिए कि वह अपने आलिमों, मौलवियों और दीन की ख़िदमत करने वालों को ख़ुशहाल रखे। उन्हें तंगदस्त और

परेशान न होने दे और हमारी राय में आजकल शादीशुदा बेरूनी (बाहर के) इमामों के लिए रिहाइशी मकानों का बन्दोबस्त कर देना निहायत ज़रूरी है ताकि उन्हें बार बार घर न भागना पड़े और वो नमाज़ों को पढ़ाने में पाबन्दी कर सकें और अंगुश्तनुमाईयों, बदगुमानियों से महफूज़ रहें।

ईदगाह में नमाज़े जनाज़ा पढ़ने का मसअला

मस्जिद में जनाज़े की नमाज़ पढ़ना मकरूह व नाजाइज़ है। हदीस शरीफ़ में है :

हज़रत अबू हुरैरह रदियल्लाहु तआला अन्हु से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जो मस्जिद में नमाज़े जनाज़ा पढ़े उसके लिए कुछ सवाब नहीं। (अबूदाऊद, किताबुल जनाइज़, बाबुस्सलात अलल जनाज़ा फ़िल मस्जिद, सफ़हा ४५४)

हाँ सख़्त बारिश आँधी तूफ़ान वग़ैरा किसी मजबूरी के वक़्त मस्जिद में भी पढ़ना जाइज़ है जब कि ईदगाह, मदरसा, मुसाफ़िर ख़ाना वग़ैरा कोई और जगह न हो। हज़रत अल्लामा सय्यिद अहमद तहतावी रहमतुल्लाहि तआला अलैह फ़रमाते हैं :

''जो मस्जिद सिर्फ़ नमाज़े जनाज़ा ही पढ़ने को लिए बनाई गई हो वहाँ यह नमाज़ मकरूह नहीं यानी जाइज़ है। यूंही मदरसे और ईदगाह में नमाज़े जनाज़ा पढ़ना जाइज़ है। (तहतावी अला मराक़िल फ़लाह मतबूआ कुस्तुन्तिया, सफ़हा ३२६)

और मौलाना मुफ़्ती जलालुद्दीन साहब अमजदी फ़रमाते हैं :

''नमाज़े जनाज़ा ईदगाह के इहाते और मदरसे में भी पढ़ी जा सकती है।'' (फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल, जिल्द १, सफ़हा ४४६)

लिहाज़ा जो लोग ईदगाह में नमाज़े जनाज़ा पढ़ते हुए झिझक महसूस करते हैं वह बिला ख़ौफ़ बे झिझक वहाँ नमाज़े जनाज़ा पढ़ा करें।

मस्जिदों में आवाज़ करने वाले पंखों और कूलरों का मसअला

आजकल कितने लोग हैं जो मस्जिदों में आते हैं तो उन्हें नमाज़ से ज़्यादा अपने आराम, चैन व सुकून गर्मी और ठन्डक की फ़िक्र रहती है अपनी दुकानों, मकानों खेतों और खलिहानों, काम धन्धों में बड़ी बड़ी परेशानियाँ उठा लेने वाले मशक़्क़तें झेलने वाले जब मस्जिदों में दस पन्द्रह मिनट के लिए नमाज़ पढ़ने आते हैं। और ज़रा सी परेशानी हो जाए, थोड़ी सी गर्मी या ठन्डक लग जाए तो बौखला जाते हैं, गोया कि आज लोगों ने मस्जिदों को आरामगाह और मक़ामे ऐश व इशरत समझ लिया है। जहाँ तक शरीअते इस्लामिया ने इजाज़त दी है वहाँ तक आराम उठाने से रोका तो नहीं जा सकता लेकिन कुछ जगह यह देख कर सख़्त तकलीफ़ होती है कि मस्जिदों को आवाज़ करने वाले बिजली के पंखों, शोर मचाने वाले कूलरों से सजा देते हैं और जब वह सारे पंखे और कूलर चलते हैं तो मस्जिद में एक शोर व हंगामा होता है। और कभी कभी इमाम की क़िरअत व तकबीरात तक साफ़ सुनाई नहीं देतीं या इमाम को उन पंखों और कूलरों की वजह से चीख़ कर क़िरअत व तकबीर की आवाज़ निकालना पड़ती है। बाज़ जगह तो यह भी देखा गया है कि मस्जिदों में अपने ऐश व आराम की ख़ातिर भारी आवाज़ वाले जनरेटर तक रख दिये जाते हैं जो सरासर आदाबे मस्जिद के ख़िलाफ़ है। जहाँ तक बिजली के पंखों और कूलरों का सवाल है तो शुरू में अकाबिर उलमा ने इनको मस्जिद में लगाने को मुतलक़न ममनूअ व मकरूह फ़रमाया था। जैसा कि फ़तावा रज़विया जिल्द ६ सफ़हा ३८४ पर खुद आलाहज़रत इमामे अहलेसुन्नत मौलाना शाह अहमद रज़ा ख़ाँ साहब अ़लैहिर्रहमतु वर्रिद्वान के क़लम से इसकी तसरीह मौजूद है। अब बाद में जदीद तहक़ीक़ात और इब्तिलाए आम की बिना पर अगरचे इनकी

इजाज़त दे दी गई लेकिन आवाज़ करने वाले, शोर मचा कर मस्जिदों में एक हंगामा खड़ा कर देने वाले कूलरों और पंखों को लगाना आदाबे मस्जिद और खुज़ू व खुशू के यक़ीनन ख़िलाफ़ है उनकी इजाज़त हरगिज़ नहीं दी जा सकती। निहायत हल्की आवाज़ वाले हाथ के पंखों ही से काम चलाया जाए। कूलरों से मस्जिदों को बचा लेना ही अच्छा है क्यूँकि उसमें आमतौर से आवाज़ ज़्यादा होती है न कि दर्जनों पंखे और कूलर लगा कर मस्जिदों में शोर मचाया जाए।

भाईयो खुदाए तआ़ला का ख़ौफ़ रखो। ख़ानए खुदा को ऐश व इशरत का मक़ाम न बनाओ वह नमाज़ व इबादत और तिलावते कुर्आन के लिए है जिस्म परवरी के लिए नहीं। नफ़्स को मारने के लिए है नफ़्स को पालने के लिए नहीं। मस्जिदों में आवाज़ करने वाले बिजली के पंखों का हुक्म बयान फ़रमाते हुए आलाहज़रत रदि़यल्लाहु तआ़ला अ़न्हु फ़रमाते हैं :

''बेशक मस्जिदों में ऐसी चीज़ का एहदास ममनूअ़ बल्कि ऐसी जगह नमाज़ पढ़ना मकरूह है।''

(फ़तवा रज़विया, जिल्द ६, सफ़हा ३८६)

इस जगह आलाहज़रत ने दुर्रेमुख़्तार की यह इबारत भी नक़ल फ़रमाई है ''अगर खाना मौजूद हो और उसकी तरफ़ रग़बत व ख़्वाहिश हो तो ऐसे वक़्त में नमाज़ पढ़ना मकरूह है ऐसे ही हर वह चीज़ जो नमाज़ की तरफ़ से दिल को फेरे और खुशू में ख़लल डाले।

मज़ीद फ़रमाते हैं ''चक्की के पास नमाज़ मकरूह है।'' रद्दुलमुहतार में है ''शायद इसकी वजह यह है कि चक्की की आवाज़ दिल को नमाज़ से हटाती है।''

वह पंखे जो ख़राब और पुराने हो जाने की वजह से आवाज़ करने लगते हैं उनको दुरुस्त करा लेना चाहिए या मस्जिद से हटा देना चाहिए।

नमाज़े जनाज़ा में तकबीर के वक़्त आसमान की तरफ़ मुँह उठाना

आजकल काफ़ी लोग ऐसा करते हुए देखे गए हैं कि जब नमाज़े जनाज़ा में तकबीर कही जाती है तो हर तकबीर के वक़्त ऊपर की जानिब मुँह उठाते हैं हालांकि इसकी कोई अस्ल नहीं बल्कि नमाज़ में आसमान की तरफ़ मुँह उठाना मकरूहे तहरीमी है। (बहारे शरीअ़त) और हदीस शरीफ़ में है : रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया "क्या हाल है उन लोगों का जो नमाज़ में आसमान की तरफ़ आंखें उठाते हैं इससे बाज़ रहें या उनकी आंखें उचक ली जायेंगी।" (मिश्कात बहवाला सहीह मुस्लिम सफ़हा ९०)

खुलासा यह कि नमाज़े जनाज़ा हो या कोई और नमाज़ क़सदन आसमान की तरफ़ नज़र उठाना मकरूह है और नमाज़े जनाज़ा में तकबीर के वक़्त ऊपर को नज़र उठाने का जो रिवाज पड़ गया है यह ग़लत है, बे अस्ल है।

मय्यत का खाना

मय्यत के तीजे, दसवें या चालीसवें वग़ैरहा के मौक़े पर दावत करके खाना खिलाने का जो रिवाज है यह भी महज़ ग़लत है और ख़िलाफ़े शरअ़ है। हाँ ग़रीबों और फ़क़ीरों को बुला कर खिलाने में हरज नहीं। आलाहज़रत फ़रमाते हैं मुर्दे का खाना सिर्फ़ फ़क़ीरों के लिए है आ़म दावत के तौर पर जो करते हैं यह मना है, ग़नी न खाए। (अहकामे शरीअ़त, हिस्सा दोम, सफ़हा १६

और फ़रमाते हैं मौत में दावत बे मअ़ना है, फ़तहुल क़दीर में इसे बिदअ़ते मुसतक़बहा फ़रमाया।

(फ़तावा रज़विया, जिल्द ४, सफ़हा २२

शौहर का बीवी के जनाज़े को उठाना

अवाम में यह ग़लत मशहूर है कि शौहर बीवी के मरने के बाद न देख सकता है न उसके जनाज़े को हाथ लगा सकता है और न कान्धा दे सकता है।

सही बात यह है कि शौहर के लिए अपनी बीवी को मरने के बाद देखना भी जाइज़ है और उसके जनाज़े को उठाना और कान्धा देना, क़ब्र में उतारना भी जाइज़ है। (फ़तावा रज़विया, जिल्द ४, सफ़हा ६१)

फ़ातिहा में खाना पानी सामने रखने का मसअला

इस बारे में दो क़िस्म के लोग पाए जाते हैं, कुछ तो वह हैं कि अगर खाना सामने रख कर सूरए फ़ातिहा वग़ैरा आयाते कुर्आनिया पढ़ दी जायें तो उन्हें उस खाने से चिढ़ हो जाती है और वह उस खाने के दुश्मन हो जाते हैं और उसे हराम ख़्याल करते हैं। यह वह लोग हैं जिनके दिलों में बीमारी है। तो ख़ुदाए तआ़ला ने उनकी बीमारी को और बढ़ा दिया। कसीर अहादीस और अक़वाले अइम्मा और मामूलाते बुज़ुर्गाने दीन से मुँह मोड़ कर अपनी चलाते और ख़्वाहम ख़्वाह मुसलमानों को मुशरिक और बिदअ़ती बताते हैं।

दूसरे हमारे कुछ वह मुसलमान भाई हैं जो अपनी जिहालत और वहम परस्ती की बुनियाद पर यह समझते हैं कि जब खाना सामने न हो कुर्आन की तिलावत व ईसाले सवाब मना है।

कुछ जगह देखा गया है मीलाद शरीफ़ पढ़ने के बाद इन्तिज़ार करते हैं कि मिठाई आ जाए तब तिलावत शुरू करें यहाँ

तक कि मिठाई आने में अगर देर हो तो गिलास में पानी ला कर रखा जाता है कि उनके लिए उनके जाहिलाना ख़्याल में फ़ातिहा पढ़ना जाइज़ हो जाए कभी ऐसा होता है कि इमाम साहब आकर बैठ गए हैं और मुसल्ले पर बैठे इन्तिज़ार कर रहे हैं अगर खाना आए तो कुर्आन पढ़ें यह सब वहम परस्तियां हैं। हक़ीक़त यह है कि फ़ातिहा में खाना सामने होना ज़रूरी नहीं अगर आयतें और सूरतें पढ़ कर खाना या शीरीनी बग़ैर सामने लाए यूंही तक़सीम कर दी जाए तब भी ईसाले सवाब हो जाएगा और फ़ातिहा में कोई कमी नहीं आएगी।

सय्यिदी आलाहज़रत मौलाना अहमद रज़ा ख़ाँ बरेलवी फ़रमाते हैं "फ़ातिहा व ईसाले सवाब के लिए खाने का सामने होना ज़रूर नहीं।" (फ़तावा रज़विया, जिल्द ४, सफ़हा २२५)

और दूसरी जगह फ़रमाते हैं "अगर किसी शख़्स का यह एतिक़ाद हो कि जब तक खाना सामने न किया जाए सवाब न पहुँचेगा तो यह गुमान उसका महज़ ग़लत है।" (फ़तावा रज़विया, जिल्द ४, सफ़हा १६५)

खुलासा यह कि खाने पीने की चीज़ें सामने रख कर फ़ातिहा पढ़ने में कोई हरज नहीं बल्कि हदीसों से उसकी अस्ल साबित है और फ़ातिहा में खाना सामने रखने को ज़रूरी ख़्याल करना कि उसके बग़ैर फ़ातिहा नहीं होगी यह भी इस्लाम में ज़्यादती, वहमपरस्ती और ख़्याले ख़ाम है। जिसको मिटाना मुसलमानों पर ज़रूरी है।

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद ख़लील ख़ाँ साहब मारहरवी फ़रमाते हैं :

"तुम ने नियाज़, दुरूद व फ़ातिहा में दिन या तारीख़ मुक़र्ररा के बारे में यह समझ रखा है कि उन्हीं दिनों में सवाब मिलेगा आगे पीछे नहीं तो यह समझना हुक्मे शरई के ख़िलाफ़ है

यूंही फ़ातिहा व ईसाले सवाब के लिए खाने का सामने होना कुछ ज़रूरी नहीं या हज़रते फ़ातिमा ख़ातूने जन्नत की नियाज़ का खाना पर्दे में रखना और मर्दों को न खाने देना औरतों की जिहालतें हैं बे सबूत और गढ़ी हुई बातें हैं मर्दों को चाहिए कि इन ख़्यालात को मिटायें और औरतों को सही रास्ते और हुक्मे शरई पर चलायें।"

(तौज़ीह व तशरीह फ़ैसला हफ़्त मसअला, सफ़हा १४२)

बच्चा पैदा होने की वजह से जो औरत मर जाये उसको बदनसीब समझना

कुछ जगहों पर कुछ लोग ऐसी औरत को जो बच्चा पैदा होने की वजह से मर जाये उसको बुरा ख़्याल करते हैं और कहते हैं कि वह नापाकी में मरी है, लिहाज़ा बदनसीब और मनहूस है। यहाँ तक सुना गया है कि कुछ लोग कहते हैं कि वह मर कर चुड़ैल बनेगी। यह सब जाहिलाना बकवासें और निरी खुराफ़ातें हैं। हदीस शरीफ़ में इस हाल में मरने वाली औरत को शहादत का मरतबा पाने वाली फ़रमाया गया और यह इस्लाम में बहुत बड़ा मरतबा है। रही उसकी नापाकी तो वह उसकी मजबूरी है जिसका उस पर कोई गुनाह नहीं और मोमिन का बातिन कभी नापाक नहीं, और यह नापाकी भी खून आने से होती है ख़ून न आया हो तो ज़ाहिर से भी वह पाक है।

फ़र्ज़ी क़ब्रें और मज़ार बनाना

आजकल ऐसा काफ़ी हो रहा है कि पहले वहाँ कुछ नहीं था, अब बग़ैर किसी मुर्दे को दफ़्न किये, क़ब्र व मज़ार बना दिया गया और पूछो तो कहते हैं कि ख़्वाब में बशारत हुई है। फ़लाँ मियाँ ने ख़्वाब में आकर बताया है कि यहाँ हम दफ़्न हैं, हमारा मज़ार बनाओ। सही बात यह है कि इस तरह क़ब्र व मज़ार बनाना, उन पर हाज़िरी देना, फ़ातिहा पढ़ना, उर्स करना और चादर चढ़ाना सब हराम है। मुसलामनों को धोका देना और इस्लाम को बदनाम करना है। और ख़्वाब में मज़ार बनाने की बशारत शरअन कोई चीज़ नहीं और जिन लोगों ने ऐसे मज़ारात बना लिये हैं उनको उखाड़ देना और नाम व निशान ख़त्म कर देना बहुत ज़रूरी है।

कुछ जगह देखा गया है कि किसी बुज़ुर्ग की छड़ी, पगड़ी वग़ैरा कोई उनसे मनसूब चीज़ दफ़्न करके मज़ार बनाते हैं और कहीं किसी बुज़ुर्ग के मज़ार की मिट्टी दूसरी जगह ले जाकर दफ़्न करके मज़ार बनाते हैं, यह सब नाजाइज़ व गुनाह है। सय्यिदी आलाहज़रत फ़रमाते हैं "फ़र्ज़ी मज़ार बनाना और उसके साथ अस्ल का सा मुआमला करना नाजाइज़ व बिदअत है और ख़्वाब की बात ख़िलाफ़े शरअ् उमूर में मसमूअ्, मक़बूल नहीं हो सकती।"

(फ़तावा रज़विया जिल्द ४ सफ़ा ११५)

और जिस जगह किसी बुज़ुर्ग का मज़ार होने न होने में शक हो, वहाँ भी नहीं जाना चाहिए और शक की जगह फ़ातिहा भी नहीं पढ़ना चाहिए। कुछ जगह मज़ारात के नाम लोगों ने पतंग शाह बाबा, कुत्तेशाह बाबा, कुल्हाड़ापीर बाबा, झाड़झूड़ा शाह वग़ैरह रख लिए हैं। अगर वाक़ई वो अल्लाह वालों के मज़ार हैं

तो उनको इन बेढंगे नामों से याद करना, उनकी शान में बेअदबी और गुस्ताख़ी है, जिससे बचना ज़रूरी है। और हमारी राय में इस्लामी बुज़ुर्गों को 'बाबा' कहना भी अच्छा नहीं है क्यूँकि इसमें हिन्दुओं की बोलियों से मुशाबहत है कभी यह भी हो सकता है कि वो इन मज़ारों पर कब्ज़ा कर लें और कहें कि ये हमारे पूर्वज हैं क्यूँकि बाबा तो हिन्दू धर्मात्माओं को कहा जाता है।

औरत का कफ़न मैके वालों के ज़िम्मे लाज़िम समझना

यह एक ग़लत रिवाज़ है। यहाँ तक कि कुछ जगह मैके वाले अगर नादार व ग़रीब हों तब भी औरत का कफ़न उनको देना ज़रूरी ख़्याल किया जाता है और उनसे ज़बरदस्ती लिया जाता है और उन्हें ख़्वामख़्वाह सताया जाता है हालाँकि इस्लाम में ऐसा कुछ नहीं है।

मसअला यह है कि मय्यत का कफ़न अगर मय्यत ने माल न छोड़ा हो तो ज़िन्दगी में जिसके ज़िम्मे उसका नान व नफ़क़ा था, वह कफ़न दे और औरत के बारे में ख़ास तौर से यह है कि उसने अगरचे माल छोड़ा भी हो तो तब भी उसका कफ़न शौहर के ज़िम्मे है। (बहारे शरीअत हिस्सा ४ सफ़ा १३६)

ख़ुलासा यह है कि औरत का कफ़न या दूसरे ख़र्चे मैके वालों के ज़िम्मे ही लाज़िम ख़्याल करना और बहरहाल उनसे दिलवाना, एक ग़लत रिवाज है, जिसको मिटाना ज़रूरी है।

मय्यत के बाद और बच्चे की पैदाइश के बाद पूरे घर की पुताई सफ़ाई को ज़रूरी समझना

कुछ लोग घर में मय्यत हो जाने या बच्चा पैदा होने के बाद घर की पुताई कराते हैं और समझते हैं कि घर नापाक हो गया, उसकी धुलाई, सफ़ाई और पुताई कराना ज़रूरी है। हालांकि यह उनकी ग़लतफ़हमी है और इस्लाम में ज़्यादती है। यूँ पुताई सफ़ाई अच्छी चीज़ है, जब ज़रूरत समझें करायें लेकिन बच्चा पैदा होने या मय्यत हो जाने की वजह से उसको कराना और लाज़िम जानना जाहिलों वाली बातें हैं, जिन्हें समाज से दूर करना ज़रूरी है।

मय्यत के सर में कंघी करना

कुछ जगह मय्यत को गुस्ल देने के बाद तजहीज़ व तकफ़ीन के वक़्त उसके बालों में कंघी करने लगते हैं, यह मना है। हदीस में है कि हज़रते सय्यिदतेना आइशा सिद्दीक़ा रदियल्लाहु अन्हा से मय्यत के सर में कंघी करने के बारे में सवाल किया गया तो आपने मना फ़रमाया कि क्यूँ अपनी मय्यत को तकलीफ़ पहुँचाते हो। (फ़तावा रज़विया जिल्द ४ सफ़ा ३३, बहवाला किताब उल आसार इमाम मुहम्मद)

क्या औरत फ़ातिहा नहीं पढ़ सकती?

फ़ातिहा व ईसाले सवाब जिस तरह मर्दों के लिए जाइज़ है उसी तरह बिला शक औरतों के लिए भी जाइज़ है। लेकिन बाज़ औरतें बिला वजह परेशान होती हैं और फ़ातिहा के लिए बच्चों को इधर उधर दौड़ाती हैं। हालाँकि वह खुद भी फ़ातिहा पढ़ सकती

हैं। कम अज़ कम अल्हम्द शरीफ़ और .कुल हुवल्लाह शरीफ़ अक्सर औरतों को याद होती हैं। इसको पढ़कर ख़ुदाए तआ़ला से दुआ करें कि या अल्लाह इसका सवाब और जो कुछ खाना या शीरीनी है उसको खिलाने और बाँटने का सवाब फ़लाँ फ़लाँ और फ़लाँ जिसको सवाब पहुँचाना हो, उसका नाम लेकर कहें उसकी रूह को अता फ़रमा दे। यह फ़ातिहा हो गई और बिल्कुल दुरुस्त और सही होगी।

बाज़ औरतें और लड़कियाँ कुछ जाहिल मर्दों और कठमुल्लाओं से ज़्यादा पढ़ी लिखी और नेक पारसा होती हैं। ये अगर उन जाहिलों के बजाय ख़ुद ही .कुर्आन पढ़कर ईसाले सवाब करें तो बेहतर है।

कुछ औरतें किसी बुज़ुर्ग की फ़ातिहा दिलाने के लिए खाना वग़ैरह कोने में रखकर थोड़ी देर में उठा लेती हैं और कहती हैं कि उन्होंने अपनी फ़ातिहा ख़ुद ही पढ़ ली। ये सब बेकार की बातें हैं जो जहालत की पैदावार हैं। इन ख़्वामख़्वाह की बातों की बजाय उन्हें .कुर्आन की जो भी आयत याद हो, उसको पढ़कर ईसाले सवाब कर दें तो यही बेहतर है और यह बाक़ाइदे फ़ातिहा है।

हाँ इस बात का ख़्याल रखें कि मर्द हो या औरत उतना ही .कुर्आन पढ़ें जितना सही याद हो और सही मख़ारिज से पढ़ें ग़लत पढ़ना हराम है और ग़लत पढ़ने का सवाब न मिलेगा और जब सवाब मिला ही नहीं तो फ़िर बख़्शा क्या जाएगा। आजकल इस मसअले से अवाम तो अवाम बाज़ ख़वास भी लापरवाही बरतते हैं।
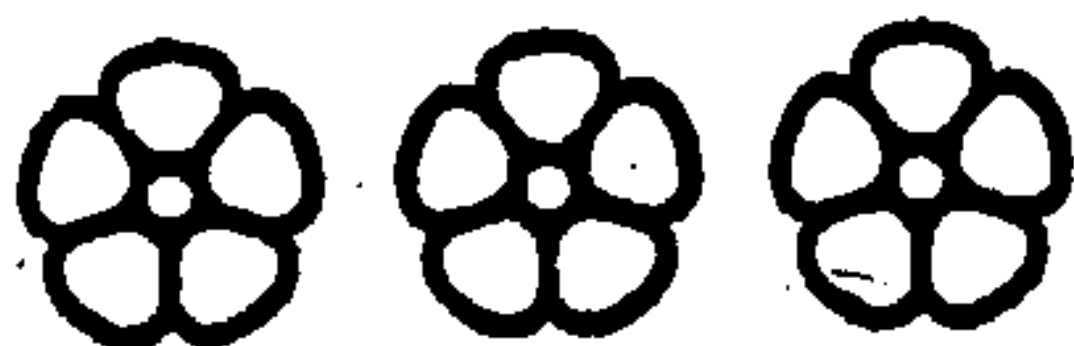
ज़िन्दगी में क़ब्र व मज़ार बनवाना

कुछ लोग अपनी ज़िन्दगी में क़ब्र तय्यार कराते हैं, यह मुनासिब नहीं। अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है :-

وَمَا تَدْرِىْ نَفْسٌ بِاَىِّ اَرْضٍ تَمُوْتُ

तर्जमा : कोई नहीं जानता कि वह कहाँ मरेगा।

क़ब्र तय्यार रखने का शरअ़न हुक्म नहीं अलबत्ता कफ़न सिलवा कर रख सकता है कि जहाँ कहीं जाये अपने साथ ले जाये और क़ब्र हमराह (साथ) नहीं जा सकती।

(अलमलफ़ूज़ हिस्सा अव्वल सफ़ा ६६)

कुछ ख़ानक़ाहियों को देखा कि वह ज़िन्दगी में पक्का मज़ार बनवा लेते हैं। यह रियाकारी है गोया कि उनको यह यक़ीन है कि वह अल्लाह के वली और बुज़ुर्ग व बेहतर बन्दे हैं और इस मरतबे को पहुँचे हुए हैं कि आ़म लोगों की तरह कच्ची क़ब्रें नहीं बल्कि उन्हें ख़ूबसूरत मज़ार में दफ़्न होना चाहिए। हालाँकि सच्चे वलियों का तरीक़ा यह रहा है कि वह ख़ुद को गुनाहगार ख़्याल करते थे, जो ख़ुद को वली ख़्याल करते और अपनी विलायत के ऐलान करते फिरते हैं, ये लोग औलियाए किराम की रविश पर नहीं हैं।

पीराने पीर सय्यिदिना ग़ौसे आज़म शैख़ अ़ब्दुल क़ादिर जीलानी रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु से बड़ा बुज़ुर्ग व वली हज़ार साल में न कोई हुआ और न क़ियामत तक होगा। उनके बारे में हज़रते सूफ़ी ज़माँ शैख़ मुसलेहुद्दीन सअ़दी शीराज़ी नक़ल करते हैं कि उनको ह़रमे कअ़बा में लोगों ने देखा कि कंकरियों पर सर रख कर ख़ुदाए तआ़ला की बारगाह में अर्ज़ कर रहे थे:-

"ऐ परवरदिगार अगर मैं सज़ा का मुस्तहक़ हूँ तो तू मुझको

क़ियामत के रोज़ अन्धा करके उठाना ताकि नेक आदमियों के सामने मुझको शर्मिन्दगी न हो।" (गुलिस्ताँ बाब २ सफ़ा ६७)

बाज़ सहाबए किराम के बारे में आया है कि वह यह दुआ करते थे "ऐ अल्लाह मुझे जब मौत आये तो या जगल का कोई दरिन्दा मुझे फाड़ कर खा जाये या कहीं समुद्र में डूब कर मर जाऊँ और मछलियों की गिज़ा हो जाऊँ।"

यअ़नी वह शोहरत से बचना चाहते थे और नाम व नमूद के बिल्कुल रवादार न थे और यही अस्ल फ़क़ीरी व दुरवेशी है, और आजकल के फ़क़ीरों को अपने मज़ारों की फ़िक्र पड़ी है।

साहिबो! चाहने मानने वाले मुरीदीन व मोअ़तक़दीन (अक़ीदत रखने वाले) बनाने और बढ़ाने और मज़ार व क़ब्र को उ़म्दा व ख़ूबसूरत बनाने या बनवाने से ज़्यादा आख़िरत की फ़िक्र करो। ख़ुदा व रसूल को राज़ी करो। मुरीदीन व मुअ़तक़दीन की कसरत और मज़ार की उम्दगी और संगेमरमर की टुकड़ियाँ अज़ाबे इलाही और क़ब्र की पिटाई से बचा नहीं सकेंगी अगर आप के कारनामों और ढंगों से ख़ुदा व रसूल नाराज़ हैं।

ऐसी फ़क़ीरी व सज्जादगी से भी क्या फ़ाइदा कि क़ब्र के अन्दर आपकी बदअमलियों या बदएतक़ादियों और रियाकारियों की वजह से पिटाई होती हो और मज़ार पर मुरीदीन चादरें चढ़ाते, फूल बरसाते और धूम धाम से उर्स मनाते हों।

कोशिश इस बात की करो कि मुरीद हों या न हों, मज़ार बने या न बने, चादरें चढ़ें या न चढ़ें, उर्स हो या न हो लेकिन क़ब्र में आपको राहत मिलती हो और जन्नत की खिड़की खुलती हो ख़्वाह ऊपर से क़ब्र कच्ची हो और यह नेमत हासिल होगी, ख़ुदा व रसूल के हुक्म पर चलने से।

मज़ारात पर हाज़िरी का तरीक़ा

औरतों को तो मज़ारात पर जाने की इजाज़त नहीं मर्दों के लिए इजाज़त है मगर वह भी चन्द उसूल के साथ :

(१) पेशानी ज़मीन पर रखने को सज्दा कहते हैं यह अल्लाह तआला के अलावा किसी के लिए हलाल नहीं किसी बुज़ुर्ग को उसकी ज़िन्दगी में या मौत के बाद सज्दा करना हराम है। कुछ लोग मज़ारात पर नाक और पेशानी रगड़ते हैं यह बिल्कुल हराम है।

(२) मज़ारात का तवाफ़ करना यानी उसके गिर्द ख़ानाए काबा की तरह चक्कर लगाना भी नाजाइज़ है।

(३) अज़ रूए अदब कम से कम चार हाथ के फ़ासिले पर खड़ा होकर फ़ातिहा पढ़े चूमना और छूना भी मुनासिब नहीं।

(अहकामे शरीअत, सफ़हा २३४)

(४) मज़ामीर के साथ क़व्वाली सुनना हराम है तफ़सील के लिए देखिये : फ़तावा रज़विया, जिल्द १०, सफ़हा ५४ से ५६

कुछ लोग समझते हैं कि सज्दा बग़ैर नियत और काबे की तरफ़ मुतवज्जेह हुए नहीं होता। यह भी जाहिलाना ख़्याल है सज्दे में जिसकी ताज़ीम या इबादत की नियत होगी उसको सज्दा माना जाएगा। और जो सज्दा अल्लाह की इबादत की नियत से किया जाएगा वह अल्लाह तआला के लिए होगा और जो मज़ारात पर या किसी भी ग़ैरे ख़ुदा के सामने किया जाए वह उसी के लिए होगा। ख़ुलासा यह कि ज़मीन पर किसी बन्दे के सामने सर रखना हराम है। यूंही बक़दरे रुकूअ झुकना भी मना है हाँ हाथ बाँध कर खड़ा होना जाइज़ है।

क़ब्रिस्तानों में चिराग़ व मोमबत्ती जलाने और अगरबत्ती या लोबान सुलगाने का मसअला

शबे बरात वग़ैरा के मौक़े पर क़ब्रिस्तानों में चिराग़ बत्तियां की जाती हैं। इस बारे में यह जान लेना ज़रूरी है कि बिल्कुल ख़ास क़ब्र के ऊपर चिराग़ व मोमबत्ती जलाना लोबान व अगरबत्ती सुलगाना मना है। क़ब्र से अलाहिदा किसी जगह एसा करना जाइज़ है जबकि इन चीज़ों से वहाँ आने जाने और कुर्आन शरीफ़ और फ़ातिहा वग़ैरा पढ़ने वालों को या राहगीरों को नफ़ा पहुँचने की उम्मीद हो। यह ख़्याल करना कि इस की रोशनी और ख़ुशबू क़ब्र में जो दफ़न हैं उनको पहुँचेगी, जहालत, नादानी, नावाक़िफ़ी और ग़लतफ़हमी है। दुनिया की रोशनियां, सजावटें और डेकोरेशन वग़ैरा जो क़ब्रिस्तानों में करते हैं और यह ख़ुशबूएं मुर्दों को नहीं पहुँचतीं, मुर्दों को सिर्फ़ सवाब ही पहुँचता है। मुर्दा अगर जन्नती है तो उसके लिए जन्नत की ख़ुशबू और रौशनी काफ़ी है। और जहन्नमी के लिए कोई रोशनी है न ख़ुशबू। (सही मुस्लिम जिल्द १, सफ़हा ७६, फ़तावा रज़विया, जिल्द ४, सफ़हा १४१)

मज़ार पर चादर चढ़ाना कब जाइज़ है?

अल्लाह तआला के नेक और ख़ास बन्दे जिन्हें औलियाए किराम कहा जाता है। उनके इन्तिक़ाल के बाद उनकी मुक़द्दस क़ब्रों पर चादर डाल देना जाएज़ है। इस चादर चढ़ाने में एक मसलिहत यह है कि इस तरह उनकी मुबारक क़ब्रों की पहचान हो जाती है कि यह किसी अल्लाह वाले की क़ब्र है और अल्लाह के नेक बन्दों की इज़्ज़त करना जिस तरह उनकी दुनयवी ज़िन्दगी

में ज़रूरी है उनके विसाल के बाद भी उनका अदब व इहतिराम ज़रूरी है और मज़ारात पर चादर चढ़ाना भी अदब व इहतिराम है और दूसरों से अलग उनकी पहचान बनाना है जो लोग औलियाए किराम के मज़ारात पर चादर चढ़ाने को नाजाइज़ व गुनाह कहते हैं वह ग़लती पर हैं। लेकिन इस बारे में मसअला यह है कि एक चादर जो मज़ार पर पड़ी हो जब तक वह पुरानी और ख़राब न हो जाए दूसरी चादर न डाली जाए मगर आजकल अकसर जगह मज़ारों पर इसके ख़िलाफ़ हो रहा है। फटी पुरानी और ख़राब तो दूर की बात है मैली तक नहीं होने देते और दूसरी चादर डाल देते हैं। कुछ जगह तो दो चार मिनट भी चादर मज़ार पर नहीं रह पाती। इधर डाली और उधर उतरी यह ग़लत है और अहले सुन्नत के मज़हब के ख़िलाफ़ है। इस तरह चादर चढ़ाने के बजाए उस चादर की क़ीमत से मुहताजों व मिस्कीनों को खाना खिला दे या कपड़ा पहना दे या किसी ग़रीब मरीज़ का इलाज करा दे किसी ज़रूरतमन्द का काम चला दे, किसी मस्जिद या मदरसे की ज़रूरत में ख़र्च कर दे, कहीं मस्जिद न हो तो वहाँ मस्जिद बनवा दे और इन सब कामों में उन्हीं बुर्जुग के ईसाले सवाब की नियत कर ले जिनके मज़ार पर चादर चढ़ाना थी तो यह उस चादर चढ़ाने से बेहतर है। हाँ अगर यह मालूम हो कि मज़ार पर चढ़ाई हुई चादर उतरने के बाद ग़रीबों मिस्कीनों और मुहताजों के काम में आती है तो मज़ार पर चादर चढ़ाने में भी कुछ हर्ज नहीं क्यूँकि यह भी एक तरह का सदक़ा और ख़ैरात है लेकिन आजकल शायद ही कोई ऐसा मज़ार होगा जिसकी चादरें ग़रीबों और मिस्कीनों के काम में आती हों बल्कि मुजावरीन और सज्जादगान उन पर क़ब्ज़ा कर लेते हैं और यह सब अकसर मालदार होते हैं।

खुलासा यह है कि आजकल मज़ारात पर जब एक चादर पड़ी हो तो वहाँ दूसरी चादर चढ़ाने से बुज़ुर्गों के ईसाले सवाब के लिए सदक़ा व ख़ैरात करना ग़रीबों मिस्कीनों और मुहताजों के

काम चलाना अच्छा है और यही मज़हबे अहले सुन्नत और उलामाए अहले सुन्नत का फ़तवा है।

आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत मौलाना अहमद रज़ा ख़ाँ बरेलवी अलैहिर्रहमत फ़रमाते हैं :-

"और जब चादर मौजूद हो और वह अभी पुरानी या ख़राब न हुई कि बदलने की हाजत हो तो चादर चढ़ाना .फ़ुज़ूल है बल्कि जो दाम इसमें ख़र्च करें वली अल्लाह की रूहे मुबारक को ईसाले सवाब के लिए मौहताज को दें। हाँ जहाँ मअमूल हो कि चढ़ाई हुई चादर जब हाजत से ज़ाएद हो खुद्दाम मसाकीन हाजतमन्द ले लेते हैं और इस नियत से डालें तो कोई बात नहीं कि यह भी सदक़ा हो गया।" (अहकामे शरीअत हिस्सा अव्वल सफ़ा ७२)

और अगर ऐसी जगह जहाँ पहले से चादर मौजूद हो और वह बोसीदा और ख़राब न हुई हो चादर चढ़ाने की मन्नत मानी हो तो उस मन्नत को पूरा करना ज़रूरी नहीं। और ऐसी मन्नत मानना भी नहीं चाहिए।

एतिकाफ़ में चुप रहना

कुछ लोग एतिकाफ़ में चुपचाप बैठे रहने को ज़रूरी समझते हैं हालांकि एतिकाफ़ में चुप रहना न ज़रूरी, न महज़ ख़ामोशी कोई इबादत। बल्कि चुप रहने को सवाब की बात समझना मक़रूहे तहरीमी है। (बहारे शरीअ़त, हिस्सा ५, सफ़हा १५३)

अलबत्ता बुरी बातों से चुप रहना ज़रूरी है। ख़ुलासा यह कि एतिकाफ़ की हालत में क़ुर्आन मजीद की तिलावत करे, तसबीह व दुरूद का विर्द रखे, नफ़्ल पढ़े, दीनी किताबों का मुतालआ़ करे, दीन की बातें सीखने और सिखाने में कोई हरज नहीं बल्कि इबादत है। ज़रूरत के वक़्त कोई दुनिया की जाइज़ बात भी की जा सकती है। इससे एतिकाफ़ फ़ासिद नहीं होगा। हाँ ज़्यादा दुनियावी बातचीत से एतिकाफ़ बेनूर हो जाता है और सवाब कम हो जाता है।

रेडियो, तार, टेलीफ़ोन की ख़बर पर बग़ैर शरई सुबूत के चाँद मान लेना

आजकल काफ़ी लोग सिर्फ़ रेडियो, तार, टेलीफ़ोन की ख़बर पर बग़ैर चाँद देखे या बग़ैर शरई सुबूत के ईद मना लेते हैं या रमज़ान शरीफ़ का चाँद हो तो रोज़ा रख लेते हैं, यह ग़लत है। अगर आसमान पर धुन्ध, गुबार या बादल हो तो रमज़ान के चाँद के लिए एक और ईद के चाँद के लिए दो बा शरअ़ दीनदार भले मर्दों की गवाही ज़रूरी है। आसमान साफ़ हो तो बहुत से लोगों का चाँद देखना ज़रूरी है एक दो की गवाही काफ़ी नहीं महज़ रेडियो, तार व टेलीफ़ोन की ख़बर पर न रोज़ा रखें न ईद मनायें जब तक कि आप की बस्ती में शरई तौर पर चाँद का सबूत न हो या दूसरी बस्ती में चाँद देखा गया हो और शरई तौर पर इस की इत्तिला आप तक न आ गई हो। रेडियो, टेलीफ़ोन पर ईद मनाई जाए तो आजकल पूरी दुनिया में एक ही दिन ईद होना चाहिए और हमेशा ईद का चाँद २६ दिन का ही होना चाहिए क्यूंकि दुनिया में ईद का चाँद कहीं न कहीं २६ का ज़रूरी हर साल मान लिया जाता है और आजकल पूरी दुनिया में इसकी ख़बर हो जाना बज़रिए रेडियो, टेलीफ़ोन एक आम व आसान सी बात है तो रोज़े कभी ३० हो ही नहीं सकते।

सऊदी अरब मे भी अमूमन हिन्दुस्तान से हमेशा एक दिन पहले ईद मनाई जाती है तो रेडियो, टेलीफ़ोन पर अक़ीदा रखने वाले वहाँ के ऐलान पर ईद क्यूं नहीं मनाते? देहली के ऐलान पर क्यूं मनाते हैं? इस्लामाबाद, कराची, लाहौर, ढाका और रंगून की इत्तिलाआ़त क्यूं नज़र अन्दाज़ कर दी जाती हैं?

अगर कोई यह कहे वह दूसरे मुल्क हैं तो हम पूछते हैं यह मुल्कों के तक़सीम और बटवारे क्या कुर्आन व हदीस की रू से हैं? क्या खुदा व रसूल ने कर दिये हैं या आजकल की मौजूदा सियासत और अक़वामे मुत्तहिदा की तरफ़ से हैं? और अक़वामे मुत्तहिदा की तक़सीम की शरीअ़ते इस्लामिया में क्या कोई हैसियत है? यह भी तो हो सकता है कि कोई क़ौमी हुकमरां खुदाए तआ़ला पैदा फ़रमाये और वह इन सब मुल्कों को फ़तेह करके सब को एक ही मुल्क बना डाले और ऐसा हुआ भी है।

और अगर जवाबन कोई कहे कि मुल्क दूसरा और दूरी ज़्यादा होने की बिना पर मतलअ़ अलग अलग है तो ख़्याल रहे कि इख़्तिलाफ़े मतालेअ़ मोतबर नहीं और अगर बिल फ़र्ज़ मान भी लीजिये तो हिन्दुस्तान के वह शहर और इलाक़े जो अपने मुल्क के शहरों देहली, मुम्बई और कलकत्ता वग़ैरा से दूर हैं और दूसरे मुल्कों पाकिस्तान, बंगलादेश, बर्मा, चीन, तिब्बत, लंका, नेपाल के बाज़ शहरों से क़रीब हैं तो उन्हें आप चाँद के मामले में कहाँ की पैरवी करने का मशवरा देंगे, अपने मुल्क की या जिन मुल्कों और शहरों से वह क़रीब हैं वहाँ की? और वह मतलअ़ के बारे में देहली, मुम्बई और कलकत्ता की मुवाफ़िक़त करेंगे या दूसरे मुल्कों के अपने से क़रीब इलाक़ों की?

ख़ुलासा यह कि बग़ैर शरई सुबूत के महज़ रेडियो, तार व टेलीफ़ोन की ख़बरों पर चाँद के मामले में एतिबार करना इस्लाम व कुर्आन व हदीस के मुतलक़न ख़िलाफ़ है।

फ़तावा आलमगीरी मिसरी, जिल्द ३, सफ़हा ३५७ में है :

"पर्दे के पीछे से अगर कोई शख़्स गवाही दे तो उसकी गवाही मोतबर नहीं क्यूंकि एक आवाज़ दूसरी आवाज़ की तरह होती है।"

तो रेडियो और टेलीफ़ोन पर बोलने वाला तो हज़ारों लाखों पर्दों, आड़ों के पीछे है उसकी गवाही क्यूं मोतबर होगी?

फिर यह कि अगर आप की बस्ती में २६ का चाँद न हुआ और किसी जगह हो गया और आप तक शरअ़न इत्तिला न आई आपने रोज़ा न रखा या ईद का चाँद है और ईद न मनाई बल्कि रोज़ा रखा तो आप पर हरगिज़ कोई गुनाह व अज़ाब नहीं क्यूंकि अज़ाब व सवाब की कुंजी अल्लाह तआ़ला के दस्ते कुदरत में है।

लिहाज़ा आप वह कीजिये जिसका उसने हुक्म दिया है और उतना कीजिये जितना उसने फ़रमाया है। हदों से आगे मत बढ़िये और रेडियो, टेलीफ़ोन सुन सुन कर शोर मत मचाइये, कूद फाँद मत कीजिये। जाने दीजिये पूरी दुनिया में ईद हो जाए अगर आप तक शरई इत्तिला नहीं है आप रोज़ा रखिये आप से बरोज़े क़ियामत कोई पुरसिश न होगी फिर फ़िक्र की क्या ज़रूरत है। फ़िक्र तो उसकी कीजिये जिसके बारे में क़ब्र व हश्र में सवाल होगा।

हदीस शरीफ़ में रसूलुल्लाह ﷺ इरशाद फ़रमाते हैं कि महीना कभी २६ का हो जाता है तो जब तक चाँद न देखो रोज़ा न रखो और अगर तुम्हारे सामने अब्र या गुबार आ जाए तो ३० दिन की गिनती पूरी करो।

(बुख़ारी व मुस्लिम; मिश्कात, सफ़हा १७४)

ग़ौर करने का मक़ाम है कि मौजूदा दौर की कचहरियों में भी जज और हाकिम गवाहों को सामने बुला कर गवाही लेते हैं अगर कोई घर बैठे टेलीफ़ोनों के ज़रिए गवाही दे दे तो हरगिज़ न मानेंगे। तो शरई अहकाम और शहादतों की आख़िर आपकी निगाह में कोई अहमियत है या नहीं, जिन्हें आप तार, टेलीफ़ोन और रेडियो के हवाले किये दे रहे हैं। खुदाए तआ़ला का ख़ौफ़ खाइये और आप दीनदार बनने की कोशिश कीजिये, दीन का ठेकेदार बनने की कोशिश मत कीजिये। वह जिस का काम है उस पर छोड़ दीजिये और अपनी अपनी बस्ती के उलमा और इमाम जो अहले हक़ हों उनकी बात पर अमल कीजिये।

क्या इन्जेक्शन लगवाने से रोज़ा टूट जाता है?

इन्जेक्शन चाहे गोश्त में लगवाया जाये या रग में, इससे रोज़ा नहीं टूटता। अलबत्ता उलेमाए किराम ने रोज़े में इन्जेक्शन लगवाने को मकरूह फ़रमाया।

लिहाज़ा जब तक ख़ास ज़रूरत न हो न लगवायें। इस मसअले की तफ़सील व तहक़ीक़ जानने के लिए देखिए :-

फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल जिल्द १ सफ़ा ५१७, फ़तावा मरकज़ी दारुल इफ़्ता सफ़ा ३५६

क्या रमज़ान की रातों में शौहर और बीवी का हमबिस्तर होना गुनाह है?

अ़वाम में कुछ लोग ऐसा ख़्याल करते हैं हालाँकि यह उनकी ग़लतफ़हमी है। माहे रमज़ान में इफ़्तार के वक़्त से ख़त्मे सहरी तक रात में जिस तरह खाना पीना जाइज़ है, उसी तरह बीवी और शौहर का हमबिस्तर होना और सुहबत व मुजामअ़त बिला शक जाइज़ है और बकसरत अहादीस से साबित है बल्कि .क़ुर्आन शरीफ़ में ख़ास इसकी इजाज़त के लिए आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई गई।

इरशादे बारी तआ़ला है :-

اُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ الرَّفَثُ اِلٰى نِسَائِكُمْ هُنَّ لِبَاسٌ لَّكُمْ وَ اَنْتُمْ لِبَاسٌ لَّهُنَّ

तर्जमा : तुम्हारे लिए रोज़े की रातों में औरतों से सुहबत हलाल की गई वो तुम्हारे लिए लिबास हैं तुम उनके लिए लिबास।

(पारा २ रुकूअ़ ७)

क्या नापाक रहने से रोज़ा टूट जाता है?

अगर कोई शख़्स रोज़ा रखकर दिन में नापाक रहे और इस नापाकी की वजह से उसकी नमाज़ छूटती है तो उसके ऊपर नमाज़ छोड़ने का गुनाहे अज़ीम होगा क्यूँकि फ़र्ज़ नमाज़ छोड़ना इस्लाम में बड़ा गुनाह और जहन्नम का रास्ता है।

लेकिन इस नापाकी का उसके रोज़े पर कोई असर नहीं पड़ेगा यअ़नी रोज़ा हो जायेगा। यह ख़्याल करना कि नापाकी की हालत में रोज़ा नहीं होगा, ग़लतफ़हमी है। पाक रहना नमाज़ के लिए शर्त है, रोज़े के लिए नहीं चाहे दिन भर नापाक रहे तब भी रोज़ा बाक़ी रहेगा, लेकिन यह नापाक रहना मोमिन की शान नहीं क्यूँकि इस तरह नमाज़ें क़ज़ा होंगी।

अहादीसे करीमा की रोशनी में इस मसअले की तहक़ीक़ व तफ़सील जिसे देखना हो वह फ़तावा रज़विया जिल्द न० ४ सफ़ा ६१५ को देखे।

रोट बोट का रोज़ा

कुछ जगहों पर रजब की १७ तारीख़ को रोज़ा रखते हैं और उसे रोट बोट का रोज़ा कहते हैं। ख़ास तौर से इस दिन रोज़ा रखने का शरीअ़ते इस्लामिया में कोई हुक्म नहीं। नफ़्ल रोज़ा साल में ममनूअ़ दिनों को छोड़ कर कभी भी रखा जा सकता है। १७ रजब को रोज़े के लिए मख़सूस करके उसे रोट बोट का रोज़ा कहना मख़सूस वज़न की छोटी बड़ी दो रोटियाँ और बोटियाँ पकाना, छोटी फ़ातिहा पढ़ने वाले को और बड़ी रोज़ेदार को खिलाना बे अस्ल और गढ़ी हुई बातें हैं।

हज़रत अली मुश्किल कुशा और सोलह सय्यिदों का रोज़ा

कुछ जगह औरतें अली मुश्किल कुशा का रोज़ा रखती हैं। तो रोज़ा हो या कोई इबादत सब अल्लाह के लिए ही होती हैं। हाँ अगर यह नियत कर ली जाए कि इस का सवाब हज़रते अली की रूहे पाक को पहुँचे तो यह अच्छी बात है। लेकिन इस रोज़े में इफ़्तार आधी रात में करती हैं और घर का दरवाज़ा खोल कर दुआ मांगती हैं। यह सब खुराफ़ात और वाहिया और वहमपरस्ती की बातें हैं। (फ़तावा रज़विया, जिल्द ४, सफ़हा ६६०)

यूँ ही १६ रजब को सोलह सय्यिदों को रोज़ा रखा जाता हैं। उसमें जो कहानी पढ़ी जाती है, वह गढ़ी हुई है।

ज़कात से मुतअ़ल्लिक़ कुछ ग़लतफ़हमियाँ

कुछ लोग फ़कीरों, मस्जिदों, मदरसों को यूंही देते रहते हैं और बाक़ाइदा ज़कात नहीं निकालते उनसे कहा जाता है कि आप ज़कात निकालिये तो कह देते हैं कि हम वैसे ही राहे ख़ुदा में काफ़ी ख़र्च करतेरहते हैं यह उनकी सख़्त ग़लतफ़हमी है आप हज़ार राहे खुदा में ख़र्च कर दें लेकिन जब तक हिसाब करके नियते ज़कात से ज़कात अदा नहीं करेंगे आप के यह इख़राजात जो राहे ख़ुदा ही में आप ने किये हैं यह ज़कात न निकालने के अज़ाब व वबाल से आपको बचा नहीं सकेंगे।

हदीस शरीफ़ में है कि जिसको अल्लाह तआ़ला माल दे और वह उसकी ज़कात अदा न करे तो क़ियामत के दिन वह माल गंजे सांप की शक्ल में कर दिया जाएगा जिसके सर पर दो चोटियां होंगी वह सांप उनके गले में तौक़ बना कर डाल दिया

जाएगा। फिर उसकी बांछें पकड़ेगा और कहेगा मैं तेरा माल हूँ मैं तेरा ख़ज़ाना हूँ। ख़ुलासा यह कि राहे ख़ुदा में ख़र्च करने के जितने तरीक़े हैं उनमें सब से अव्वल ज़कात है, नियाज़ नज़्र और फ़ातिहायें वग़ैरा भी उसी माल से की जायें जिसकी ज़कात अदा की गई हो। वरना वह क़ाबिले क़बूल नहीं। अपनी ज़कात् ख़ुद खाते रहना और राहे ख़ुदा में ख़र्च करने वाले बनना बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी है और शैतान का धोका है। इस मसअले की ख़ूब तहक़ीक़ और तफ़सील देखना हो तो आलाहज़रत इमाम अहमद रज़ा ख़ाँ बरेलवी की तसनीफ़ "अअज़्ज़ुल इकतिनाह" का मुतालआ कीजिये। ज़कात सिर्फ़ साल में एक बार निकलती है और वह एक हज़ार में सिर्फ़ २५ रुपये है जो कि साहिबे निसाब पर निकालना फ़र्ज़ है। मसाइले ज़कात उलमा से मालूम किये जायें और बाक़ाइदा ज़कात निकाली जाए। ताकि नियाज़ व नज़्र और सदक़ा व ख़ैरात भी क़बूल हो सकें।

तीन तलाक़ों का रिवाज

आजकल अज़ रूए जहालत व नादानी अपनी औरतों को तीन या उससे ज़्यादा तलाक़ें दे डालते हैं या काग़ज़ों में लिखवा देते हैं और फिर कभी बात को दोबारा बनाने के लिए उसकी सज़ा यानी हलाले से बचने के लिए झूट, सच बोलते और मुफ़्तियाने किराम और उलमाए दीन को परेशान करते हैं।

काश यह लोग तलाक़ से पहले ही उलमा से मशवरा कर लें तो यह नौबत ही न आए। तीन तलाक़ें एक वक़्त देना गुनाह है। तलाक़ का मक़सद सिर्फ़ यह है कि बीवी को अपने निकाह से बाहर करके दूसरे के लिए हलाल करना कि इद्दत के बाद वह किसी और से निकाह कर सके यह मक़सद सिर्फ़ एक तलाक़ या दो से भी हासिल हो जाता है। एक तलाक़ देकर उसको इद्दत गुज़ारने के लिए छोड़ दिया जाए और इद्दत के अन्दर उसको एक

अजनबी व ग़ैर औरत की तरह रखा जाए और ज़बान से भी रजअ़त न की जाए तो इद्दत के बाद वह दूसरे से भी निकाह कर सकती है और पहले शौहर के निकाह में भी सिर्फ़ निकाह करने से, बग़ैर हलाले के वापस आ सकती है। और तीन तलाक़ों के गुनाह व वबाल से भी बचा जा सकता है। ज़रूरत के वक़्त तलाक़ इस्लाम में मशरूअ़ है क्यूंकि मियां बीवी का रिश्ता कोई पैदाइशी ख़ूनी और फ़ितरी रिश्ता नहीं होता बल्कि यह तअ़ल्लुक़ अमूमन जवानी में क़ाइम होता है। तो यह ज़रूरी नहीं कि यह महब्बत क़ाइम हो ही जाए बल्कि मिज़ाज अपने अपने आदतें अपनी अपनी तौर तरीक़े अपने अपने ख़्यालात व रुजहानात अलग अलग होने की सूरत में बजाए महब्बत के नफ़रत पैदा हो जाती है और एक दूसरे के साथ ज़िन्दगी गुज़ारना निहायत मुश्किल बल्कि कभी कभी नामुमकिन हो जाता है। और नौबत रात दिन के झगड़ों, मारपीट यहाँ तक कि कभी क़त्ल व ख़ूंरेज़ी तक आ जाती है। बीवी शौहर एक दूसरे के लिए जानी दुश्मन बन जाते हैं तो इन हालात के पेशे नज़र इस्लाम में तलाक़ रखी गई कि लड़ाईयों, झगड़ों, नफ़रतों और मारका आराईयों के बजाए सुलह व सफ़ाई और हुस्न व ख़ूबी के साथ अपना अपना रास्ता अलग अलग कर लिया जाए।

इसी लिए जिन मज़हबों और धर्मों में तलाक़ नहीं है यानी जिसके साथ जो बँध गया वह हमेशा के लिए बँध गया जान छुड़ाने का कोई रास्ता नहीं। उनमें औरतों के क़त्ल तक कर दिये जाते हैं या ज़िन्दगी चैन व सुकून के बजाए अज़ाब बनी रहती है। आज औरतों की हमदर्दी के नाम पर कुछ इस्लाम दुश्मन ताक़तें ऐसे क़ानून बना रही हैं जिनकी रू से तलाक़ का वुजूद मिट जाए और कोई तलाक़ न दे सके यह लोग औरतों के हमदर्द नहीं बल्कि उनका क़त्ल कर रहे हैं। आज मिट्टी के तेल बदन पर

डाल कर औरतों को जलाने, पानी में डुबोने, ज़हर खिला कर उनको मारने वग़ैरा ईज़ारसानी के ख़ौफ़नाक वाक़िआत के ज़िम्मेदार वही लोग हैं जो किसी भी सूरते हाल में तलाक़ के रवादार नहीं और जब से हर हाल में तलाक़ को ऐब और बुरा जानने का रिवाज बढ़ा तभी से ऐसे दर्दनाक वाक़िआत की तादाद बढ़ गई।

हम पूछते हैं क्या किसी औरत को मारना, जलाना, डुबोना, बेरहमी से पीटना बेहतर है या उसको महर की रक़म देकर साथ इज़्ज़त के तलाक़ दे देना और किसी औरत के लिए अपने शौहर को किसी तरह राज़ी करके उस से तलाक़ हासिल कर लेना और अपनी आज़ादी कराके किसी और से निकाह कर लेना बेहतर है या यारों, दोस्तों, आशनाओं से मिल क़र शौहर को क़त्ल कराना। आज इस क़िस्म के वाक़िआत व हादसात की ज़्यादती है जिनका अन्दाज़ा अख़बारात का मुतालआ करने से होता है और अगर मुआशरे को बरक़रार रखने के लिए इस्लाम ने शौहर और बीवी के जो हुकूक़ बताए हैं उन पर अमल किया जाए तो यह नौबतें न आयें और लड़ाई झगड़े और तलाक़ तक बात ही न पहुँचे।

शरअ़ पयम्बरी महर मुक़र्रर करना

कभी कभी कुछ जगहों पर निकाह में महर शरअ़ पयम्बरी मुक़र्रर किया जाता और उस से उनकी मुराद चौंसठ रुपए और दस आने होती है या कोई और रक़म। हालांकि यह सब बे अस्ल बातें हैं, शरीअ़ते पैग़म्बरे आज़म ﷺ ने महर में ज़्यादती की कोई हद मुक़र्रर नहीं है जितने पर दोनों फ़रीक़ मुत्तफ़िक़ हो जायें वही महर शरए पयम्बरी है हाँ कम से कम महर की मिक़दार दस दिरहम यानी तक़रीबन दो तोले तेरह आने भर चांदी है उस से कम महर सही नहीं अगर बाँधा गया तो महरे मिस्ल लाज़िम

आएगा। और बाज़ लोग महर शरअ़ पयम्बरी से सय्यिदतुना फ़ातिमा रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हा के अक़्दे मुबारक का महर ख़्याल करते हैं हालांकि ख़ातूने जन्नत के निकाहे मुबारक का महर चार सौ मिस्काल यानी डेढ़ सौ तोले चांदी था।

खुलासा यह कि शरअ़ की तरफ़ से महर की कोई रक़म मुक़र्रर नहीं की गई। हाँ यह ज़रूर है कि दस दिरहम यानी दो तोले तेरह आने भर चांदी से कम क़ीमत में न हो।

निकाह पढ़ाने में ईजाब व क़बूल के बाद खुतबा पढ़ना

यह रिवाज भी ग़लत है। सुन्नत यह है कि ख़ुतबए निकाह ईजाब व क़बूल से पहले पढ़ा जाए।

क्या तलाक़ के लिए औरत का सामने होना या सुनना ज़रूरी है?

कुछ लोग समझते हैं कि शौहर अगर बीवी को तलाक़ दे तो तलाक़ के अलफ़ाज़ का औरत के लिए सुनना और औरत का तलाक़ के वक़्त सामने होना ज़रूरी है, यह ग़लतफ़हमी है। औरत अगर न सुने और वहाँ मौजूद भी न हो तब भी शौहर के तलाक़ देने से तलाक़ हो जायेगी चाहे शौहर और बीवी में हज़ारों मील का फ़ासिला हो।

आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत सय्यिदी शाह अहमद रज़ा ख़ाँ साहब रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु इरशाद फ़रमाते हैं :-

"तलाक़ के लिए औरत का वहाँ हाज़िर होना कोई शर्त नहीं।" فانه ازالة لا عقد كما لا يخفى

(फ़तावा रज़विया जिल्द ५ सफ़ा ६१८)

क्या हालत-ए-हमल में तलाक़ नहीं होती?

हमल की हालत में तलाक़ वाक़ेअ़ हो जाती है। यह जो कुछ लोग समझते हैं कि औरत हमल से हो और उस हालत में शौहर तलाक़ दे तो तलाक़ वाक़ेअ़ नहीं होती, यह उनकी ग़लतफ़हमी है।

सय्यिदी आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत इरशाद फ़रमाते हैं :-

"जाइज़ व हलाल है अगरचे अय्यामे हमल में दी गई हो।"

(फ़तावा रज़विया जिल्द ५ सफ़ा ६२५)

समधन, चच्ची और ममानी से निकाह

कुछ लोग समधन, चच्ची और ममानी से निकाह को हराम जानते हैं हालाँकि समधन से निकाह बिला शक जाइज़ है, यूँ ही चच्ची और ममानी से भी निकाह में कोई हर्ज नहीं जबकि उनके शौहरों ने उन्हें तलाक़ दे दी हो या वो मर चुके हों तो इद्दत के बाद समधन, चच्ची और मुमानी से निकाह जाइज़ है। जो लोग इन निकाहों को हराम जानते हैं, वो जाहिल हैं।

हवाले के लिए देखिए :-

मलफ़ूज़ाते आलाहज़रत अलैहिर्रहमह जिल्द सोएम सफ़ा १० और फ़तावा अफ़्रीक़ा सफ़ा १००

क्या शौहर के लिए बीवी को हाथ लगाने से पहले महर माफ़ कराना ज़रूरी है?

काफ़ी लोग यह ख़्याल करते हैं कि शौहर के लिए ज़रूरी है कि निकाह के बाद पहली मुलाक़ात में अपनी बीवी से पहले महर माफ़ कराये फिर उसके जिस्म को हाथ लगाये। यह एक ग़लत ख़्याल है, इस्लाम में ऐसा कुछ नहीं। महर माफ़ कराने की कोई ज़रूरत नहीं। आजकल जो महर राइज है, उसे 'ग़ैर मुअ़ज्जल' कहते हैं, जो या तो तलाक़ देने पर या फिर दोनों में से किसी एक की मौत पर देना वाजिब होता है। इससे पहले देना वाजिब नहीं, हाँ अगर पहले दे दे तो कोई हर्ज नहीं बल्कि निहायत उ़म्दा बात है। माफ़ कराने की कोई ज़रूरत नहीं और महर माफ़ कराने के लिए नहीं बाँधा जाता है। अब दे या फिर दे, वह देने के लिए है, माफ़ कराने के लिए नहीं।

हाँ अगर महर 'मुअ़ज्जल' हो यअ़नी निकाह के वक़्त नक़द देना तय कर लिया गया हो तो बीवी को इख़्तियार है कि वह अगर चाहे तो बग़ैर महर वसूल किये ख़ुद को उसके क़ाबू में न दे और उसको हाथ न लगाने दे और चाहे तो बग़ैर महर लिये भी उसको यह सब करने दे, माफ़ कराने का यहाँ भी कोई मतलब नहीं।
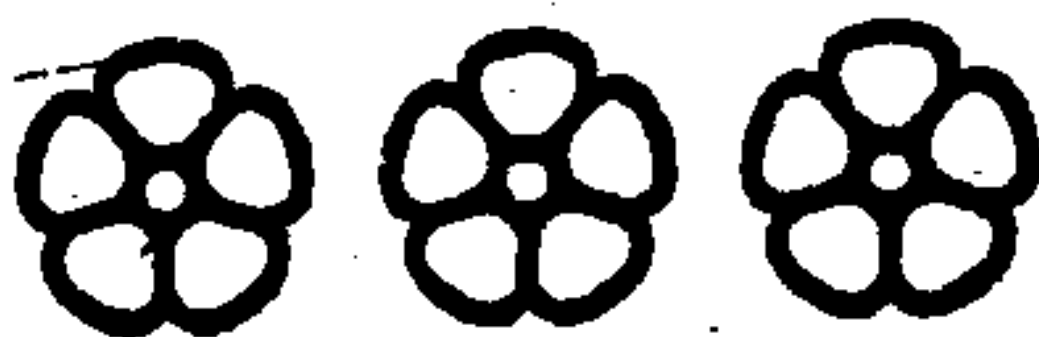
जिस औरत के ज़िना का हमल हो उससे निकाह जाइज़ है

ज़ानिया हामिला यअ़नी वह औरत जो बिना निकाह किए ही गर्भवती हो गई उससे निकाह को कुछ लोग नाजाइज़ समझते हैं हालाँकि वह जाइज़ है। ज़िना इस्लाम में बहुत बड़ा गुनाह है और इसकी सज़ा बहुत सख़्त है लेकिन अगर किसी औरत से ज़िनाकारी सरज़द हुई, उससे निकाह किया जाये तो निकाह सही हो जायेगा, ख़्वाह वह ज़िना से हामिला हो गई हो जबकि वह औरत शौहर वाली न हो और निकाह अगर उसी शख़्स से हो जिसका हमल है तो निकाह के बाद वह दोनों साथ रह सकते हैं, सुहबत व हमबिस्तरी भी कर सकते हैं और किसी दूसरे से निकाह हो तो जब तक बच्चा पैदा न हो जाये दोनों लोगों को अलग रखा जाये और उनके लिए हमबिस्तरी जाइज़ नहीं।

इमामे अहले सुन्नत सय्यिदी आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

जो औरत मआ़ज़ल्लाह ज़िना से हामिला हो उससे निकाह सही है ख़्वाह उस ज़ानी से हो या ग़ैर से फ़र्क़ इतना है अगर ज़ानी से से निकाह हो तो वह बादे निकाह उससे .कुर्बत भी कर सकता है और ग़ैर ज़ानी से हो तो वज़ए हमल तक (बच्चा पैदा होने तक) .कुर्बत न करे। (फ़तावा रज़विया जिल्द ५ सफ़ा १६६, फ़तावा अफ़्रीक़ा सफ़ा १५)

क्या औरत के बीस बच्चे हो जायें तो उसका निकाह टूट जाता है?

औरत के बीस बच्चे हो जायें तो उसका निकाह टूट जाता है, यह एक आ़मियाना और ख़ालिस जाहिलाना ख़्याल है। सही बात यह है कि बच्चे बीस हो जायें या इससे भी ज़्यादा, उसके निकाह पर कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता और पहला निकाह बाक़ी रहता है। दोबारा निकाह की कोई ज़रूरत नहीं है।

इद्दत के लिए औरत को मायके में लाना

आजकल अगर किसी औरत को तलाक़ हो जाये तो माएके वाले उसको फ़ौरन अपने घर ले आते हैं बल्कि इस पर फ़ख़ किया जाता है और अगर वह शौहर के घर में रहे तो कुछ लोग उसके माँ बाप और भाईयों को ग़ैरत दिलाते हैं कि तलाक़ के बाद भी लड़की को शौहर के घर छोड़ दिया है। यह सब ग़लत बातें हैं।

मसअला यह है कि तलाक़ के बाद भी औरत शौहर के घर में ही इद्दत गुज़ारे और शौहर के ऊपर इद्दत का नान व नफ़क़ा और रहने के लिए मकान देना लाज़िम है। .क़ुर्आन करीम में पारा २८ सूरह तलाक़ का तर्जमा यह है :

''तलाक़ वाली औरतों को उनके घर से न निकालो न वह ख़ुद निकलें मगर जब कि वह खुली हुई बेहयाई करें।''

हाँ यह ज़रूर है कि वो दोनों अजनबी और एक दूसरे के ग़ैर होकर रहें और बेहतर यह है कि उनके दरमियान कोई बूढ़ी औरत रहे और उनकी देखभाल रखे और यह भी हो सकता है कि शौहर घर में न रहे ख़ास कर रात को कहीं और सोये। औरत के हाथ का पका हुआ खाना खाने में कोई हर्ज नहीं है। शौहर के कपड़े वग़ैरा धोना भी तलाक़ के बाद कोई गुनाह नहीं है क्यूँकि बादे तलाक़ वह अगरचे बीवी नहीं मगर एक मुसलमान औरत है और शरई हुदूद की पाबन्दी के साथ एक मुसलमान का दूसरे मुसलमान के काम में आ जाना हुस्ने अख़लाक़ है और अच्छी बात है।

यह जो कुछ जगह लोग इतनी सख़्ती करते हैं कि बादे तलाक़ इद्दत में अगर शौहर बीवी के हाथ का पका हुआ खाना भी

खा ले तो हुक़्क़ा पानी बन्द कर देते हैं, यह ग़लत है। जब तक ख़ूब यक़ीन से मालूम न हो कि वो मियाँ बीवी की तरह मख़सूस मुआमलात करते हैं सिर्फ़ शुकूक की वजह से उन्हें तंग न किया जाये और बदगुमानी इस्लाम में गुनाह है।

हाँ अगर तलाक़ ए मुग़ल्लज़ा या बाइना की इद्दत हो और शौहर फ़ासिक़, बदकार हो और कोई वहाँ ऐसा न हो कि अगर शौहर की नियत ख़राब हो तो उसको रोक सके तो औरत के लिए उस घर को छोड़ देने का हुक्म है।

(फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल जिल्द २ सफ़ा २६०)

मुतलक़्क़ा की इद्दत कितने दिन है?

काफ़ी लोग यह ख़्याल करते हैं कि मुतलक़्क़ा (जिसे तलाक़ दी गई हो) की इद्दत तीन महीने या तीन महीने तेरह दिन में पूरी हो जाती है यह ग़लत है। तलाक़शुदा औरत की इद्दत यह है कि अगर वह हामिला न हो तो तलाक़ के बाद उसको तीन माहवारी हो जायें, ख़्वाह तीन माहवारियाँ तीन महीने से कम में हो जायें या उससे ज़्यादा में ख़्वाह साल गुज़र जायें अगर तीन बार उसको माहवारी नहीं हुई तो इद्दत पूरी नहीं होगी। हाँ अगर वह पचपन (५५) साल की हो गई हो और महीना आना बन्द हो गया हो या नाबालिग़ा हो कि अभी महीना शुरू ही नहीं हुआ या उसको कभी महीना किसी मर्ज़ की वजह से आया ही न हो तो उसकी इद्दत तीन माह है और हामिला की इद्दत बच्चा पैदा हो जाना है ख़्वाह तलाक़ के बाद फ़ौरन बच्चा पैदा हो जाये इद्दत हो जायेगी।

ख़ुलासा यह है कि आमतौर से तलाक़ की इद्दत ३ महीने या ३ महीने १३ दिन समझना ग़लत है। सही बात वह है जो हमने ऊपर बयान कर दी।

लड़कों की शादी में बजाए वलीमे के मंढिया करना

लड़के की शादी मे ज़ुफ़ाफ़ यानी बीवी और शौहर के जमा
ने के बाद सुबह को अपनी बिसात के मुताबिक़ मुसलमानों को
ना खिलाया जाए. उसे 'वलीमा' कहते हैं और यह सय्यिदे
लम ﷺ की मुबारक सुन्नत है। काफ़ी हदीसों में इसका ज़िक्र
सरकार ने ख़ुद वलीमे किये और सहाबए किराम को भी उस
हुक्म दिया मगर आज कल काफ़ी लोग शादी से पहले दावतें
रके खाना खिलाते हैं जिसको मंढिया कहा जाता है। वलीमा न
रना उसकी जगह मंढिया करना ख़िलाफ़े सुन्नत है। मगर लोग
स्म व रिवाज पर अड़े हुए हैं और अपनी ज़िद और हटधर्मी या
वाक़िफ़ी की बुनियाद पर रसूले करीम ﷺ की इस मुबारक
र प्यारी सुन्नत को छोड़ देते हैं। इस्लाम के इस तरीक़े में एक
ड़ी हिकमत यह है कि अगर निकाह से पहले ही खाना खिला
या तो हो सकता है किसी वजह से निकाह न होने पाए और
क्सर ऐसा हो भी जाता है तो इस सूरत में वह निकाह से पहले
तमाम इख़राजात बे मक़सद और बोझ बन कर रह जाते हैं।

जवान लड़के लड़कियों की शादी में देर करना

आजकल जवान लड़के लड़कियों को घर में विठाये रखना
ौर उनकी शादी में ताख़ीर करना आम हो गया है। इस्लामी
ुक्तए नज़र से यह एक ग़लत बात है। हदीस पाक में है
सूलुल्लाह सल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम इरशाद फ़रमाते हैं :-

जिसकी लड़की १२ बरस की उम्र को पहुँचे और वह उसका
निकाह न करे फिर वह लड़की गुनाह में मुब्तिला हो तो वह गुनाह

उस शख़्स पर है। ऐसी ही हदीस लड़कों के बारे में भी आई है।
(मिश्कात शरीफ़ सफ़ा २७१)

आजकल की .फ़ुज़ूल रस्मों और बेजा ख़र्चों ने भी शादियों को मुश्किल कर दिया है जिसकी वजह से भी बहुत सी जवान लडकियाँ अपने घरों में बैठी हुई हैं और लड़के मालदारों की लड़कियों की तलाश में बूढ़े हुए जा रहे हैं। इन ख़र्चों पर कन्ट्रोल करने के लिए जगह जगह तहरीकें चलाने और तन्ज़ीमें बनाने की ज़रूरत है चाहे वह अपनी अपनी बिरादरी की सतह पर ही काम किया जाये तो कोई हर्ज नहीं। भाईयो! दौर काम करने का है सिर्फ़ बातें मिलाने या नारे लगाने और मुशाएरे सुनने से कुछ हासिल न होगा। शादी ब्याह को कम से क़म ख़र्च से करने का माहौल बनाओ ताकि ज़्यादा से ज़्यादा मर्द और औरतें शादी शुदा रहें।

कुछ लोग आला तालीम हासिल कराने के लिए लड़कियों की उम्र ज़्यादा कर देते हैं और उन्हें ग़ैर शादी शुदा रहने पर मजबूर कर देते हैं। यह भी निरी हिमाक़त और बेवक़ूफ़ी है।

आज मुसलमानों में कुछ बदमज़हब और बातिल फ़िरक़े जवान लड़कियों की आला तालीम के लिए मदारिस और स्कूल खोलने में बहुत कोशिश कर रहे हैं। उनका मक़सद अपने बातिल और मख़सूस ग़ैर इस्लामी अक़ाइद मुसलमानों में फैलाने और घरों में पहुँचाने के अलावा और कुछ नहीं है और इधर लोगों में आजकल औलाद से महब्बत इस क़द्र बढ़ गई है कि हर शख़्स इस कोशिश में हैं कि मेरी लड़की और मेरा लड़का पता नहीं क्या क्या बन जाये और आला तालीम के नशे सवार हैं और बनता तो कोई कुछ नहीं लेकिन अक्सर बुरे दिन देखने को मिलते हैं। लड़के ज़्यादा पढ़कर बाप बन रहे हैं और लड़कियाँ माँ बन रही हैं।

हो सकता है कि हमारी इन बातों से कुछ लोगों को इख़्तिलाफ़ हो मगर हमारा मशवरा यही है लड़कियों को आला तालीम से बाज़ रखा जाये, ख़ासकर जब कि यह तालीम शादी की राह में रुकावट हो और पढ़ने पढ़ाने के चक्कर में अधेड़ कर दिया जाता हो और ख़ासकर ग़रीब तबक़े के लोगों में क्यूँकि उनके लिए पढ़ी लिखी लड़कियाँ बोझ बन जाती हैं क्यूँकि उनके लिए शौहर भी ए क्लास और आला घर के होना चाहिए और यह मिल नहीं पाते और कोई मिलता भी है तो वह जहेज़ में मारूती कार या मोटर साइकिल का तालिब है बल्कि बारात से पहले एक दो लाख रुपये का सवाल करता है।

हिन्दुस्तान गवर्नमेंट जो बच्चों को ऊँची तालीम दिलाने पर ज़ोर दे रही है, उसके लिए मेरा मशविरा है कि वह तालीमयाफ़्ता बच्चों की नौकरी व मुलाजिमत की जिम्मेदारी ले या उनके वज़ीफ़े मुतय्यन करे। ख़ाली पढ़ा पढ़ा कर छोड़ देना, न घर का रखा न बाहर का, न खेत का न दफ़्तर का। यह ग़रीबों के साथ ज़ुल्म है और समाज की बरबादी है।

बेवा औरतों के निकाह को बुरा समझना

बेवा औरत के लिए इस्लाम में निकाह जाइज़ है और लोगों की बद नियती, बद निगाही और फ़ासिद इरादों और बदकारी से बचने की नियत से हो तो बिला शुबहा बाइसे अज्र व सवाब भी है और निकाह करने पर बिला वजह किसी औरत पर लअ़न-तअ़न करना उस को बुरा भला कहना या बेवा औरत को मनहूस ख़्याल करना सब गुनाह है।

आजकल के माहौल में बदकारों, ज़िनाकारों, अय्याशों, होटलों, क्लब घरों और रन्डी ख़ानों में अय्याशी व ज़िनाकारी

करने वाले मर्दों और औरतों की कसरत के बावुजूद उन्हें कोई कुछ नहीं कहता बल्कि वह नेता, क़ाइद और बड़े आदमी कहलाए जा रहे हैं और कोई बेवा औरत निकाह करे या अधेड़ उम्र का मर्द या कोई मर्द एक से ज़्यादा निकाह करे तो उसको लोग बुरा जानते हैं और मलामत करते हैं यह सब जहालत और इस्लाम से दूरी के नतीजे हैं। निकाह शरई जितने ज़्यादा हों उतना बेहतर क्यूंकि निकाह बदकारी को मिटाता है। ज़िनाकारी और ज़िनाकारों के रास्ते बन्द करता है। आजकल लेने देने, लम्बी बारातों, जहेज़ की ज़्यादती और रुसूम व रिवाज की कसरत से निकाह शादियां मुश्किल हो गई हैं इसीलिए बदकारी व ज़िनाकारी बढ़ रही है। निकाह को आसान करो ताकि बदकारी मिट जाए।

कुतुब सितारे की तरफ़ पैर करके न सोना

यह मसअला अवाम में काफ़ी मशहूर हो गया है और हिन्दुस्तान में काफ़ी लोग यह ख़्याल करते हैं कि उत्तर की सम्त पैर फैलाना मना है क्यूंकि उधर कुतुब है यहाँ तक कि अगर कोई उत्तर की जानिब पाँव करके लेटे या सोए तो उसको निहायत बुरा जानते हैं और मकानों में चारपाईयां डालने में इस बात का ख़ास ख़्याल रखते हैं कि सरहाना या तो पच्छिम की तरफ़ हो या उत्तर की जानिब।

शरअ़न क़िब्ले की जानिब पाँव फैलाना तो यक़ीनन बेअदबी व महरूमी है इसके अलावा बाक़ी तमाम सम्तें इस्लाम में बराबर हैं किसी को किसी पर कोई बरतरी व फ़ज़ीलत नहीं।

आलाहज़रत मौलाना शाह अहमद रज़ा ख़ाँ साहब रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैह इरशाद फ़रमाते हैं :

''यह मसअला जोहला (जाहिलों) में बहुत मशहूर है, कुतुव अवाम में एक सितारे का नाम है तो तारे तो चारों तरफ़ हैं किसी तरफ़ पैर न करे।''

(फ़तावा रज़विया, जिल्द १०, क़िस्त २ मतबूआ बीसलपुर, सफ़हा १५८ - अलमलफ़ूज़, जिल्द २, सफ़हा ५७)

यानी अगर कुतुब सितारे की वजह से उत्तर की तरफ़ पैर करके सोना मना हो जाए तो सितारे चारों तरफ़ हैं किसी जानिव पैर फैलाना जाइज़ नहीं होगा।

आजकल अगर लोग इस रिवाज को मिटाने और ग़लतफ़हमी को दूर करने के लिए चारपाईयों की पाइती उत्तर की जानिब रखें तो वह अज्र के मुसतहिक़ होंगे और उन्हें एक ग़लत रिवाज को मिटाने का सवाब मिलेगा।

कुछ लोग कहते हैं कि मय्यत को क़ब्र में लिटाते वक़्त उसका सर कुतुब यानी उत्तर की जानिब क्यूं किया जाता है। तो बात यह है कि मय्यत का सर उत्तर की तरफ़ करने या क़ब्र में उसे दाहिनी करवट लिटाने का मामूल इसलिए है ताकि उसका चेहरा क़िब्ले की तरफ़ हो जाए। और सोने या लेटने में क़िब्ले की तरफ़ मुँह रखने का कोई हुक्म नहीं और सोने और लेटने वाला एक करवट नहीं रह सकता। लिहाज़ा उसका चेहरा क़िब्ले की तरफ़ नहीं रह पाता वह करवटें बदलता है मुर्दे में यह सब नहीं और सोते वक़्त भी अगर कोई क़िब्ले की तरफ़ चेहरा कर ले तो अच्छी नियत की वजह से यह अमल भी अच्छा ही है लेकिन शरअ़न ज़रूरी नहीं। और जो लोग उत्तर की तरफ़ पैर करके सोने को मना करते हैं उनका मक़सद तो कुतुब की ताज़ीम करना होता है न कि चेहरे को क़िब्ले की तरफ़ करना और कुतुब सितारे की ताज़ीम का हुक्म अगर इस्लाम में कहीं आया हो तो हमें भी बतायें या लिख कर भेजें।

मुरीद होना कितना ज़रूरी?

आजकल जो बैअ़त राइज है उसे बैअ़ते तबर्रुक कहते हैं जो न फ़र्ज़ है न वाजिब और न ऐसा कोई हुक्मे शरई कि जिसको न करने पर गुनाह या आख़िरत में मुवाख़िज़ा हो।

हाँ अगर कोई सही पीर मिल जाए तो उसके हाथ में हाथ देकर उसका मुरीद होना यक़ीनन एक अच्छा काम और बाइसे ख़ैर व बरकत है और इसमें बेशुमार दीनी व दुनियावी फ़ाइदे हैं।

लेकिन इसके बावुजूद अगर कोई शख़्स अक़ाइद दुरुस्त रखता हो, बुज़ुर्गाने दीन और उलामए किराम से महब्बत रखता हो और किसी ख़ास पीर का मुरीद न हो तो उसके लिए यह अक़ाइद ईमान की दुरुस्तगी, औलियाए किराम व उलमाए ज़विल एहतिराम से महब्बत ही काफ़ी है। और किसी ख़ास पीर का मुरीद न होकर हरगिज़ वह कोई शरई मुजरिम या गुनाहगार नहीं है। मगर आजकल गाँव, देहातों में कुछ जाहिल बे शरअ़ पीर यह प्रोपेगन्डा करते हैं कि जो मुरीद न होगा उसे जन्नत नहीं मिलेगी। यहाँ तक कि कुछ नाख़्वान्दा पेशेवर मुक़र्रिर जिनको तक़रीर करने की फुरसत है मगर किताबें देखने का वक़्त उनके पास नहीं। जलसों में उन जाहिल पीरों को ख़ुश करने के लिए यह तक कह देते हैं कि जिसका कोई पीर नहीं उसका पीर शैतान है और कुछ नाख़्वान्दे इसको हुज़ूर ﷺ का फ़रमान बताते हैं। और इससे आज की पीरी मुरीदी मुराद लेते हैं। अव्वलन तो यह कोई हदीस नहीं। हाँ कुछ बुज़ुर्गों से ज़रूरी मनकूल है कि जिसका कोई शैख़ नहीं उसका शैख़ शैतान है। तो उस शैख़ से मुराद मुरशिदे आम है न कि मुरशिदे ख़ास। और मुरशिदे आम कलामुल्लाह व कलामे अइम्मा शरीअ़त व तरीक़त व कलामे उलमाए ज़ाहिर व बातिन है। इस सिलसिलए सहीहा पर कि

अयाम का हादी कलामे उलमा और उलमा का रहनुमा कलामे अइम्मा और अइम्मा का मुरशिद कलामे रसूल और रसूल का पेशवा कलामुल्लाह।

सय्यिदी व सनदी आलाहज़रत अ़लैहिर्रहमतु वर्रिदवान फ़रमाते हैं :

सुन्नी सहीहुल अ़क़ीदा कि अइम्मए हुदा को मानता, तक़लीदे अइम्मा को जरूरी जानता, औलियाए किराम का सच्चा मुअ़तक़िद, तमाम अक़ाइद में राहे हक़ पर मुस्तक़ीम वह हरगिज़ बे पीर नहीं, वह चारों मुरशिदाने पाक यानी कलामे ख़ुदा और रसूल व अइम्मा व़ उलमाए ज़ाहिर व बातिन उसके पीर हैं अगरचे ब-ज़ाहिर किसी ख़ास बन्दए ख़ुदा के दस्ते मुबारक पर शरफ़े बैअ़त से मुशर्रफ़ न हुआ हो। (निक़ाउस्सलाफ़ह फ़िल अहकामिल बैअ़ते वल ख़िलाफ़ह, सफ़हा ४०)

और फ़रमाते हैं :

रस्तगारी (जहन्नम से नजात और छुटकारे) के लिए नबी को मुरशिद जानना काफ़ी है। (फ़तावा अफ़्रीक़ा, सफ़हा १३६)

इस सिलसिले में मज़ीद तहक़ीक़ व तफ़सील के लिए आलाहज़रत अ़लैहिर्रहमह की तसनीफ़ात में फ़तावा अफ़्रीक़ा, बैअ़त क्या है और निक़ाउस्सलाफ़ह वग़ैरा किताबों का मुतालआ़ करना चाहिए।

ख़ुलासा यह कि अगर जामेअ़ शराइत मुत्तबेअ़ शरअ़ पीर मिले मुरीद हो जाए क़ि बाइसे ख़ैर व बरकत और दरजात की बलन्दी का सबब है। और ऐसा लाइक़ व अहल पीर न मिले तो ख़्वाही न ख़्वाही गाँव गाँव फेरी करने वाले जाहिल बे शरअ़, उलमा की बुराई करने वाले नाम निहाद पीरों के हाथ में हाथ हरगिज़ न दे। ऐसे लोगों से मुरीद होना ईमान की मौत है।

क्या पीर के लिए सय्यिद होना ज़रूरी है?

आजकल यह प्रोपेगन्डा भी क्या जाता है कि मुरीद करने का हक़ सिर्फ़ सय्यिदों को है। ऐसा प्रोपेगन्डा करने वालों में ज़्यादातर यह लोग हैं जो सय्यिद न होकर ख़ुद को आले रसूल और सय्यिद कहलाते हैं। सादाते किराम से महब्बत और उनकी ताज़ीम अहले ईमान की पहचान है। निहायत बदबख़्त व बदनसीब है जिसको आले रसूल से महब्बत न हो। लेकिन पीर के लिए सय्यिद होना ज़रूरी नहीं क़ुर्आने करीम में है :

إِنَّ أَكْرَمَكُمْ عِندَ اللَّهِ أَتْقَاكُمْ

तर्जमा : तुम में अल्लाह के हुज़ूर शराफ़त व इज़्ज़त वाले तक़वा व परहेज़गारी वाले हैं

हज़रत सय्यिदना ग़ौसे समदानी शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी ख़ुद नजीबुत्तरफ़ैन हसनी हुसैनी सय्यिद हैं लेकिन हुज़ूर के पीर व मुरशिद शैख़ अबू सईद मख़ज़ूमी और उनके शैख़ अबुल हसन हक्कारी और उनके मुरशिद शैख़ अबुल फ़रह तरतूसी यूंही सिलसिला ब-सिलसिला शैख़ अब्दुल वाहिद तमीमी, शैख़ अबूबक्र शिबली, जुनैद बग़दादी, शैख़ सिर्री सक़ती, शैख़ मअ़रूफ़ करख़ी रद़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुम में से कोई भी सय्यिद व आले रसूल नहीं।

सुल्तानुल हिन्द ख़्वाजा मुईनुद्दीन अ़लैहिर्रहमतु वर्रिद़वान के पीर व मुरशिद हज़रत शैख़ ख़्वाजा उस्माने हारूनी भी सय्यिद नहीं थे। फ़िर भी यह कहना कि पीर के लिए सय्यिद होना ज़रूरी है। यह बहुत बड़ी जहालत व हिमाक़त है।

आलाहज़रत फ़रमाते हैं पीर के लिए सय्यिद होने की शर्त ठहराना तमाम सलासिल को बातिल करना है सिलसिलए आलिया कादिरिया में सय्यिदना इमामे अली रज़ा और हुज़ूर ग़ौसे आज़म

के दरमियान जितने हज़रात हैं सादाते किराम से नहीं और सिलसिलए आलिया चिश्तिया में तो सय्यिदना मौला अली के बाद ही इमामे हसन बसरी हैं जो न सय्यिद हैं न कुरैशी और न अरबी और सिलसिलए आलिया नक़्शबन्दिया का ख़ास आग़ाज़ ही सय्यिदना सिद्दीक़े अकबर रदियल्लाहु तआ़ला अन्हु से है।

(फ़तावा रज़विया, जिल्द ६, सफ़हा ११४ मतबूआ बीसलपुर)

और हुज़ूर के सहाबा जिनकी तादाद एक लाख से भी ज़्यादा है उन में चन्द को छोड़ कर कोई सय्यिद और आले रसूल नहीं। लेकिन उनके मरतबे को क़ियामत तक कोई नहीं पहुँच सकता चाहे सय्यिद हो या ग़ैरे सय्यिद।

काफ़िरों को मुरीद करना

कुछ जाहिल नाम निहाद पीर काफ़िरों को मुरीद कर लेते हैं जबकि काफ़िरों को जब तक वह कुफ़्र और उसके लवाज़िमात से तौबा करके और कलमा पढ़ कर मुसलमान न बनें उनको मुरीद करना उनके लिए मुरीद का लफ़्ज़ बोलना जहालत है। अजब बात है महादेव की पूजा करे रात दिन, बुतों के सामने डन्डवत करे और मुरीद आपका कहलाए। जो खुदा और रसूल का नहीं वह आपका कैसे हो गया?

सही बात यह है कि वह आपका मुरीद न हुआ बल्कि उसकी मालदारी देख कर आप उसके मुरीद हो गए हैं। सय्यिदी आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

''क़ोई काफ़िर ख़्वाह मुशरिक हो या मुवह्हिद हरगिज़ न दाख़िले सिलसिला हो सकता है और न बे इस्लाम उसकी बैअ़त मुअ़तबर न क़ब्ले इस्लाम उसकी बैअ़त मुअ़तबर अगरचे बाद को मुसलमान हो जाए कि बैअ़त हो या कोई और अमल सब के लिए पहली शर्त इस्लाम है।

(फ़तावा रज़विया, जिल्द ६, सफ़हा १५७)

काफ़िरों को मुरीद करने वाले कुछ पीर कहते हैं कि हम ने उसे इसलिए मुरीद कर लिया है कि वह हमारी महब्बत में मुसलमान हो जाए। ठीक है आपकी यह नियत है तो उसके साथ अच्छे अख़लाक़ और किरदार से पेश आइये लेकिन जब तक मुसलमान न हो उसे मुरीद न कहिये। और ज़रा यह भी बताइये कि अब तक आपने मुरीद करके कितने काफ़िर मुसलमान बनाए हैं? आज तो वह ज़माना है कि ग़ैर मुस्लिमों से गहरी दोस्ती और यारी रखने वाले मुसलमान ही काफ़िर या उनकी तरह हो रहे हैं। और मिसाल में उन बुज़ुर्गों के अख़लाक़ व किरदार को पेश करते हैं जिन्होंने एक एक सफ़र में ६०-६० हज़ार काफ़िरों को कलमा पढ़ाया। ख़्याल रहे कि तुम में और उनमें बड़ा फ़र्क़ है वह काफ़िरों को मुसलमान करते थे और तुम तअ़ल्लुक़ात रख कर खुद उनकी तरह होते जा रहे हो। पहले के बुज़ुर्गों के बारे में तारीख़ में ऐसी कोई मिसाल नहीं कि उन्होंने पहले मुरीद कर लिया हो और बाद में वह मुसलमान हुआ हो बल्कि पहले मुसलमान करते थे फिर मुरीद। तुम में हिम्मत हो तो ऐसा ही करो।

अगर सही पीर न मिले तो क्या करना चाहिए?

अक़ाइदे सहीहा पर क़ाइम रहे अहकमे शरीअ़त पर अमल करे और तमाम औलिया किराम और उलमाए ज़विल एहतिराम से महब्बत करे। हुज़ूर पुरनूर सय्यिदना ग़ौसे आज़म रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु से अर्ज़ की गई कि अगर कोई शख़्स हुज़ूर का नाम लेवा हो और उसने न हुज़ूर के दस्ते मुबारक पर बैअ़त की हो न हुज़ूर का ख़िरक़ा पहना हो क्या वह हुज़ूर के मुरीदों में है तो फ़रमाया : ''जो अपने आप को मेरी तरफ़ मनसूब करे और अपना

नाम मेरे गुलामों में शामिल करे अल्लाह उसे क़बूल फ़रमाएगा और वह मेरे मुरीदों के ज़ुमरे में है।" (बहवाला फ़तावा अफ़्रीक़ा, सफ़हा १४०) इसके अलावा सय्यिदना शैख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी अलैहिर्रहमह ने फ़रमाया कि जिसको पीरे कामिल जामेअ़ शराइत न मिले वह हुज़ूर पर कसरत से दुरूद शरीफ़ पढ़े।

पीर से पर्दा

यह बात काफ़ी मशहूर है कि पीर से पर्दा नहीं है हालांकि असलियत यह है कि पर्दे के मामले में पीरों या आलिमों, इमामों का अलाहिदा से कोई हुक्म नहीं। सय्यिदी आलाहज़रत रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु फ़रमाते हैं : "पर्दे के मामले में पीर व ग़ैरे पीर हर अजनबी का हुक्म यकसाँ है जवान औरत को चेहरा खोल कर भी सामने आना मना और बुढ़िया के लिए जिससे एहतिमाल फ़ितना न हो मुज़ाइक़ा (हरज) नहीं।"

(फ़तावा रज़विया, जिल्द १०, सफ़हा १०२)

मालदार होने के लिए मुरीद होना

आजकल ज़्यादातर लोग इसलिए मुरीद होते हैं कि हम मालदार हो जायेंगे या दुनयवी नुक़सानात से महफ़ूज़ रहेंगे। कितने लोग यह कहते सुने जाते हैं कि हम फ़लां पीर साहब से मुरीद हो कर ख़ुशहाल और मालदार हो गए अफ़सोस का मक़ाम है कि जो पीरी मुरीदी कभी रुश्द व हिदायत, ईमान की हिफ़ाज़त और शफ़ाअ़त और जन्नत हासिल करने का ज़रिआ ख़्याल की जाती थी आज वह हुसूले दौलत व इमारत या सिर्फ़ नक़्श व तावीज़, पढ़ना और फूंकना बन कर रह गई। अब शायद ही कोई ख़ुशनसीब होगा जो अहले इल्म व फ़ज़्ल उलमा, सुलहा या मज़ाराते मुक़द्दसा पर इस नियत से हाज़िरी देता हो कि उनसे गुनाहों की मग़फ़िरत और ख़ात्मा अ़लल ईमान की दुआ करायेंगे।

इस्लाम में दुनिया को महज़ एक खेल तमाशा कहा गया और आख़िरत को बाक़ी रहने वाली, लेकिन जिसका पता नहीं कब साथ छोड़ जाए उसको संवारने, बनाने में लग गए और जहाँ सब दिन रहना है उसको भुला बैठे। हदीसे पाक में अल्लाह के रसूल ﷺ ने इरशाद फ़रमाया :

"जब तुम किसी बन्दे को देखो कि अल्लाह उसको गुनाहों के बावुजूद दुनिया दे रहा है जो भी वह बन्दा चाहता है तो यह ढील है यानी अगर कोई बन्दा गुनाह करता रहे मगर हक़ तआ़ला की तरफ़ से बजाए पकड़ के नेमतें मिल रही हैं तो यह नेमतें नहीं बल्कि अज़ाब है। रात दिन दौलत कमाने में लगे रहने वाले अब मस्जिदों, ख़ानक़ाहों में भी कभी आते हैं तो सिर्फ़ दौलते दुनिया और ऐश व आराम की फ़िक्र लेकर। किस क़द्र महरूमी है। ख़ुदाए तआ़ला आख़िरत की फ़िक्र करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए।

बुज़ुर्गों की तसवीरें घरों में रखना

आजकल बुज़ुर्गाने दीन की तसवीरें और उनके फ़ोटो घरों, दुकानों में रखने का भी रिवाज हो गया है। यहाँ तक कि कुछ लोग पीरों, वलियों की तसवीरें फ़्रेम में लगा कर घरों में सजा लेते हैं और उन पर मालायें डालते, अगरबत्तियां सुलगाते यहाँ तक कि कुछ जाहिल अनपढ़ उनके सामने मुशरिकों, काफ़िरों, बुतपरस्तों की तरह हाथ बाँध कर खड़े हो जाते हैं। ये बातें सख़्त तरीन हराम, यहाँ तक कि कुफ़्र अन्जाम हैं बल्कि यह हाथ बाँध कर सामने खड़ा होना उन पर फूल मालायें डालना यह काफ़िरों का काम है।

सय्यिदी आलाहज़रत मौलाना शाह अहमद रज़ा ख़ाँ साहब अ़लैहिर्रहमह इरशाद फ़रमाते हैं : "अल्लाह अ़ज़्ज़वजल इबलीस के मक्र से पनाह दे। दुनिया में बुत परस्ती की इब्तिदा यूंही हुई कि अच्छे और नेक लोगों की महब्बत में उनकी तसवीरें बना कर

घरों और मस्जिदों में तबर्रुकन रख लीं। धीरे धीरे यही मअबूद हो गईं। (फ़तावा रज़विया, जिल्द १०, किस्त २, मतबूआ बीसलपुर, सफ़हा ४७)

बुख़ारी शरीफ़ और मुस्लिम शरीफ़ की हदीस में है कि वुद, सुवाअ, यग़ूस, यऊक़ और नसर जो मुशरिकीन के मअबूद और उनके बुत थे जिनकी वह परस्तिश करते थे जिनका ज़िक्र कुर्आने करीम में भी आया है। यह सब कौमे नूह के नेक लोग थे उनके विसाल हो जाने के बाद कौम ने उनके मुजस्समे बना कर अपने घरों में रख लिये उस वक़्त सिर्फ़ महब्बत में ऐसा किया गया था लेकिन बाद के लोगों ने उनकी इबादत और परस्तिश शुरू कर दी। इस क़िस्म की हदीसें कसरत से हदीस की किताबों में आई हैं।

ख़ुलासा यह कि तसवीर, फ़ोटो इस्लाम में हराम हैं। और पीरों, वलियों, अल्लाह वालों के फ़ोटो और उनकी तसवीरें और ज़्यादा हराम हैं। काफ़िरों, इस्लाम दुश्मन ताक़तों की साज़िशें चल रहीं हैं वह चाहते हैं कि तुमको अपनी तरह बनायें और तुम से कुफ़्र करायें ख़ुद भी जहन्नम में जायें और तुमको भी जहन्नम में ले जायें।

शरीअ़त की मुख़ालिफ़त करने वाले पीर

आजकल ऐसे पीरों की तादाद भी काफ़ी है जो नमाज़ रोज़ा व दीगर अहकामे शरअ़ पर न खुद अमल करते हैं और न अपने मुरीदों से अमल कराते हैं बल्कि इस्लाम व कुर्आन की बातों को यह कह कर टाल देते हैं कि यह मौलवी लाइन की बातें हैं हम तो फ़क़ीरी लाइन के हैं यह खुले आम शरीअ़ते इस्लामिया का इन्कार और नमाज़ रोज़े की मुख़ालिफ़त करने वाले पीर तो पीर, मुसलमान तक नहीं हैं। उनका मुरीद होना ऐसा ही है जैसे किसी

ग़ैर मुस्लिम को अपना पेशवा बनाना, क्यूंकि शरीअ़ते इस्लामिया का इन्कार 'इस्लाम' ही का इन्कार है और यह कुफ़्र है।

सय्यिदना आलाहज़रत मौलाना शाह अहमद रज़ा ख़ाँ बरेलवी इरशाद फ़रमाते हैं :

"सराहतन शरीअ़ते मुतह्हरह को मआज़ल्लाह मुअ़त्तल व मुहमल लग्व व बातिल कर देना यह सरीह कुफ़्र व इरतिदाद व ज़िन्दक़ा व इलहाद व मोजिबे लअ़नत व इबआ़द है।"

(मक़ाले उ़रफ़ा, सफ़्हा ६)

हक़ यह कि अल्लाह का वली और अल्लाह वाला वही है जो ख़ुद भी अल्लाह के रास्ते पर चले और दूसरों को भी चलाए और अल्लाह का रास्ता वही है जो रसूले अकरम हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा ﷺ ने बताया और ख़ुद उस पर चल कर दिखाया। उसका मुख़ालिफ़ हुज़ूर का मुख़ालिफ़ है। और हुज़ूर का मुख़ालिफ़ अल्लाह का मुख़ालिफ़ है और शैताने लईन का मुरीद है।

क़ुर्आने करीम में ख़ुदाए तआ़ला का फ़रमान है :

"ऐ महबूब तुम फ़रमाओ कि अगर तुम अल्लाह से महब्बत करते हो तो मेरा कहना मानो तुम अल्लाह के प्यारे हो जाओगे और वह तुम्हारे गुनाहों को माफ़ फ़रमा देगा और अल्लाह बहुत बख़्शने वाला मेहरबान है।" (पारा ३, रुकू ४)

इस आयते करीमा से ख़ूब मालूम हुआ कि अल्लाह तक पहुंचने के सारे रास्ते हुज़ूर ही के क़दमों से गुज़रते हैं। वह आलिमों, मौलवियों के हों या फ़क़ीरों, दुरवेशों के। हुज़ूर का रास्ता छोड़ कर हरगिज़ कोई ख़ुदाए तआ़ला तक नहीं पहुंच सकता। और हुज़ूर का रास्ता ही शरीअ़ते इस्लामिया है और तरीक़त भी इसी का एक टुकड़ा है इसको शरीअ़त से जुदा मानना गुमराही है।

कुछ गुमराह पीरों के गुमराह मुरीदों को यह कहते भी सुना [illegible]ा है कि हमने अपने पीर का दीदार कर लिया यही हमारी [illegible]ाज़ व इबादत है उनका यह क़ौल सख़्त बद दीनी है। नमाज़ [illegible]लाम में इतनी अहम है इसको अगर मुरीद छोड़ेंगे तो वह क़ब्र [illegible] हश्र में अज़ाबे इलाही का मज़ा चखेंगे और पीर छोड़ेंगे तो वह [illegible] आख़िरत में ख़ूब ठोंके जायेंगे और वह पीर ही नहीं। जो न [illegible]ुद अल्लाह की इबादत करे न दूसरों को करने दे।

नमाज़ का तो इस्लाम में इतना बलन्द मक़ाम है कि हुज़ूर [illegible]य्यिदे आलम अहमदे मुजतबा मुहम्मद मुस्तफ़ा ﷺ जब मक्कए [illegible]ुअज़्ज़मा से हिजरत फ़रमा कर मदीना तय्यिबा तशरीफ़ लाए थे तो आपने अपने और अपने घर वालों के रहने के लिए हुजरे और मकानात बाद में तामीर फ़रमाए थे पहले खुदाए तआला की इबादत यानी नमाज़ पढ़ने के लिए मस्जिद शरीफ़ की तामीर फ़रमाई थी जो आज भी है उसका एक एक हिस्सा अहले ईमान के लिए दिल व जान से बढ़ कर है।

हुज़ूर फ़रमाते है कि नमाज़ मेरी आँखों की ठन्डक है और नमाज़ जन्नत की कुंजी है पहले ज़माने के बुज़ुर्गाने दीन मुरशिदाने किराम सूफ़ी और दुरवेश सब के सब नमाज़ी दीनदार और निहायत दरजा हुज़ूर की शरीअत पर चलने वाले परहेज़गार होते थे।

वह यह नहीं कहते कि हम फ़क़ीरी लाइन के हैं हम पर नमाज़ माफ़ है बल्कि वह औरों से ज़्यादा सारी सारी रात नमाज़ पढ़ते थे। आजकल के कुछ जाहिल नाम निहाद सूफ़ियों और पीरों ने सोचा कि पीरी भी चलती रहे और आज़ादी व आराम में भी कोई कमी न आए। इसलिए वह अहकामे शरअ़ नमाज़ व रोज़े वग़ैरा की मुख़ालिफ़त करते हैं।

ग़ौर करने की बात है कि पहले के बुज़ुर्गों के आस्ताने और

मज़ारात जहाँ मिलेंगे वहाँ मस्जिदें भी ज़रूर मिलेंगी। अजमेर शरीफ़ में ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ मुईनुद्दीन चिश्ती का आस्ताना, देहली में हज़रत ख़्वाजा कुतबुद्दीन बख़्तियार काकी, हज़रत निज़ामुद्दीन महबूबे इलाही, हज़रत नसीरुद्दीन चिराग़ देहलवी, हज़रत शैख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी वगैरा की ख़ानकाहें, लाहौर में हज़रत शैख़ दातागंज बख़्श का आस्ताना, नागौर शरीफ़ में हज़रत सूफ़ी हमीदुद्दीन नागौरी, कछौछा में हज़रत शैख़ मख़दूम अशरफ़ समनानी, पाक पटन में हज़रत फ़रीदुद्दीन गंज शकर, कलियर शरीफ़ में हज़रत शैख़ अलाउद्दीन साबिर कलियरी वग़ैरा इन सब के आस्तानों पर आपको जहाँ मज़ारात मिलेंगे वहाँ मस्जिदें भी मुत्तसिल बनी हुई नज़र आयेंगी। इस में राज़ यह है कि यह हज़रात जहाँ क़ियाम फ़रमाते, ठहरते और बिस्तर लगाते वहाँ ख़ुदा का घर यानी मस्जिद बना कर अज़ान व नमाज से उसको आबाद फ़रमाते और जब उन्होंने ख़ुदाए तआ़ला की इबादत करके उसके घरों को आबाद किया तो ख़ुदाए तआ़ला ने उनके दर आबाद कर दिये।

और इस्लाम इन्हीं दो चीज़ों का नाम है कि ख़ुदाए तआ़ला की इबादत इताअ़त भी होती रहे और उसके महबूब बन्दों, ख़ासाने ख़ुदा हज़राते अम्बिया व औलिया की ताज़ीम और उनसे महब्बत भी होती रहे।

जो ख़ुदाए तआ़ला के अलावा किसी और की इबादत, पूजा और परस्तिश करे वह मुसलमान नहीं और जो ख़ुदा वालों से महब्बत का मुतलक़न इन्कार करे उनकी बारगाहों में बेअदबी से पेश आए गुस्ताख़ी करे वह भी इस्लाम से ख़ारिज है।

मामूली इख़्तिलाफ़ात को झगड़ों का सबब बनाना

बाज़ .फ़ुरूई और नौपैद मसाइल जिनका ज़िक्र सराहतन खुले अलफ़ाज़ में .कुर्आन व हदीस और फ़िक़्ह की मुस्तनद किताबों में नहीं मिलता, उनके मुतअल्लिक़ कभी कभी आलिमों की राय अलग अलग हो जाती है। ख़ास कर आज साइंस के दौर में नई नई ईजादात की बुनियाद पर ऐसे मसाइल कसरत से सामने आ रहे हैं तो कुछ लोग उलेमा के दरमियान इख़्तिलाफ़ात को लड़ाई, झगड़े, गाली गलौच, लअ्न व तअ्न का सबब बना लेते हैं और आपस में गिरोहबन्दी कर लेते हैं, यह उनकी सख़्त ग़लतफ़हमी है।

.फ़ुरूई मसाइल में इख़्तिलाफ़ की बुनियाद पर पार्टीबन्दी कभी नहीं करना चाहिए। न एक दूसरे को बुरा भला कहना चाहिए बल्कि जो बात आपके नज़दीक हक़ व दुरुस्त है वह दूसरों को समझा देना क़ाफ़ी, अगर मान जायें तो ठीक वरना उन्हें उनके हाल पर छोड़ देना चाहिए और उन्हें अपना मुसलमान भाई ही ख़्याल करना चाहिए। मगर आजकल छोटी छोटी बातों पर आपस में लड़ाई, झगड़े, दंगे करना और पार्टियाँ बनाने की मुसलमानों में बीमारी पैदा हो गई है। यह इसलिए भी हुआ कि आजकल लोग नमाज़ व इबादत व .कुर्आन की तिलावत और दीनी किताबों के पढ़ने में मशग़ूल नहीं रहते। ख़ाली रहते हैं, इसलिए उन्हें ख़ुराफ़ात सूझती है और ख़्वामख़्वाह की बातों में लड़ते और झगड़ते हैं।

कुछ लोग इस .फ़ुरूई इख़्तिलाफ़ को उलेमाए दीन की शान में गुस्ताख़ी करने और उन्हें बुरा भला कहने का बहाना बना लेते हैं। ऐसे लोग गुमराह व बद्दीन हैं। इनसे दूरी बहुत ज़रूरी है और इनकी सुहबत ईमान की मौत है। क्यूँकि उलेमाए दीन की शान में गुस्ताख़ी और मौलवियों को बुरा भला कहना बदमज़हबी

है। गुमराहों की गुमराही की शुरूआत यहीं से होती है।

अहले इल्म व फ़ज़्ल असहाबे दयानत व अमानत में अगर किसी बात पर इख़्तिलाफ़ हो जाये तो आम लोगों को ख़ुदाए तआला की तौफ़ीक़ से जिधर ज़हन का झुकाव हो जाये, उस बात पर अमल करना चाहिए और दूसरे की शान में बेअदबी न करके, उसका भी इहतिराम करते रहना चाहिए और ख़ुदाए तआला से रो रो कर तौफ़ीक़े ख़ैर और सीधे रास्ते पर क़ाइम रहने की दुआ करते रहना चाहिए।

हदीस में है कि रसूले पाक ﷺ जब जंगे ख़न्दक़ से वापस मदीने में तशरीफ़ लाए और फ़ौरन यहूदियों के क़बीले बनू कुरैज़ा पर हमले का इरादा फ़रमाया और सहाबा को हुक्म दिया कि अस्र की नमाज़ बनू कुरैज़ा में चल कर पढ़ी जाए लेकिन रास्ते में वक़्त हो गया यानी नमाज़े अस्र का वक़्त ख़त्म हो जाने का अन्देशा हो गया तो कुछ सहाबा ने नमाज़ का वक़्त जाने के ख़ौफ़ से रास्ते में ही नमाज़ अदा फ़रमाई और उन्होंने ख़्याल किया कि हुज़ूर का मक़सद यह नहीं था कि चाहे वक़्त जाता रहे लेकिन नमाज़ बनू कुरैज़ा ही में पढ़ी जाए और कुछ लोगों ने वक़्त की परवाह न की और नमाज़े अस्र बनू कुरैज़ा ही में जाकर पढ़ी। हुज़ूर के सामने जब यह ज़िक्र आया तो आप ने दोनों को सही व दुरुस्त फ़रमाया दोनों में से किसी को भी बुरा नहीं कहा। (सहीह बुख़ारी, जिल्द १, सलातुल तालिब वलमतलूब, सफ़हा १२६)

एक और हदीस में है कि एक मरतबा हुज़ूर के दो सहाबा सफ़र को गए रास्ते में पानी न मिलने की वजह से दोनों ने मिट्टी से तयम्मुम करके नमाज़ अदा फ़रमाई फिर आगे बढ़े पानी मिल गया और नमाज़ का वक़्त बाक़ी था। एक साहब ने वुज़ू करके नमाज़ दोहराई लेकिन दूसरे ने नहीं दोहराई। वापसी में हुज़ूर की ख़िदमत में हाज़िर होकर क़िस्सा बयान किया तो हुज़ूर ने उन साहब से जिन्होंने नमाज़ नहीं दोहराई थी और तयम्मुम की

नमाज़ को काफ़ी समझा था, उनसे फ़रमाया तुमने सुन्नत के मुताबिक़ काम किया और दोहराने वालों से फ़रमाया तुम्हारे लिए दोगुना सवाब है। (निसाई, अबूदाऊद, मिश्कात बाबे तयम्मुम, सफ़हा ५५) यानी हुज़ूर ने दोनों को हक़ व दुरुस्त फ़रमाया। इन हदीसों से पता चलता है कि इख़्तिलाफ़ के बाद भी दो गिरोह हक़ पर हो सकते हैं जब कि दोनों की नियत सही हो। इन हदीसों से तक़लीदे अइम्मा का इन्कार करने वाली नाम निहाद जमाअत अहले हदीस को सबक़ लेना चाहिए जो कहते हैं कि इख़्तिलाफ़ के बावजूद चारों मसलक यानी हनफ़ी, शाफ़िई, मालिकी, हम्बली सब हक़ पर हो गए।

हज़रत मौलाए काएनात सय्यिदेना व मौलाना अली मुर्तज़ा रदियल्लाहु अन्हु और सय्यिदेना अमीरे मुआविया रदियल्लाहु अन्हु में जंग हुई मगर दोनों का ही इहतिराम किया जाता है और दोनों में किसी को बुरा भला कहना सख़्त गुमराही और जहन्नम का रास्ता है।

इसकी मिसाल यूँ समझना चाहिए कि जैसे माँ और बाप में अगर झगड़ा हो जाये तो औलाद अगर माँ को मारे पीटे या गालियाँ दे तब भी बदनसीब व महरूम और अगर बाप के साथ ऐसा बरताव करे तब भी, यअ़नी औलाद को उस झगड़े में इजाज़त न होगी कि एक की तरफ़ होकर दूसरे की शान में बेअदबी करे बल्कि दोनों का इहतिराम ज़रूरी होगा। या किसी शागिर्द के दो उस्तादों में लड़ाई हो जाये तो शागिर्द के लिए दोनों में किसी के साथ बेहूदगी और बदतमीज़ी की इजाज़त न होगी।

मक़सद यह कि बड़ों के झगड़े में छोटों को बहुत इहतियात व होशियारी की ज़रूरत है।

इस उनवान के तहत हमने जो कुछ लिखा है उसका हासिल यह है कि जब तक कोई शख़्स दीन की ज़रूरी बातों का मुन्किर और अक़ीदे में ख़राबी की वजह से इस मन्ज़िल को न

पहुँच जाये कि उसको ख़ारिजे इस्लाम और काफ़िर कह सकें तब तक उसके साथ नरमी का ही बरताव करना चाहिए और समझाने की कोशिश करते रहना चाहिए और ख़ुदाए तआ़ला से उसकी हिदायत की दुआ करते रहना चाहिए।

हॉ वो लोग जो दीन की ज़रूरी बातों के मुन्किर हों, क़ुर्आन व हदीस से साबित सरीह उमूर के क़ाइल न हों, या अल्लाह तआ़ला और उसके महबूब स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम और दीगर अम्बिया किराम व औलियाए इज़ाम व उलेमाए ज़विल इहतिराम की शान में तौहीने और गुस्ताख़ियाँ करते, या गुस्ताख़ाने रसूल की तहरीकों और जमाअतों से क़सदन जुड़े हुए हों, उनकी तारीफ़ करते हों, वह यक़ीनन इस लाइक़ नहीं बल्कि उनसे जितनी नफ़रत की जाये कम है क्यूँकि अल्लाह और अल्लाह वालों की शान में गुस्ताख़ी व बेअदबी इस्लाम में सबसे बड़ा जुर्म है, और ऐसे शख़्स की सुहबत ईमान के लिए ज़हरीला नाग है।

उलेमाए अहले हक़ के दरमियान .फ़ुरूई इख़्तिलाफ़ात की सूरत में दोनों जानिब का इहतिराम व अदब मलहूज़ रखने का मशविरा जो हमने दिया है यह उन्हीं के लिए है जो वाक़ई आलिम हों, फ़क़ीह व मुहद्दिस हों। वरना आजकल के कुछ अनपढ़ जो दो चार उर्दू की किताबें पढ़ कर आलिम बनते या सिर्फ़ तक़रीरें करके स्टेजों पर अल्लामा कहलाते, .क़ुर्आन व हदीस में अटकलें लगाते हैं, मसाइल में उलेमा से टकराते हैं, अपनी दुकान अलग सजाते हैं ये इसमें दाख़िल नहीं बल्कि ये तो उम्मते मुस्लिमा में रख़नाअन्दाज़ी करने वाले और फ़ितनापरवर हैं।

सय्यिदी आलाहज़रत फ़रमाते हैं, ''जहाँ इख़्तिलाफ़ाते फ़रूईया हों जैसे हनफ़ी और शाफ़ेई फिरक़े अहले सुन्नत में वहाँ हरगिज़ एक दूसरे को बुरा कहना जाइज़ नहीं।''

(अलमलफ़ूज़ हिस्सा अव्वल सफ़ा ५१)

ख़ानक़ाही इख़्तिलाफ़ात और इस सिलसिले में सही बात

आजकल ख़ानक़ाही इख़्तिलाफ़ात का भी ज़ोर है और एक पीर के मुरीद दूसरे के मुरीदों को और एक सिलसिले वाले दूसरे सिलसिले वालों को एक आँख नहीं भाते और उन्हें अपना दुश्मन जानते हैं, और यह इसलिए कि उन्हें इस्लाम व .कुर्आन और अल्लाह व रसूल से महब्बत नहीं वरना यह हर मुसलमान और अल्लाह व रसूल पर ईमान रखने वाले से महब्बत करते।

आजकल कुछ पीर भी ऐसे हैं कि उन्हें अपने ही मुरीद भाते हैं और अच्छे लगते हैं और दूसरों के मुरीदों को देख कर उनका ख़ून खौलता हैं जबकि पीरी उस्तादी के आदाब व उसूल से है कि वह अपने शागिर्दों मुरीदों को जहाँ अपनी ज़ात से अक़ीदत व महब्बत सिखाये वहीं दूसरे अहले इल्म व फ़ज़्ल, मशाइख़ और सुलहा की बेअदबी व गुस्ताख़ी से बचाये। बल्कि मुरीद करने का मक़सद ही उसे बेअदबी से बचाना है क्यूँकि इसमें ईमान की हिफ़ाज़त है और ईमान बचाने के लिए ही तो मुरीद किया जाता है, और ईमान अदब का ही दूसरा नाम है।

जो पीर मुसलमानों को नफ़रत की तालीम दे रहे हैं और क़ौमे मुस्लिम को टुकड़ों में बाँट रहे हैं, मुरीदों को मशाइख़ व उलेमा का बेअदब बना रहे हैं, वो हरगिज़ पीर नहीं हैं बल्कि वो शैतान का काम कर रहे हैं और इब्लीस का लश्कर बढ़ा रहे हैं।

इस बारे में हक़ व दुरुस्त बात यह हैं कि जो मुसलमान किसी भी सिलसिलए सहीहा में मुत्तसिलुस्सिलसिला पाबन्दे शरअ़ पीर का मुरीद है और उसके अक़ाइद दुरुस्त हैं, वह हमारा भाई है और मुरीद न भी हुआ हो वह भी यक़ीनन मुसलमान है और

उसकी नजात के लिए यह काफ़ी है। मुरीद होना ज़रूरी नहीं मुसलमान होना ज़रूरी है। मुरीद होना सिर्फ़ एक अच्छी बात है, वह भी उस वक़्त जबकि पीर सही हो।

दरअस्ल पीरी व मुरीदी लड़ाई झगड़े और गिरोहबन्दी का सबब तब से बनी जब से यह ज़रीयए मआश और सिर्फ़ खाने कमाने और लम्बे लम्बे नज़रानों के हासिल करने का धन्धा बनी है। आज ज़्यादातर पीरों को इस बात की फ़िक्र नहीं कि मुरीद नमाज़ पढ़ता है कि नहीं, ज़कात निकालता है कि नहीं, सुन्नी है कि बदअक़ीदा, मुसलमान है कि ग़ैर मुस्लिम, उन्हें तो बस नज़राना चाहिए। जो ज़्यादा लम्बी नज़्र दे वही मियाँ के क़रीब है वरना वह मियाँ के नज़दीक बदनसीब है।

क्या हर दीवाना मजज़ूब वली है?

अल्लाह तआला के नेक बन्दों और औलियाए किराम में एक ख़ास क़िस्म मजज़ूबों की भी है। ये वो लोग हैं जो ख़ुदाए तआला की महब्बत और उसकी याद में इतने ग़र्क़ हो जाते हैं कि उन्हें अपने तन बदन का होश नहीं रहता और दुनिया वालों को पागल और दीवाने से नज़र आते हैं। लेकिन हर पागल और दीवाने को मजज़ूब नहीं ख़्याल करना चाहिए। आजकल आम लोगों में यह मर्ज़ पैदा हो गया है कि जिस पागल को देखते हैं, उस पर विलायत और मजज़ूबियत का हुक्म लगा देते हैं और उसके पीछे घूमने लगते हैं। और अगर कोई है भी तो उसको उसके हाल पर छोड़ दीजिए, वह जाने और उसका रब।

बेहतर तरीक़ा यह है कि अगर किसी शख़्स के बारे में आपको ऐसा शक हो जाये तो उसकी बुराई भी मत कीजिए और उसके पीछे भी मत घूमिए। आप तो वह करो जिसका आपको ख़ुदाए तआला ने हुक्म दिया है- अहकामे शरअ की पाबन्दी करें

और बुरे कामों से बचें। इस्लाम में ऐसा कोई हुक्म नहीं है कि दीवानों में तलाश करो कि उनमें कौन मजज़ूब है और कौन नहीं।

बाज़ जगह ऐसी सुनी सुनाई बातों पर यक़ीन करके कुछ लोगों को मजज़ूब क़रार दे दिया जाता है और फिर लाखों लाख रुपया ख़र्च करके उनके मरने के बाद मज़ार बना देते हैं और उर्सों के नाम पर मेले ठेले और तमाशे शुरू कर देते हैं। और उर्सों के नाम पर ये मेले और तमाशे अब दिन ब दिन बढ़ते जा रहे हैं और इस्लाम और इस्लामियत के हक़ में यह अच्छा नहीं हो रहा है।

खुलासा यह कि अगर कोई मजज़ूब है और वह खुदाए तआ़ला की याद में बेहोश हुआ है तो उसका सिला और बदला उसको अल्लाह तआ़ला देने वाला है। आपके लिए तो दूरी ही बेहतर है और ये जो अहले इल्म व फ़ज़्ल औलिया व उलेमा की सुहबत इख़्तियार करने की फ़ज़ीलतें आई हैं, ये मजज़ूबों के लिए नहीं। मजज़ूब की सुहबत से कोई फ़ाइदा नहीं है।

हुज़ूर मुफ़्ती आज़म हिन्द मौलाना मुस्तफ़ा रज़ा ख़ाँ अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं हर कस व नाकस को मजज़ूब नहीं समझ लेना चाहिए और जो मजज़ूब हो उससे भी दूर ही रहना चाहिए कि इससे नफ़ा कम और ज़रर (नुक़सान) ज़ाइद पहुँचने का अन्देशा है। (फ़तावा मुस्तफ़विया हिस्सा ३ सफ़ा १७५)

कुछ दीवाने सत्र खोले नंगे पड़े रहते हैं और लोग उनके पास जाकर उनकी ख़िदमत करते हैं। यह गुनाह है क्यूँकि वह अगर मजज़ूब भी है तब भी ऐसी हालत देखना नाजाइज़ है क्यूँकि वह मजज़ूब है आप तो होश में हैं। मजज़ूब होने की बिना पर अगरचे उस पर गुनाह नहीं लेकिन आप उसके बदन के वो हिस्से देखेंगे जिनका छुपाना फ़र्ज़ है, तो आप ज़रूर गुनाहगार होंगे।

बिल्ली रास्ता काट जाये तो क्या होता है?

कुछ जगहों पर देखा गया है कि कोई शख़्स गली और रास्ते में जा रहा है और सामने से बिल्ली गुज़र गई जिसे रास्ता काटना कहते हैं तो यह कुछ देर के लिए ठहर जाता है और फिर बाद में चलने लगता है। और यह समझता है कि बिल्ली ने रास्ता काट दिया, शगुन ख़राब हो गये, अब कोई नुक़सान हो सकता है। हालाँकि ये सब बेकार की बातें हैं और इस्लाम में ऐसा कुछ नहीं और एक मुसलमान को इस क़िस्म के ख़्यालात कभी नहीं रखना चाहिए और यह नहीं समझना चाहिए कि बिल्ली के रास्ता काटने से कुछ होता है।

कुछ तारीख़ों को शादी ब्याह के लिए मनहूस जानना

बाज़ लोग कुछ तारीख़ों में शादी ब्याह और ख़ुशी का काम करने को मना करते हैं और ख़ुद भी नहीं करते हैं मसलन ३, १३, २३, और ८, १८, २८ ...... इन तारीख़ों को शादी व ख़ुशी के लिए बुरा जाना जाता है हालाँकि ये सब बेकार बातें हैं और काफ़िरों और ग़ैर मुस्लिमों की सी वहमपरस्तियाँ हैं। इस्लाम में ऐसा कुछ नहीं हैं।

निकाह व शादी हर दिन और हर तारीख़ में जाइज़ है। माहे मुहर्रम में निकाह को बुरा जानना, राफ़ज़ियों, शीओं का तरीक़ा है जो बाज़ जगह अहले सुन्नत में भी फैल गया है।

मुसलमानो! इस्लाम को अपनाओ और सच्चे पक्के मुसलमान बनो, वहमपरस्तियाँ छोड़ो, ख़ुदा व रसूल की पैरवी करो, मुहर्रम और सफ़र (चेहलम) में निकाह को बुरा मत जानो।

टाई बाँधना और बच्चों को बँधवाना

टाई बाँधना इस्लाम में सख़्त गुनाह है। यह ईसाईयों का मज़हबी शिआर (पहचान) है। उनके अक़ीदे के मुताबिक़ हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को यहूदियों ने फाँसी दी थी। ईसाई इस फाँसी के फन्दे को गले में आज तक डाले हुए हैं, जिसे टाई कहा जाता है।

लेकिन .कुर्आने करीम में फ़रमाया गया कि हज़रते ईसा अ़लैहिस्सलाम को खुदाए तआ़ला ने ज़िन्दा उठा लिया। और काफ़ी हदीसों से यह बात साबित है कि यह अब भी हयाते ज़ाहिरी के साथ आसमानों पर तशरीफ़ फ़रमा है, कि़यामत के क़रीब ज़मीन पर तशरीफ़ लायेंगे और इस्लाम फैलायेंगे। लिहाज़ा इस्लामी नुक़्तए नज़र से फाँसी का वाकि़आ मन गढ़न्त है और ग़लत है जो यह अ़क़ीदा रखे कि ईसा अ़लैहिस्सलाम को फाँसी दे दी गई, वह मुसलमान नहीं बल्कि काफि़र है क्यूँकि वह .कुर्आन व हदीस का मुन्किर है।

टाई बाँधने वाले मुसलमान यह अक़ीदा तो नहीं रखते लेकिन बहरहाल ईसाईयों का एक मज़हबी अन्दाज़ अपनाने की वजह से वह एक बहुत बड़े गुनाह में मुब्तला हैं और टाई बाँधने के हराम होने में कोई शुबह नहीं। मुसलमानों को चाहिए कि वह इससे दूर रहें और ऐसे स्कूलों में जहाँ टाई बाँधना बच्चों के लिए लाज़िम हो, अपने बच्चों को न पढ़ायें या टाई का क़ानून कोशिश करके वहाँ से ख़त्म करायें।

मुसलमानो! अब तो आँखें खोलो। तुमने काफ़िरों की नक़ल की, उनके अन्दाज़ अपनाये लेकिन मौजूदा दौर के हालात से यह ख़ूब ज़ाहिर हो गया हैं कि वो फिर भी तुम्हारे दुश्मन ही रहे और तुम्हें मिटाने और क़त्ल करने में कोई कमी नहीं कर रहे हैं।

लिहाज़ा अब खुदारा अपने इस्लामी तरीक़े अपनाओ, सच्चे पक्के मुसलमान बनो। फिर देखना, खुदा व रसूल भी राज़ी होंगे और दुनिया में भी इज़्ज़त व अज़मत नसीब होगी। इस मौक़े पर यह भी जान लें कि जो लोग छोटे बच्चों में लड़कों को लड़कियों की तरह और लड़कियों को लड़कों की तरह लिबास पहनाते हैं। इसका अज़ाब व गुनाह भी उन्हीं पहनाने वालों पर है।

महफ़िले मीलाद में ज़िक्रे शहादत

कुछ लोग महफ़िले मीलाद में हज़रत सय्यिदेना इमामे हुसैन रदियल्लाहु तआला अन्हु और आपके भाईयों, भतीजों और भांजों की शहादत के वाक़िआत बयान कर देते हैं हालाँकि यह मुनासिब नहीं है।

महफ़िले मीलाद, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की विलादत की खुशी की महफ़िल है। इसमें ऐसे वाक़िआत बयान नहीं करना चाहिए जिनको सुनकर रंज व मलाल, ग़म और दुख हो।

आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत फ़रमाते हैं :

उलेमाए किराम ने मजलिसे मीलाद शरीफ़ में ज़िक्रे शहादत से मना फ़रमाया है कि वह मजलिसे सुरूर है, ज़िक्रे हुज़्न मुनासिब नहीं। (अहकामे शरीअत हिस्सा २ सफ़ा १४५)

अमानत में तसर्रुफ़

आजकल अमानत में तसर्रुफ़ आम हो गया है। उमूमन ऐसा होता है कि एक शख़्स ने दूसरे के पास कोई रक़म, रुपया, पैसा बतौरे अमानत रख दिया और वह उसकी इजाज़त के बग़ैर उसमें से यह सोचकर ख़र्च कर देता है या तिजारत में लगा देता है कि देने वाले को मैं अपने पास से दे दूँगा या अभी निकाल लूँ फिर बाद में पूरे कर दूँगा, यह सब गुनाह है और ऐसा करने वाले सब

गुनाह गार है ख़्वाह वह बाद में वह रक़म उसे पूरी वापस कर दें क्यूँकि अमानत में तसर्रुफ़ की इजाज़त नहीं।

मस्जिदों के मुतवल्लियों और मदरसों के मुहतमिमों में देखा गया है कि वह चन्दे के पैसों को इधर से उधर करते रहते हैं। कभी खुद अपनी ज़रूरतों में ख़र्च कर डालते हैं और ख़्याल करते हैं कि बाद में पूरा कर देंगे, ये सब खुदा के यहाँ पकड़े जायेंगे।

कुछ मुत्तक़ी, परहेज़गार व दीनदार बनने वाले तक इन बातों का ख़्याल नहीं रखते और हराम को हलाल की तरह खाते हैं और अमानत में तसर्रुफ़ ही आदमी को एक दिन नियत ख़राब और ख़यानत करने वाला बना देता है। यह सोच कर ख़र्च कर लेता है कि बाद में अपने पास से पूरा कर दूँगा और फिर नियत ख़राब हो जाती है और फिर बड़े बड़े परहेज़गार, हरामख़ोर हो जाते हैं। और खुदा के अज़ाब की फ़िक्र किये बग़ैर पराये माल को अपने की तरह खाने लगते हैं।

फ़तावा आ़लमगीरी में है :

एक शख़्स ने मस्जिद बनाने के लिए चन्दा किया फिर उसमें से कुछ रक़म अपने लिए ख़र्च कर ली फ़िर इतनी ही रक़म अपने पास से मस्जिद में ख़र्च कर दी तो ऐसा करना उसके लिए जाइज़ नहीं। (फ़तावा रज़विया जिल्द ८ सफ़ा २६, फ़तावा आलमगीरी, जिल्द २, किताबुल वक़्फ़, बाब १३, सफ़हा ४८०)

आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत फ़रमाते हैं :

ज़रे अमानत में तसर्रुफ़ हराम है, यह उन मवाज़ेअ़ में है जिनमें दराहिम व दनानीर मुतअ़य्यिन होते हैं। उसको जाइज़ नहीं कि उस रुपये के बदले दूसरे रुपये रख दे अगरचे बेऐनेही वैसा ही हो। अगर करेगा, अमीन न रहेगा।

फिर आगे ख़ास मदरसों के मुहतमिम हज़रात के बारे में फ़रमाते हैं :

मुहतमिमाने अन्जुमन ने अगर सराहतन भी इजाज़त दे दी हो कि तुम जब चाहना ख़र्च कर लेना फिर उसका इवज़ दे देना, जब भी न उसको तसर्रुफ़ जाइज़ न मुहतमिमों को इजाज़त देने की इजाज़त कि मुहतमिम मालिक नहीं और क़र्ज़ तबर्रुअ है और ग़ैरे मालिक को तबर्रुअ का इख़्तियार नहीं। हाँ चन्दा देने वाले इजाज़त दे जायें तो हर्ज नहीं।

(फ़तावा रज़वियः जिल्द ८ सफ़ा ३१)

पहले अमानत रखने वाले मुसलमानों का तरीक़ा था कि वह थैलियाँ रखते और हर अमानत अलग अलग एक थैली में महफ़ूज़ रखते और फिर जो लिया था, ख़ास उसी को लौटा देते।

भाईयो! ऐसे ही तरीक़े अपनाओ, अगर कुछ आख़िरत की भी फ़िक्र है, वरना आज तसर्रुफ़ करने वाले होंगे और कल ख़ाइन व नियत ख़राब क्यूँकि हर नफ़्स के साथ शैतान लगा हुआ है।

रात को देर तक जागना और सुबह को देर से उठना

आजकल रातों को जागने और दिन को सोने का माहौल बनता जा रहा है। हालाँकि .कुर्आने करीम की बाज़ आयात का मफ़हूम यह है कि हमने रात आराम के लिए बनाई और दिन काम करने के लिए। इस्लामी मिज़ाज यह है कि रात को इशा की नमाज़ पढ़कर जल्दी सो जाओ और सुबह को जल्द उठ जाओ। इशा की नमाज़ के बाद ग़ैर ज़रूरी फ़ालतू दुनियवी बातें करना मकरूह व ममनूअ़ हैं।

हदीस शरीफ़ में है :

रसूलुल्लाह ﷺ इशा की नमाज़ से पहले सोने को और इशा की नमाज़ के बाद बात चीत करने को नापसन्द फ़रमाते थे। यह हदीस बुख़ारी में भी है और मुस्लिम भी।

(मिश्कात बाबे तअ़जीलुस्सलात, फ़स्ले अव्वल, सफ़हा ६०)

बाज़ मुदर्रेसीन और तलबा को देखा गया है कि वह रात को किताबें देखते हैं और काफ़ी काफ़ी रात तक किताबों और उनके हाशिये में लगे रहते हैं और सुबह को फ़ज्र की नमाज़ क़ज़ा कर देते हैं या नमाज़ पढ़ते भी हैं तो इस तरह कि घड़ी देखते रहते हैं जब देखा कि दो चार मिनट रह गये और पानी सर से ऊँचा हो गया तो उठते हैं और जल्दी जल्दी वुज़ू करके नमाज़ में परिन्दों की तरह चार चोंचे मार कर मुसल्ले से अलग हो जाते हैं।

ऐसी नमाज़ को हदीसे पाक में हुज़ूर ने मुनाफ़िक़ की नमाज़ फ़रमाया और उनमें के वो लोग जो नमाज़ें छोड़ने या बेजमाअ़त के तंग वक़्त में मुनाफ़िक़ की सी नमाज़ पढ़ने के आदी हो गये हैं, उनके रात रात भर के मुतालेअ़ और किताबें देखना, उन्हें नमाज़ में काहिली और सुस्ती के अ़ज़ाब से बचा न सकेंगे।

दरअस्ल ये वो लोग हैं जो किताबें पढ़ते हैं मगर नहीं जानते कि इल्म क्या है। ये तलबीसे इब्लीस के शिकार हैं और शैतान ने इन्हें धोके में ले रखा है। कुछ का कुछ सुझा रखा है। ऐसे ही वो वाएज़ीन व मुक़र्रेरीन, जलसे करवाने वाले और जलसे करने वाले, तक़रीरें करने वाले और सुनने और सुनाने वाले; इस ख़्याल में न रहें कि उनके जलसे उन्हें नमाज़ें छोड़ने के अज़ाब से नजात दिलायेंगे। होश उड़ जायेंगे बरोज़े क़ियामत नमाज़ों में लापरवाही करने वालों के, और जल्दी जल्दी मुनाफ़िक़ों की सी नमाज़ पढ़ने वालों के चाहे यह अवाम हों या ख़वास, मुक़र्रिर हों या शाइर, मुदर्रिस हों या मुफ़्ती, सज्जादानशीन हों या किसी बड़े बाप के बेटे या बड़ी से बड़ी ख़ानक़ाह के मुजाविर। और बरोज़े क़ियामत जब नमाज़ों का हिसाब लिया जायेगा तो पता चलेगा कि कौन कौन कितना बड़ा ख़ादिमे दीन और इस्लाम का ठेकेदार था?

खुलासा यह कि रात को देर तक जागने और सुबह को देर से उठने की आदत अच्छी नहीं। हाँ अगर कोई शख़्स इल्मे दीन के सीखने या सिखाने या इबादत व रियाज़त में रात को जागे और फ़ज्र की नमाज़ भी एहतिमाम के साथ अदा कर ले तो वह मर्दे मुजाहिद है।

क्या नक़्द और उधार की अलग अलग क़ीमत रखना मना है?

अगर कोई शख़्स अपना माल किसी के हाथ बेचे और यह कहे कि अगर अभी क़ीमत अदा कर दोगे तो इतने में और उधार ख़रीदोगे तो इतने पैसे होंगे। मसलन अभी ३०० रुपये और उधार ख़रीदोगे, पैसे बाद में अदा करोगे तो ३५० रुपये देना होंगे, तो यह जाइज़ है। इसको कुछ लोग नाजाइज़ ख़्याल करते हैं और सूद समझते हैं, यह उनकी ग़लतफ़हमी है। यह सूद नहीं है।

हाँ अगर ख़रीदारी के वक़्त इस बात को खोला नहीं और माल ३०० रुपये में फ़रोख़्त कर दिया और रक़म अदा करने में उसने देर की तो उससे पैसे बढ़ा कर वसूल किये मसलन ३५० रुपये लिये तो यह सूद हो जायेगा। मतलब यह है कि उधार और नक़द का भाव अगर अलग अलग हो तो ख़रीदारी के वक़्त ही इसकी वज़ाहत कर दे बाद में उधार की वजह से रक़म बढ़ा कर लेना सूद और हराम है। (फ़तावा रज़विया, जिल्द १७, सफ़हा ९७, मतबूआ रज़ा फ़ाउन्डेशन, लाहौर; फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल जिल्द २ सफ़ा ३८०)

चापलूसी पसन्द मुतवल्ली और मुहतमिम

बाज जगह कुछ मस्जिदों के मुतवल्ली और मदरसों के मुहतमिमीन का यह मिजाज बन गया है कि उन्हें अच्छे भले पढ़े लिखे सलाहियत और दीनदार इमाम और मुदर्रिस अच्छे नहीं लगते, उनसे उनकी नहीं पटती। वह अच्छे लगते हैं, जो उनकी चापलूसी करते हैं, उनकी हाँ में हाँ मिलाते हैं, जब वह तशरीफ़ लायें तो उन्हें अपनी मसनद पर बिठायें, खुद एक तरफ़ को खिसक जायें और कभी कभी बे-ज़रूरत उनकी डाँट और फटकार भी सुन लें। ऐसे मुदर्रिस और इमाम आज के बाज़ मुतवल्लियों और मुहतमिमों को बहुत अच्छे लगते हैं ख़्वाह वह कुछ जानते हों या न बच्चों को पढ़ाते हों या वक़्त गुजारते हों, नमाज़ की पाबन्दी करें या न करें, .क़ुर्आने करीम ग़लत पढ़ते हों, उन्हें इससे कोई मतलब नहीं, बस उनकी खुशआमद करते रहें।

दरअस्ल ऐसे मुतवल्ली और मुहतमिम इस्लाम की बरबादी का सबब हैं और उन्होंने मस्जिदों को वीरान कर रखा है और मदरसों का तालीमी मेयार बिल्कुल ख़त्म कर दिया है और इस बरबादी की पूछ गछ उनसे क़ियामत के रोज़ बड़ी सख़्ती के साथ होगी।

दुआ है कि खुदाए तआला उन्हें होश अता फ़रमाये और ज़ात और नफ़्स से ज़्यादा उन्हें दीन और उसकी तरक़्क़ी से प्यार हो जाये, ख़्याल रहे कि इमामों, आलिमों, मौलवियों को परेशान करने वाले दुनिया व आख़िरत में जलील व रुसवा होंगे।

यह भी बैठकर रोने की बात है कि आज बाज़ मदरसों में चन्दा कर लेना मक़बूलियत का मेयार बन गया है। जो घूम फिर कर ज़्यादा से ज़्यादा चन्दा लाकर जमा कर दे वह महबूब व

मक़बूल है और भले सच्चे, पढ़े लिखे, क़ाबिल, बासलाहियत आलिम साहब बेचारे गिरी नज़रों से देखे जा रहे हैं।

हदीस पाक में रसूलुल्लाह ﷺ ने क़ियामत की निशानियों में से एक बात यह भी फ़रमाई थी कि "जब मुआमलात नाअहलों के सुपुर्द किये जाने लगें।"

यह आज ख़ूब हो रहा है। अहले इल्म व फ़ज़्ल को कोई पूछने वाला नहीं और नाअहल बेइल्म चापलूस ख़ुशामदी बातें बनाने वाले मसाजिद व मदारिस, मराकिज़ व दफ़ातिर पर क़ब्ज़ा जमाये बैठे हैं।

चन्दों की ज़्यादती

आजकल चन्दे बहुत बढ़ते जा रहे हैं। इन पर रोक लगाना बहुत ज़रूरी हो गया है जहाँ तक मदरसों और मस्जिदों का मुआमला है तो ये क़ौम की ऐसी ज़रूरतों में से हैं कि जिनके बग़ैर दीन बाक़ी नहीं रह सकता। लिहाज़ा उनके लिए अगर चन्दा लिया जाये तो कुछ हर्ज नहीं।

अलबत्ता गाँव गाँव मौलवियत की पढ़ाई के मदारिस खोलना मुनासिब नहीं है एक ज़िला में आलिम व फ़ाज़िल बनाने वाले दो चार मदारिस काफ़ी हैं। हाँ बासलाहियत इमाम मसाजिद में रखे जायें और वह बग़ैर लम्बी पूरी चन्दे की तहरीक चलाये, इमामत के साथ साथ दो तीन जमाअत तक बच्चों को मौलवियत की इब्तिदाई तालीम दें और फिर बड़े मदरसों में दाख़िल करा दें तो यह निहायत मुनासिब बात है और ख़ाली हाफ़िज़ बनाना और उन्हें इल्मे दीन और लिखने पढ़ने से महरूम रखना और इसी में उनकी उम्र गुज़ार देना उनके और क़ौम के हक़ में अच्छा नहीं है।

हाँ गाँव गाँव इस्लामी मकतब यअ़नी इस्लामी अन्दाज़ के प्राइमरी स्कूल क़ाइम करना बहुत ज़रूरी है जिसमें दीन की ज़रूरी तालीम के साथ साथ दुनिया की भी तालीम हो।

मस्जिद की जहाँ ज़रूरत हो वहाँ अगर कोई सेठ साहब यूँ ही बग़ैर दूसरों की मदद के बनवा दें तो वह यक़ीनन बहुत बड़े सवाब के मुस्तहिक़ होंगे और ऐसा न हो सके तो मस्जिद के लिए चन्दा करना और मस्जिद बनवाना निहायत बेहतर और उम्दा काम है लेकिन मस्जिद की तज़ईन और उसकी सजावट और ख़ूबसूरती के लिए ग़रीब, मज़दूर और नादार मुसलमानों पर चन्दे डालना और उन पर गाँव बसती का दबाव बना कर वसूलयाबी करना हरगिज़ मुनासिब नहीं है। दुनिया भर में रसीद बुकें लेकर घूमने और ग़रीब मज़दूरों पर दबाव बना कर चन्दा वसूल करने से सादा सी मस्जिद में नमाज़ पढ़ना बेहतर है। इस्लाम में मस्जिद का ख़ूबसूरत होना कुछ भी ज़रूरी नहीं है। बल्कि पहले के उलेमा ने तो मस्जिदों को सजाने और सँवारने से मना फ़रमाया है, बाद के उलेमा ने भी सिर्फ़ इजाज़त दी है, लाज़िम व ज़रूरी क़रार नहीं दिया है कि जिसके लिए गाँव गाँव फिरा जाये और दूर दूर के सफ़र किये जायें या ग़रीबों और मज़दूरों को सताया जाये।

यह तो रहा मस्जिदों और मदरसों का मुआमला इसके अलावा भारी भारी उर्स करने और ख़ानक़ाहें और मज़ारात तामीर कराने के लिए चन्दे की कोई ज़रूरत नहीं है। आपसे जो हो सके अक़ीदत व महब्बत में हलाल कमाई से कीजिए। दूसरों के ज़िम्मेदार आप नहीं हैं अगर दो चार आदमी भी यौमे विसाल पर किसी बुज़ुर्ग की ख़ानक़ाह में जाकर कुर्आने करीम की तिलावत कर दें और थोड़ा बहुत जो मयस्सर हो वह उनके नाम पर उनकी रूह के ईसाले सवाब के लिए खिलायें, पिलायें तो यह मुकम्मल उर्स है, जिसमें कोई कमी नहीं है।

और बख़ुशी बुज़ुर्गाने दीन के नाम पर जो कोई जो कुछ करे वह यक़ीनन इन्दल्लाह माजूर है और सवाब का मुस्तहिक़ है।

जलसे और जुलूस और कान्फ़्रेन्सों के नाम पर भी चन्दों को एक मख़सूस व महदूद तरीक़ा होना चाहिए क्यूँकि आज हिन्दुस्तान में क़ौमे मुस्लिम बदहाली और बेरोज़गारी का शिकार है। ग़रीबों, मज़दूरों और छोटे छोटे किसानों से चन्दे के नाम पर जबरन रक़मे वसूल करके १०-१०, २०-२० और ५०-५० लाख की हस्ती रखने वाले पेशावर मुक़र्रिरों और शाइरों को नज़राने के नाम पर लम्बी लम्बी रक़में भेंट चढ़ाना क़ौम के हक़ में कुछ बेहतर नहीं है।

टैन्ट और डेकोरेशन वालों को भरने के लिए घर घर चन्दा करते घूमना अक़्लमन्दी नहीं है। हाँ कीजिए और मख़सूस व महदूद तरीक़े से एक दाइरे में रह कर कीजिए और जब ज़रूरत हो तब कीजिए।

और आजकल तो जलसे मुशाइरे बन कर रह गये और जो मुक़र्रेरीन हैं उनमें भी अकसर वाज़ व नसीहत वाले नहीं रंग व रोग़न भरने वाले ज़्यादा हैं। और यह लम्बे लम्बे नज़राने पहले से तय करने वाले मुक़र्रेरीन व शाइरों को दूर दूर से बुलाना और उनके नख़रे और ठस्से उठाना, बड़े पैमाने पर लाइट व डेकोरेशन सजाना ज़्यादातर नाम व नमूद के लिए हो रहा है जो रियाकारी और दिखावा मालूम होता है और रियाकारी का कोई सवाब नहीं मिलता बल्कि अज़ाब होता है।

ख़ूब पब्लिक जुटाने और मजमा बढ़ाने, मुक़र्रिरों, शाइरों से तारीफ़ व तौसीफ़ सुनने के लिए हो रहा है। और जहाँ नाम व नमूद हो, रियाकारी और दिखावा हो, वहाँ चन्दे देने और दिलाने में कुछ भी सवाब नहीं है। कमेटी वालों का मक़सद सिर्फ़ यही है कि पब्लिक ख़ूब आ जाये ख़्वाह उन्हें कुछ हासिल हो या न हो। बल्कि बाज़ बाज़ जगह तो ये जलसे कराने वाले कमेटियों के सदर, सेक्रेटरी और ख़ज़ांची ऐसे तक हैं कि क़ौम से चन्दे करके

जलसे कराते हुए उन्हें मुद्दत हो गई मगर ख़ुद भी नमाज़ी और दीनदार नहीं बन सके हैं।

शराब, जुआ, लाटरी और सिनेमा के शौक़ तक उनसे नहीं छूट सके बल्कि अब तो बाज़ जगह जलसों के नाम पर चन्दा करके और थोड़ा ख़र्च करके लम्बी लम्बी रक़म बचाने की रिपोर्टें भी मिल रही हैं।

इस सबको लिखने से हमारा मतलब यह नहीं है कि जलसे बन्द कर दिये जायें। बल्कि जलसे किये जायें, मुख़्लिस वाएज़ीन व मुक़र्रेरीन से तक़रीरें कराई जायें। नातख़्वानी के लिए .क़ुर्ब व जवार के किसी ख़ुशगुलू से एक दो नातें पढ़वाई जायें। पेशावर शाइरों और मुक़र्रिरों को चन्दे करके लम्बी लम्बी रक़में न दी जायें और ये सब न हो सके तो जलसे करना कोई फ़र्ज़ वाजिब नहीं हैं। मस्जिदों में बासलाहियत इमाम रखे जायें और वह नामाज़े जुमा वग़ैरह में वअ़ज़ व तक़रीर करें और लोगों को उलेमाए अहले सुन्नत की किताबें पढ़ने की तरग़ीब दिलायें।

लड़कियों की शादी के लिए भी चन्दे करने की बीमारी आ़म हो गई है। हालाँकि यह चन्दा ग़ैर ज़रूरी इख़राजात (ख़र्चे) और शादी में नामवरी कमाने के लिए होता है।

इस्लाम में न जहेज़ वाजिब है, न बारात को खाना खिलाना। इसमें दख़ल लड़के वालों की ज़्यादती का भी है।

ख़ुलासा यह है कि बिल्कुल सादा निकाह भी कर दिया जाये तो यह बिला शुबह जाइज़ बल्कि आज के हालात के मुनासिब है।

लड़कियों की शादी के लिए भीक माँगने वाले अगर भीक माँगने के बजाय किसी ऐसे के साथ बेटी का निकाह कर दें, जो दूसरी शादी का ख़्वाहिशमन्द हो और दो औरतों का कफ़ील हो सके या तलाक़ दे चुका हो या उसकी बीवी मर गई हो य वह ग़रीब हो या उम्ररसीदा हो। और अपनी इन कमज़ोरियों की वजह

से शादी में इख़राजात का तालिब न हो, जैसा कि आजकल **माहौल** है तो यह उनके लिए भीक माँगने से हज़ारों दर्जे बेहतर है क्यूँकि लड़की की शादी के लिए भीक मॉगना गुनाह व नाजाइज़ है और जिन लोगों का अभी हमने ज़िक्र किया है, उनके साथ निकाह बिला शुबह जाइज़ है। हॉ वग़ैर सुवाल करे कोई ख़ुद ही से किसी की मदद करे तो इसमें कोई रोक टोक नहीं। लेकिन सुवाल करना और भीक माँगना, इस्लाम में सिवाय चन्द मख़सूस सूरतों के जो अहादीस व फ़िक़्ह की किताबों में मज़कूर हैं, हराम है। और जो सूरतें मज़कूर हुईं, उनमें शादी ब्याह के ग़ैर ज़रूरी मरासिम अदा करना हरगिज़ शामिल नहीं।

हराम तरीक़े से कमाकर राहे ख़ुदा में ख़र्च करना

यह बीमारी भी काफ़ी आ़म हो गई है। लोग कमाते वक़्त यह नहीं सोचते कि यह हराम है या हलाल। झूट, फ़रेब, मक्कारी, धोकेबाज़ी, बेईमानी, रिश्वतखोरी, सूद व ब्याज और मज़दूरों की मज़दूरी रोक रोक कर कमाते हैं और माल जमा कर लेते हैं और फिर राहे ख़ुदा में ख़र्च करने वाले सख़ी बनते हैं, ख़ूब मज़े से खाते हैं और यारों दोस्तों को खिलाते हैं, मस्जिद मदरसों और ख़ानक़ाहों को भी देते हैं, माँगने वालों को भी दे देते हैं। यह हराम कमा कर राहे ख़ुदा में ख़र्च करने वाले, न हरगिज़ सख़ी हैं, न दीनदार। बल्कि बड़े बेवक़ूफ़ और निरे अहमक़ हैं। हदीस पाक में है, ''हराम कमाई से सदक़ा और ख़ैरात क़बूल नहीं।''

(मिश्कात बाबुलकस्ब सफ़ा २४२)

यह ऐसा ही है जैसे कोई बेवजह जान बूझ कर किसी की आँख फोड़ दे और फिर पट्टी बाँध कर उसे ख़ुश करना चाहे।

भाईयो! ख़ूब याद रखो अस्ल नेकी और पहली दीनदारी

नेक कामों में खर्च करना नहीं है बल्कि ईमानदारी के साथ कमाना है। जो हलाल तरीक़े और दयानतदारी से कमाता है और ज़्यादा राहे खुदा में ख़र्च नहीं कर पाता है वह उससे लाखों दर्जा बेहतर है जो बेरहमी के साथ हराम कमा कर इधर उधर बॉटता फिरता है।

इन हराम कमाने वालों, रिश्वतख़ोरों, बेईमानों, अमानत में ख़्यानत करने वालों में यह भी देखा गया है कि कोई मदीना शरीफ़ जा रहा है और कोई अजमेर शरीफ़ और कलियर शरीफ़ के चक्कर लगा रहा है, हालॉकि हदीस शरीफ़ में है :

हज़रत सय्यिदेना मआज़ इब्ने जबल रदियल्लाहु तआला अन्हु को जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने यमन का हाकिम व गवर्नर बना कर भेजा तो आप उनको रुख़सत करने के लिए नसीहत फ़रमाते हुए उनकी सवारी के साथ साथ मदीना तय्यिबा से बाहर तक तशरीफ़ लाये। जब हुज़ूर वापस होने लगे तो फ़रमाया कि ऐ मआज़! इस साल के बाद जब तुम वापस आओगे तो मुझको नहीं पाओगे बल्कि मेरी क़ब्र और मस्जिद को देखोगे। हज़रत मआज़ यह सुनकर शिद्दते फ़िराक़ की वजह से रोने लगे तो रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया :-

''लोगों में मेरे सबसे ज़्यादा क़रीब परहेज़गार लोग हैं, चाहें वो कोई हों और कही भी हों।'' (मिश्कात सफ़ा ४४५)

यअ़नी हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने साफ़ तौर पर फ़रमा दिया कि अस्ल नेकी और दीनदारी और महब्बत, नज़दीकी और पास रहना और हाज़िरी नहीं है बल्कि परहेज़गारी यअ़नी बुरे कामों से बचना, अच्छे काम करना है ख़्वाह वो कहीं रह कर हों।

हज़रते उवैस क़रनी रदियल्लाहु तआला अन्हु हुज़ूर के ज़माने में थे लेकिन कभी मुलाक़ात के लिए हाज़िर न हुए मगर

हुज़ूर को इतने पसन्द थे कि उनसे मिलने और दुआए मग़फ़िरत कराने की वसीयत सहाबए किराम को फ़रमाई थी।

(सहीह मुस्लिम जिल्द २ सफ़ा ३११)

एक हदीस शरीफ़ में तो हुज़ूर ने उनके बारे में तो यहाँ तक फ़रमा दिया कि मेरी उम्मत के एक शख़्स की शफ़ाअत से इतने लोग जन्नत में जायेंगे कि जितनी तादाद क़बीलए बनू तमीम के अफ़राद से भी ज़्यादा होगी।

(मिश्कात बाबुलहौज़ वश्शफ़ाअह सफ़ा ४६४)

इस हदीस की शरह में उलेमा ने फ़रमाया कि 'उस शख़्स' से मुराद हज़रत सय्यिदेना उवैस क़रनी रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु हैं। (मिरक़ात जिल्द ५ सफ़ा २७८)

इन अहादीस से ख़ूब वाज़ेह हो गया कि अस्ल महब्बत पास रहना नहीं, हाज़िरी व चक्कर लगाना नहीं, बल्कि वह काम करना है, जिससे महबूब राज़ी हो।

ख़ुलासा यह कि जो लोग नमाज़ और रोज़े व दीगर अहकामे शरअ़ के पाबन्द हैं, हरामकारियों और हराम कामों से बचते हैं, वो ख़्वाह बुज़ुर्गों के मज़ारात पर बार बार हाज़िरी न देते हों, वो उनसे बदरजहा बेहतर और महब्बत करने वाले हैं जो ख़ुदा व रसूल की नाफ़रमानी करते, हराम खाते और हराम खिलाते, रात दिन गानों, तमाशों, जुए, शराब और लाटरी, सिनेमों में लगे रहते हैं ख़्वाह हर वक़्त मज़ार पर ही पड़े रहते हों। अलबत्ता वो लोग जो हज़राते अ़म्बियाए किराम और औलियाए इज़ाम की शान में गुस्ताख़ियाँ करते हैं, बेअदबी से बोलते हैं और उनकी बारगाहों में हाज़िरी को शिर्क व बिदअ़त क़रार देते हैं, उनके अ़क़ीदे इस्लामी नहीं, उनकी नमाज़ नमाज़ नहीं, उनके रोज़े रोज़े नहीं, उनकी तिलावत क़ुर्आन नहीं, उनकी दीनदारी इत्तिबाए रसूले अनाम नहीं, क्यूँकि अदब ईमान की जान है और बेअदब नाम का मुसलमान है।

हलाल कमाने और दीनदार बनकर रहने की तरकीब

जो शख्स हलाल कमा कर और दीनदार बन कर अल्लाह व रसूल को राजी करना चाहे, उसको चाहिए कि .फुज़ूलख़र्ची से बचे। आजकल लोगों ने अपने इख़राजात (ख़र्चे) बढ़ा लिये हैं और बेजा शौक़ और अरमान पूरे करने में लग गये हैं, ये कभी दीनदार नहीं बन सकते।

अगर आप सच्चे पक्के मुसलमान बनना चाहें तो आमदनी बढ़ाने से ज़्यादा फ़िक्र इख़राजात घटाने की रखिये क्यूँकि इख़राजात की ज़्यादती से आमदनी करने की हवस पैदा होती है और आमदनी करने की हवस इन्सान को बेरहम, ज़ालिम और हरामख़ोर बनाती है --- और जिनकी आदत आमदनी से ज़्यादा ख़र्च करने की पड़ गई है, वो कभी चैन व सुकून से नहीं रह पाते, ज़िन्दगी भर परेशान रहते हैं और आमदनी से कम ख़र्च करने वालों की ज़िन्दगी बड़ी पुरसुकून और बाइज़्ज़त रहती है। और यही लोग वक़्त बे वक़्त दूसरों के भी काम आ जाते हैं।

इन्हीं वुजूहात की बिना पर .कुर्आने करीम में ख़ुदाए तआला ने .फुज़ूलख़र्ची करने वालों को शैतान का भाई फ़रमाया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सादगी आधा ईमान है। आज साइंस की जदीद ईजादात ने भी इन्सान के इख़राजात और उसकी ज़रूरतों को बढ़ा दिया है। इस पर कन्ट्रोल करने की ज़रूरत है। घर गृहस्थी की ज़रूरतों में एक दरमियानी रवय्या अपनाया जाये।

अफ़सोस कि आज हम दो चार जोड़ी कपड़ों में ज़िन्दगी नहीं गुज़ार सकते बल्कि जोड़ों पर जोड़े बनाये चले जा रहे हैं। अफ़सोस कि आज मज़बूत और पक्का मकान बनाकर भी चैन से

नहीं रहते बल्कि उनको सजाने और सँवारने में लाखों लाख रुपया उड़ाये चले जा रहे हैं।

कुछ लोग शेख़ीख़ोरी की वजह से परेशान रहते हैं, उनकी यह आदत उन्हें ज़हनी सुकून हासिल नहीं होने देती। उन्हें हर वक़्त यह फ़िक्र रहती है कि अगर हम ऐसा कपड़ा पहन कर नहीं जायेंगे या ऐसा मकान नहीं बनायेंगे या ऐसा खाना नहीं खायेंगे और खिलायेंगे तो लोग क्या कहेंगे?

भाईयो! लोगों के कहने को मत देखो बल्कि अपने हाल और आमदनी को देखो। अगर आप पर अभी कोई वक़्त पड़ जाये तो यही मुँह बजाने वाले पास तक नहीं आयेंगे, क़र्ज़ तक देने को तय्यार नहीं होंगे। हदीस पाक में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया :-

"दुनिया में ज़िन्दगी मुसाफ़िर परदेसी की तरह गुज़ारो और ख़ुद को क़ब्र वालों में समझो।" (मिश्कात सफ़ा ४५०)

यअनी मुसाफ़िर और परदेसी जिस तरह कम से कम सामाने ज़िन्दगी के साथ सफ़र करता है यूँ ही तुम भी दुनिया में एक मुसाफ़िर की तरह हो।

इस बयान से हमारा मतलब यह नहीं है कि ख़ुदाए तआला हलाल कमाई से दे तो अच्छा खाना और पहनना नाजाइज़ है बल्कि हमारा मक़सद ग़ैर ज़रूरी और फ़ालतू इख़राजात से बाज़ रखना है ताकि कहीं आप कमाने की ज़्यादा फ़िक्र में बेईमान, ख़ाइन और हरामख़ोर न बन जायें और दीनदारी की ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए इख़राजात पर क़ाबू रखना और फ़ुज़ूलख़र्चियों से बचना ज़रूरी है।

और इस बारे में जाइज़ व नाजाइज़ की हुदूद जानने के लिए फ़िक़्ह व तसव्वुफ़ की किताबों का मुतालआ करना चाहिए। ख़ासकर सदरुश्शरीआ हज़रत मौलाना अमजद अली साहब

अलैहिर्रहमतु वर्रिद्वान की किताब 'बहारे शरीअ़त' का सोलहवाँ हिस्सा पढ़ लेना एक मुसलमान के लिए फ़ी ज़माना निहायत ज़रूरी है।

हिन्दी पढ़ने वालों की आसानी के लिए बहारे शरीअ़त का सोलहवाँ हिस्सा 'इस्लामी अख़लाक़ व आदाब' के नाम से हिन्दी मे भी आ चुका है।

आजकल जो बेईमानों, बेरहमी और ज़ुल्म करके कमाने वालों और पराये माल को अपना समझने वाले रिश्वतख़ोरों की तादाद ज़्यादा बढ़ गई है, यहाँ तक कि वो लोग जो मुआ़मलात के साफ़ सुथरे हों, उनकी गिनती अब न होने के बराबर है, इस सबकी ख़ास वजह आजकल बेजा इख़राजात और फ़ुज़ूलख़र्चियाँ हैं।

ख़ुलासा यह कि हरामख़ोरी से बचने और दीनदार बनकर जो शख़्स ज़िन्दगी गुज़ारना चाहे, उसके लिए .फ़ुज़ूलख़र्ची से बचना और सादा ज़िन्दगी गुज़ारना आजक़ल ज़रूरी हैं।

अ़ज़ीम शख़्सियतों को मनवाने का तरीक़ा

कुछ लोग जो शख़्सियत परस्ती में हद से आगे बढ़े हुए हैं, वो अपनी महबूब और पसन्दीदा शख़्सियतों को दूसरों से मनवाने के लिए लड़ाई झगड़ा करते हैं। और जो महब्बत उन्हें है, वो अगर दूसरा न करे तो बुरा मानते और उसे गुमराह और बद्दीन तक ख़्याल कर बैठते हैं, और ज़बरदस्ती उससे मनवाना चाहते हैं। हालाँकि महब्बत कभी भी ज़बरदस्ती नहीं पैदा की जा सकती और न सिर्फ़ फ़तवे लगाकर और न उन महबूब बन्दों और बुज़ुर्गों के नाम के नारे लगा कर और न जोशीली और जज़्बाती तक़रीरें करके।

बल्कि तरीक़ा यह है कि जो वाक़ेई बुज़ुर्ग साहिबे किरदार, अल्लाह वाले लोग हैं यअ़नी हक़ीक़त में वह इस्लामी नुक़्तए नज़र से अ़ज़ीम शख़्सियत के मालिक हैं तो उनका वह किरदार और तरीक़ए ज़िन्दगी, कारनामे और दीनी ख़िदमात, ख़ुदातरसी और नफ़्सकुशी संजीदा अन्दाज़ में समझाने के तौर पर तक़रीर या तहरीर के ज़रीए लोगों के सामने लाइये और जिन बातों की बुनियाद पर आपको उस साहिबे इल्म व फ़ज़्ल से महब्बत है, वो बातें दूसरों को बताइये। अगर वह भी उनका आशिक़ व दीवाना हो जाये तो ठीक और न हो तो कोशिश आपका काम, अब आप ज़बरदस्ती मनवाने की कोशिश न कीजिए। हाँ जो लोग आ़मतौर पर बुज़ुर्गों की शान में गुस्ताख़ी करते हैं या ऐसे आलिम व बुज़ुर्ग कि जिनकी बुज़ुर्गी व बरतरी पर पूरी उम्मते मुस्लिमा इत्तिफ़ाक़ कर चुकी हो उनकी शान में बकवास करते हैं, वो यक़ीनन गुमराह व बददीन हैं। वो अगर समझाने से न समझें तो उनसे दूरी और बेज़ारी ज़रूरी है। और जो गुस्ताख़ी व बेअदबी न करता हो लेकिन आपकी तरह अक़ीदत व महब्बत भी न रखता हो तो उसके मुआ़मले में ख़ामोशी बेहतर है। और उसके ख़्यालात बेहतर हैं, इस्लामी हैं तो उसको मुसलमान ही ख़्याल किया जाये, और अपना इस्लामी भाई समझा जाये।

इस्लामी शख़्सियतों और अपने बुज़ुर्गों, पीरों या मशाइख़ को दूसरों से मनवाने के लिए सबसे ज़्यादा उम्दा तरीक़ा और बेहतर ढंग आपका किरदार है। आज ऐसे लोग बहुत हैं जो हराम व हलाल में तमीज़ नहीं रखते, नमाज़ें छोड़ते, गाने, बजाने और तमाशों में लगे रहते हैं, उनकी नियतें ख़राब हो चुकी हैं, उनमें इस्लामी अख़लाक़ नाम की कोई चीज़ नहीं है और फिर ये बुज़ुर्गों के नाम के ठेकेदार बनते हैं, उर्स कराते, मज़ार बनवाते और

उनके नाम की लम्बी लम्बी नियाज़ें दिलवाते हैं, उनके नाम पर जलसे, जुलूस और महफ़िलों का इनइक़ाद करते हैं तो ये लोग क़ौम को बुज़ुर्गों से क़रीब करने के बजाय दूर कर रहे हैं और उनके ये ढंग लोगों के दिलों में अल्लाह वालों की महब्बत कभी भी पैदा न कर सकेंगे।

भाईयो! अल्लाह वालों से महब्बत करने वाले और उनकी महब्बत का बीज दूसरों के दिलों में बोने वाले वो हैं जिन्हें देखकर अल्लाह वालों की याद आ जाये। और अल्लाह वाले वो हैं जिन्हें देखकर अल्लाह की याद आ जाये। वरना ये पराये माल पर नज़र रखने वाले, हरामख़ोर, बेईमान, नियतख़राब लोग ख़ुदाए तआला के उन बन्दों की अज़मत व इज़्ज़त लोगों के दिलों में नहीं बिठा सकेंगे कि जिन्होंने अपना सब कुछ राहे ख़ुदा में लुटा दिया। और लालच के पिटारे, करोड़पति बनने की तमन्ना रखने वाले मुक़र्रेरीन, शाइरों, क़व्वालों, नामनिहाद पीरों, फ़क़ीरों के ज़रीए से अल्लाह वालों की अज़मत व इज़्ज़त के झन्डे नहीं गाड़े जा सकते।

ज़रूरी है कि मुरीद अपने पीर का, शागिर्द अपने उस्ताद का और हर मुअतक़िद अपने महबूब का नमूना हो तो तभी उससे अपने शैख़ और उस्ताद के कारनामे उजागर होंगे, और उससे उनकी अज़मत लोगों के दिलों में बैठेगी। और जो लोग किसी बुज़ुर्ग के कारनामे और उसकी इस्लामी ख़िदमात अपने चाल व चलन, किरदार व गुफ़्तार के ज़रीए बताये बग़ैर ज़बरदस्ती उस बुज़ुर्ग शख़्सियत को लोगों से मनवाने में लगे हैं, वो क़ौम में गिरोहबन्दी, तिफ़रक़ाबाज़ी कर रहे हैं और क़ौमे मुस्लिम को बिखेर रहे हैं, मुसलमानों को बाँट रहे हैं।

फ़िल्मी गानों की तर्ज़ पर नातें और मनक़बतें पढ़ना

आजकल जलसों और मुशाइरों में शाइर व नातख़्वाँ लोग फ़िल्मी गानों की तर्ज़ पर उनकी लय और सुर में हम्द, नात व मनक़बत पढ़ने लगे हैं हालाँकि यह मना है। उन्हें इन हरकात से बाज़ रहना चाहिए और मुसलमानों को चाहिए कि ऐसे लोगों से हरगिज़ नज़्में न सुनें।

आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत फ़रमाते हैं :

अगर गाने की तर्ज़ पर रागिनी की रिआयत हो तो नापसन्द है कि यह अम्र ज़िक्र शरीफ़ के मुनासिब नहीं।

(फ़तावा रज़विया जिल्द १० क़िस्त २ सफ़ा १८५)

बेऔलाद मर्दों और औरतों के लिए ज़रूरी हिदायात

औलाद दुनिया में अल्लाह तआ़ला की बहुत बड़ी नेमत है लिहाज़ा जिसको अल्लाह तआ़ला यह नेमत अता फ़रमाये, उसको चाहिए कि वह ख़ुदाए तआ़ला का शुक्र अदा करे और अगर न दे तो सब्र करे। मगर आजकल कुछ मर्द और औरतें औलाद न होने की वजह से परेशान रहते हैं और इस कमी को ज़्यादा महसूस करते हैं। हालाँकि यह अहले ईमान की शान नहीं। मोमिन को दुनिया और उसकी नेमतों के हासिल होने की ज़्यादा फ़िक्र नहीं करना चाहिए, ज़्यादा फ़िक्र व ग़म आख़िरत का होना चाहिए। अगर आपने अपनी आख़िरत सुधार ली तो दुनिया की किसी नेमत के न पाने का ज़्यादा ग़म नहीं करना चाहिए। औलाद अल्लाह की नेमत ज़रूर है लेकिन समझ वालों के लिए यह बात भी क़ाबिले

ग़ौर है कि माल और औलाद को अल्लाह जल्ला शानुहु ने अपने .कुर्आन में दुनिया की रौनक़ फ़रमाया, आख़िरत की नहीं।

फ़रमाता है :-

اَلْمَالُ وَ الْبَنُوْنَ زِيْنَةُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا الخ الاية

माल और बेटे दुनियवी ज़िन्दगी का सिंगार हैं और बाक़ी रहने वाली अच्छी बातें हैं, उनका सवाब तुम्हारे रब के यहाँ बेहतर और वो उम्मीद में सबसे भली।

(सूरह कहफ़ पारा १६ रुकूअ़ १८)

.क़ुर्आने करीम में माल और औलाद को फ़ितना यअ़नी आज़माइश भी कहा गया है, जिसका मतलब यह है कि इन चीज़ों को हासिल करके अगर ख़ुदा व रसूल का हक़ भी अदा करता रहा तब तो ठीक, और माल व औलाद की महब्बत में अल्लाह व रसूल को भूल गया, हराम व हलाल का फ़र्क़ खो बैठा तो यह निहायत बुरी चीज़ें हैं। अलबत्ता नेक औलाद आख़िरत का भी सरमाया है लेकिन आने वाले ज़माने में औलाद के नेक होने की उम्मीदें काफ़ी कम हो गई हैं।

ख़ुदाए तआ़ला के महबूब बन्दों यअ़नी अल्लाह वालों में भी ऐसे बहुत से लोग हुए हैं जिनके औलाद न थी। सरकारे दो आलम हजरत रसूले पाक मुहम्मद मुस्तफ़ा स़ल्लल्लाहु तआ़ला अलैहि वसल्लम की सबसे प्यारी बीवी सय्यिदा आ़इशा सिद्दीक़ा रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हा के भी कोई औलाद न थी। बल्कि हुज़ूर की ग्यारह बीवियाँ थीं, जिनमें से आपकी औलाद सिर्फ़ दो से हुई। सहाबा किराम में हज़रते सय्यिदेना बिलाल हबशी रदियल्लाहु अ़न्हु भी बेऔलाद थे।

हमारे कुछ भाई और बहनें बेऔलाद होने की वजह से हर वक़्त कुढ़ते रहते हैं और ज़िन्दगी भर दवा दारू और दुआ तावीज़ कराते रहते हैं और लूट खसोट मचाने वाले कुछ डाक्टर व हकीम

और करने धरने वाले कठमुल्ले और मियाँ फकीर, उनकी कमजोरी से खूब फाइदे उठाते, चक्कर पर चक्कर लगवाते यहाँ तक कि उन्हें बरबाद कर देते हैं।

और डाक्टर व हकीमों और करने धरने वालों में आजकल मक्कारों, फरेबकारों की तादाद बहुत बढ़ गई है। कुछ टोका टाकी करने वाली और मशविरे देने वाली बूढ़ी औरतें, उन बेचारों को चैन से नहीं बैठने देतीं। और नये नये हकीमों, डाक्टरों और करने धरने वालों के पते बताती रहती हैं। यहाँ से छूटे तो वहाँ पहुँचे और यहाँ से निकले तो वहाँ फँसे। बेचारों की इसी में कट जाती है।

भाईयो! सब्र से बड़ी कोई दवा नहीं और शुक्र से बड़ा कोई तावीज़ नहीं। इससे हमारा मतलब यह नहीं है कि बेऔलाद दुआ और तावीज़ न करें। बल्कि हमारा मक़सद यह बताना है कि थोड़ा बहुत इलाज भी करा लें। और अच्छे भले मौलवी, आलिमों, पीरों, फ़क़ीरों से दुआ तावीज़ भी करा लें, अगर कामयाबी हो जाये तो ठीक, सुब्हानल्लाह! खुदाए तआ़ला मुबारक फ़रमाये। और न हो तो सब्र से काम लें, खुदाए तआ़ला की इबादत, उसका ज़िक्र और .कुर्आन की तिलावत में ध्यान लगायें। ज़्यादा हकीमों डाक्टरों और करने वालों के दरवाज़ों के चक्कर न लगायें और इसमें ज़िन्दगी की क़ीमती घड़ियों को न गँवायें, आख़िर होना वही है, जो खुदाए तआ़ला की मर्ज़ी है।

और एक ज़रूरी बात यह भी है कि अब क़रीबे क़ियामत जो ज़माना आ रहा है, उसमें ज़्यादातर औलाद नअहल निकल रही है और तजुर्बा शाहिद है कि अब औलाद से लोगों को सुकून कम ही हासिल होगा। और अब बुढ़ापे में माँ बाप को कमा कर खिलाने वाले बहुत कम, न होने के बराबर और नोच नोच कर खाने वाले ज़्यादा पैदा होंगे। आज लाखों की तादाद में साहिबे औलाद बूढ़े

और बुढ़ियें सिर्फ़ इसलिए भीक मांगते घूम रहे हैं कि उनकी औलाद ने जो कुछ उनके पास था, वह या तो ख़त्म कर दिया या अपने क़ब्ज़े में कर लिया और माँ बाप को भीक मांगने के लिए छोड़ दिया। बल्कि बाज़ तो माँ बाप से भीक मंगवा कर ख़ुद खा रहे हैं और अपने बच्चों को खिला रहे हैं। गोया कि अब माँ बाप इसलिए नहीं हैं कि बुढ़ापे में औलाद की कमाई खायें बल्कि इसलिए हैं कि मरते दम तक उन्हें कमा कर खिलायें ख़्वाह इसके लिए उन्हें भीक ही क्यूँ न मांगना पड़े।

आज कितने लोग हैं कि उनकी ज़िन्दगी चैन व सुकून और शान के साथ कटी। लेकिन औलाद की वजह से बुरे दिन देखने को मिले। किसी को लड़के की वजह से जेल और थाने जाना पड़ा और पुलिस की खरी खोंटी सुनना पड़ीं और किसी की जवान लड़की ने नाक कटवा दी और पूरे घर की इ़ज़्ज़त ख़ाक में मिला दी, चार आदमियों में बैठने के लाइक़ नहीं छोड़ा।

इस सबसे हमारा मक़सद यह नहीं है कि औलाद मुतलक़न कोई बुरी चीज़ है या बेऔलाद औलाद हासिल करने के लिए बिल्कुल कोशिश न करें। बल्कि बात वही है जो हम लिख चुके कि ख़ुदाए तआ़ला नेक औलाद दे तो, मुबारक! उसका शुक्र अदा करें और न दे तब भी परेशान न हों। मामूली दवा व तदबीर के साथ साथ सब्र व शुक्र ही से काम लें।

और यह बता देना भी ज़रूरी है कि बदमज़हब व बददीन या ख़ुदा व रसूल और माँ बाप की नाफ़रमान, बिगड़ी हुई, चोर, डकैत, शराबी, ज़िनाकार, हरामकार, अ़य्याश व बदमआ़श औलाद वाला होने से वो लोग बहुत अच्छे हैं, जिनके औलाद नहीं।

ग़ैर मुस्लिमों से गोश्त मँगाने का मसअला

ग़ैर मुस्लिम की दुकान से गोश्त ख़रीद कर खाना या किसी ग़ैर मुस्लिम से हदिया और तोहफ़े में कच्चा या पका हुआ गोश्त लेकर खाना हराम है ख़्वाह वह यह कहे कि मैंने जानवर मुसलमान से ज़ुबह कराया था। यअ़नी मुसलमान का ज़बीहा बताये तब भी उससे गोश्त लेना, ख़रीदना और खाना सब हराम है। हाँ अगर ज़ुबह होने से लेकर जब तक मुसलमान के पास आया हर वक़्त मुसलमान की नज़र में रहा तो यह जाइज़ है।

(फ़तावा रज़विया ज़िल्द १० निस्फ़ अव्वल सफ़ा ६४)

हाँ अगर गोश्त किसी मुसलमान की दुकान से लाया गया लेकिन ख़रीद कर लाने वाला नौकर, मज़दूर वग़ैरह कोई ग़ैर मुस्लिम हो और वह कहे कि मैंने यह गोश्त मुसलमान की दुकान से ख़रीदा है और आप भी जानते हैं कि यह मुसलमान की दुकान से ख़रीदकर लाया है तो उस गोश्त को खाना जाइज़ है।

जामेअ़ सग़ीर में है :-

وَمَنْ اَر سَلَ اَجِيْرًا لَهُ مَجُوْسِيًا اَوْ خَادِمًا فَاشْتَرٰى لَحْمًا فَقَالَ اِشْتَرَيْتُهُ مِنْ يَهُوْدِيِّ
اَوْ نَصْرَانِى اَوْ مُسْلِمٍ وَسَعَهُ اَكْلُهُ وَاِنْ كَانَ غَيْرَ ذَالِكَ لَمْ يَسْعَهُ اَكْلُهُ

(हिदाया जिल्द ४ सफ़ा ४३७)

बहारे शरीअ़त हिस्सा १६ सफ़ा ३६ पर भी इसकी वज़ाहत मौजूद है।

ख़ुलासा यह कि मुसलमान की दुकान का गोश्त जाइज़ है ख़्वाह ख़रीद कर लाने वाला नौकर या मज़दूर ग़ैर मुस्लिम हो और ग़ैर मुस्लिम की दुकान का गोश्त हराम है ख़्वाह ख़रीद कर लाने वाला मुसलमान ही क्यूँ न हो और अगर ज़ुबह शरई से लेकर किसी वक़्त मुसलमान की नज़र से ग़ाइब न हुआ तो यह भी जाइज़ है।

मुहर्रम व सफ़र में ब्याह शादी न करना और सोग मनाना

माहे मुहर्रम में कितनी रसमें, बिदअ़तें और खुराफ़ातें आजकल मुसलमानों में राइज हो गई हैं उनका शुमार करना भी मुश्किल है। उन्हीं में से एक यह भी कि यह महीना सोग और ग़मी का महीना है। इस माह में ब्याह शादी न की जायें। हालांकि इस्लाम में किसी भी मय्यत का तीन दिन से ज़्यादा ग़म मनाना नाजाइज़ है और इन अय्याम में ब्याह शादी को बुरा समझना गुनाह है। निकाह साल के किसी दिन में मना नहीं, चाहे मुहर्रम हो या सफ़र या और कोई महीना या दिन।

आलाहज़रत अ़लैहिर्रहमतु वर्रिद्वान से पूछा गया :

(१) बाज़ अहलेसुन्नत व जमाअ़त अशरए मुहर्रम में न तो दिन भर रोटी पकाते हैं और न झाड़ू देते हैं कहते हैं बादे दफ़न ताज़िया रोटी पकाई जाएगी।

(२) दस दिन में कपड़े नहीं उतारते।

(३) माहे मुहर्रम में ब्याह शादी नहीं करते।

(४) इन अय्याम में सिवाए इमाम हसन और इमाम हुसैन रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुमा के किसी और की नियाज़ व फ़ातिहा नहीं दिलाते यह जाइज़ है या नाजाइज़? तो आप ने जवाब में फ़रमाया पहली तीनों बातें सोग हैं और सोग हराम और चौथी बात जहालत। हर महीने में हर तारीख़ में हर वली की नियाज़ हर मुसलमान की फ़ातिहा हो सकती है।

(अहकामे शरीअ़त, हिस्सा अव्वल, सफ़हा १२७)

दर अस्ल मुहर्रम में ग़म मनाना सोग करना फ़िरक़ए मलऊ़ना शीओं और राफ़िज़ियों का काम है और खुशी मनाना मरदूद ख़ारिजियों का का शेवा और नियाज़ व फ़ातिहा दिलाना, नफ़्ल

पढ़ना, रोज़े रखना मुसलमानों का काम है।

यूंही मुहर्रम में ताज़ियादारी करना, मरसूनुई करबलायें बनाना, उनमें मेले लगाना भी नाजाइज़ व गुनाह है।

मर्दों का एक से ज़्यादा अंगूठी पहनना

इस्लामी नुक़्तए नज़र से मर्द को चांदी की सिर्फ़ एक अंगूठी एक नग की पहनना जाइज़ है जिसका वज़न साढ़े चार माशे (4.357 ग्राम) से कम हो। इसके अलावा मर्द के लिए कोई ज़ेवर हलाल नहीं। एक से ज़्यादा अंगूठी या कोई ज़ेवर किसी भी धात का हो सब गुनाह व नाजाइज़ है।

मगर आजकल अवाम तो अवाम बाज़ जाहिल नाम निहाद सूफ़ियों और मुख़ालिफ़े इस्लाम पीरों ने ज़्यादा से ज़्यादा अंगूठी पहनने को अपने ख़्याल में फ़क़ीरी व तसव्वुफ़ समझ रखा है यह एक चांदी की शरई अंगूठी से ज़्यादा अंगूठिया पहनने वाले ख़्वाह वह सोने की हों या चांदी की या और किसी धात की सब के सब गुनाहगार हैं और इस लाइक़ नहीं कि उन्हें पीर बनाया जाए। हमारे कुछ भाई तांबे, पीतल और लोहे के छल्ले पहनते हैं और उन्हें दर्द और बीमारी की शिफ़ा ख़्याल करते हैं यह भी ग़लत है। और इलाज के तौर पर भी नाजाइज़ ज़ेवरात छल्ले वग़ैरा पहनना जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा रज़विया, जिल्द १०, निस्फ़े अव्वल, सफ़हा १४)

कुछ लोग यह कहते हैं कि यह छल्ला या अंगूठी हम मक्का, मदीना या अजमेर से लाए हैं। अगर वह ख़िलाफ़े शरअ़ है तो मक्के, मदीने, अजमेर के बाज़ार में बिकने से हलाल नहीं हो जाएगी।

भाईयो! आप तो आज वहाँ के बाज़ारों से लाए हैं और यह

नाजाइज़ होने का हुक्म चौदा सौ साल क़ब्ल वहीं से आ चुका है।

खुलासा यह कि मुक़द्दस शहरों में बिकने से हराम चीज़ हलाल नहीं हो जाती।

भाईयो! अल्लाह तआ़ला से डरो और नाजाइज़ अंगूठियां, ज़ेवरात, कड़े, छल्ले पहन कर अल्लाह की नाफ़रमानी न करो।

अमरीकन गाय का शरई हुक्म

अमरीकन गाय के बारे में काफ़ी लोग शुकूक व शुबहात में मुबतला हैं जबकि इस में कोई शक नहीं कि अमरीकन गाय भी बिला शुबहा गाय है उसका खाना हलाल और उसका दूध, घी, खाना पीना जाइज़ है।

दवा खाने पीने से पहले बिस्मिल्लाह न पढ़ना

यह भी ग़लत और एक जाहिलाना ख़्याल है बल्कि दवा खाने पीने से पहले बिस्मिल्लाह ख़ास तौर से ध्यान करके ज़रूर पढ़ना चाहिए ताकि नामे ख़ुदा से जल्द शिफ़ायाब हो क्यूंकि बीमारियां और उनकी शिफ़ा अल्लाह की तरफ़ से है।

हाथ उठा कर या सिर्फ़ इशारे से सलाम का जवाब देना

सलाम करने या सलाम का जवाब देने में आजकल सिर्फ़ इशारा कर देना या हाथ उठा देना या थोड़ा सा सर हिला देना काफ़ी राइज हो गया है। हालांकि इस तरह सलाम की सुन्नत अदा नहीं होती और अगर किसी ने सलाम किया और उसके जवाब में सिर्फ़ यही किया मुँह से वअ़लैकुमुस्सलाम न कहा तो गुनाहगार भी हुआ। आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

"बन्दगी आदाब, तसलीमात वग़ैरा अल्फ़ाज़ सलाम से नहीं और सिर्फ़ हाथ उठा देना काफ़ी नहीं जब तक उसके साथ कोई लफ़्ज़ सलाम का न हो।"

(फ़तावा रज़विया, जिल्द १०, निस्फ़े अव्वल, सफ़हा १६८)

ओझड़ी खाना

ओझड़ी और आंतें खाना जाइज़ नहीं। कुर्आन करीम में है

وَيُحَرِّمُ عَلَيْهِمُ الْخَبٰٓئِثَ

तर्जमा : और वह नबी गन्दी चीज़ें हराम फ़रमायेंगे।

और "ख़बाइस" से मुराद वह चीज़ें हैं जिन से सलीमुत्तबअ़ लोग घिन करें और ओझड़ी और आंतें खाने से भी सलीमुत्तबअ़ लोग घिन करते हैं और यह गन्दी चीज़ें हैं लिहाज़ा इनका खाना जाइज़ नहीं है। आलाहज़रत ने अपने रिसाले "अलमनहुल मलीहा" में इस सब को तसरीह व तफ़सील से बयान फ़रमाया है।

सफ़र के महीने का आख़िर बुध

कुछ जगह लोग सफ़र के महीने के आख़िरी बुध के बारे में यह ख़्याल करते हैं कि इस रोज़ हुज़ूर ﷺ ने मर्ज से शिफ़ा पाई थी। लिहाज़ा इस दिन ख़ुशी मनाते हैं। खाने, शीरीनी वग़ैरा खाते खिलाते हैं, जंगल की सैर को जाते हैं और कहीं पर लोग इसको मनहूस ख़्याल करते हैं और बरतन तोड़ डालते हैं हालांकि सफ़र के आख़िरी बुध की कोई अस्ल नहीं। न उस दिन हुज़ूर ﷺ के लिए मर्ज़ से सेहतयाबी का कोई सबूत। बाज़ जगह कुछ लोग इस दिन को मनहूस ख़्याल करके बरतनों वग़ैरा को तोड़ते हैं यह भी फ़ुज़ूलख़र्ची और गुनाह है। ख़ुलासा यह कि सफ़र के महीने के आख़िरी बुध की इस्लाम में कोई ख़ुसूसियत नहीं।

(फ़तावा रज़विया, जिल्द १०, निस्फ़े अव्वल, सफ़हा ११७)

औलाद को आक़ करने का मसअला

बाज़ लोग अपनी औलाद के बारे में यह कह देते हैं कि मैंने इसको आक़ कर दिया और उसका मतलब यह ख़्याल किया जाता है कि अब वह आक़ की हुई औलाद बाप के मरने के बाद इसकी मीरास से हिस्सा नहीं पाएगी हालांकि यह एक बेकार बात है और आक़ कर देना शरअ़न कोई चीज़ नहीं है और न बाप के यह लफ़्ज़ बोलने से उसकी औलाद जाएदाद में हिस्से से महरूम होगी बल्कि वह बदस्तूर बाप की मौत के बाद उसके तरके में शरई हिस्से की हक़दार है।

हाँ माँ बाप की नाफ़रमानी और उनको ईज़ा देना बड़ा गुनाह है और जिसके वालिदैन उससे नाख़ुश हों वह दोनों जहाँ में इताब व अज़ाबे इलाही का हक़दार है और सख़्त महरूम हैं।

सय्यिदी आलाहज़रत रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु इरशाद फ़रमाते हैं : "आक़ कर देना शरअ़न कोई चीज़ नहीं न उससे विलायत ज़ाइल हो।" (फ़तावा रज़विया, जिल्द ५, सफ़हा ४१२)

साली और भावज से मज़ाक़ करना

बाज़ लोग साली और भावज से मज़ाक़ करते बल्कि उसे अपना हक़ ख़्याल करते हैं और उन्हें इस क़िस्म की बातों से रोका टोका जाए तो कहते हैं कि हमारा रिश्ता ही ऐसा है हालांकि इस्लाम में यह मज़ाक़ हराम बल्कि सख़्त हराम जहन्नम का सामान है। औरतों और मर्दों के दरमियान मख़सूस मामलात से मुतअ़ल्लिक़ गन्दी और बेहूदा बातें ख़्वाह खुले अल्फ़ाज़ में कही जायें या इशारों किनायों में सब मज़ाक़ हैं और हराम है। हदीस शरीफ़ में जेठ, देवर और बहनोई से पर्दा करने की सख़्त ताकीद आई है। और जिस तरह मर्दों के लिए साली और भावज से मज़ाक़ हराम है ऐसे ही औरतों को भी देवर और बहनोई से मज़ाक़ हराम है।

हमल रोकने वाली दवाओं और लूप, कन्डोम वग़ैरा का इस्तेमाल

इस्लाम में नसबन्दी हराम है। नसबन्दी का मतलब यह है कि किसी अमल यानी आपरेशन वग़ैरा के ज़रिए मर्द या औरत में कुव्वत तौलीद यानी बच्चा पैदा करने की सलाहियत हमेशा के लिए ख़त्म कर देना जैसा कि हदीस शरीफ़ में है कि जब हज़रते अबूहुरैरा रदियल्लाहु तआ़ला अन्हु ने हुज़ूरे अकरम ﷺ से बर ज़िना से बचने के लिए ख़स्सी होने की इजाज़त चाही तो हुज़ूर ने इस सवाल पर पर उन से रू-गिरदानी फ़रमाई और नाराज़गी का इज़हार किया।

लेकिन हमल रोकने के ख़्याल से आरिज़ी ज़राए व वसाइल इख़्तियार करना मसलन दवायें, लूप, निरोध वग़ैरा का किसी ज़रूरत से इस्तेमाल करना हराम नहीं है। दरअस्ल मज़हबे इस्लाम बड़ी हिकमतों वाला मज़हब और क़ानूने फ़ितरत है जो नसबन्दी को हराम फ़रमाता है क्यूंकि उसमें इन्सान के बच्चा पैदा करने की कुदरती सलाहियत व कुव्वत को ख़त्म कर दिया जाता है। कभी यह भी हो सकता है कि माँ, बाप नसबन्दी करा बैठते हैं और जो बच्चे थे वह मर गए ऐसा हो भी जाता है तो सब दिन के लिए औलाद से महरूमी हाथ आती है। कभी ऐसा भी होता है कि औरत ने नसबन्दी कराई और उसके शौहर का इन्तिक़ाल हो गया या तलाक़ हो गई अब उस औरत ने दूसरी शादी की और दूसरा शौहर अपनी औलाद का ख़्वाहिशमन्द हो। यह भी हो सकता है मर्द ने नसबन्दी कराई अब उसकी औरत फ़ौत हो गई या तलाक़ हो गई अब वह दूसरी शादी करता है अब नई बीवी औलाद की ख़्वाहिशमन्द हो।

खुलासा यह कि बच्चा पैदा करने की सिरे से सलाहियत

ख़त्म कर देना किसी तरह समझ में नहीं आता और इस्लाम का कानून बेशुमार हिकमतों का ख़ज़ाना है। अलबत्ता आरिज़ी तौर से बच्चों की विलादत रोकने के ज़राए व वसाइल को इस्लाम मुतलक़न हराम नहीं फ़रमाता। इस में भी बड़ी हिकमत है क्यूंकि कभी ऐसा हो जाता है कि औरत की सेहत इतनी ख़राब है कि बच्चा पैदा करना उसके बस की बात नहीं बल्कि कभी कुछ औरतों के बच्चे सिर्फ़ आपरेशन से ही हो पाते हैं और दो तीन बच्चों की विलादत के बाद डाक्टरों ने कह दिया कि आइन्दा आपरेशन में सख़्त ख़तरा है तो आरिज़ी तौर पर हमल को रोकने के ज़राए का इस्तेमाल गुनाह नहीं है। हदीस शरीफ़ में है :

हज़रत जाबिर रदियल्लाहु तआला अन्हु फ़रमाते हैं कि हम लोग नुज़ूले कुर्आन के ज़माने में ''अज़्ल'' करते थे यानी इन्ज़ाल के वक़्त औरत से अलाहिदा हो जाते थे। यह हदीस बुख़ारी व मुस्लिम दोनों में है। मुस्लिम शरीफ़ में इतना और है :

यह बात हुज़ूर नबीए करीम ﷺ तक पहुँची तो आपने मना नहीं फ़रमाया।

अज़्ल से मुतअल्लिक़ और भी हदीसें हैं जिन से इसकी इजाज़त का पता चलता है जिनकी तौज़ीह व तशरीह में उलमा का फ़तवा है कि बीवी से इसकी इजाज़त के बग़ैर यानी उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ ऐसा न करे क्यूंकि इसमें उसकी हक़तल्फ़ी है।

हज़रत मौलाना मुफ़्ती जलालुद्दीन अहमद अमजदी फ़रमाते हैं : ''किसी जाइज़ मक़सद के पेशे नज़र वक़्ती तौर पर ज़ब्ते तौलीद के लिए कोई दवा या रबड़ की थैली का इस्तेमाल करना जाइज़ है लेकिन किसी अमल से हमेशा के लिए बच्चा पैदा करने की सलाहियत को ख़त्म कर देना किसी तरह जाइज़ नहीं।''

(फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल, जिल्द दोम, सफ़हा ५८०)

इस से यह भी ज़ाहिर है कि बे मक़सद ख़्वाहम ख़्वाह ऐसा करना भी जाइज़ नहीं।

नए साल की मुबारकबादियां

मुसलमानों में अंग्रेज़ी साल के पहले दिन पहली जनवरी को खुशी मनाने मिठाईयां बांटने मुबारकबादियां देने और भेजने का रिवाज आम हो गया है और तरह-तरह की फ़ुज़ूल ख़र्चियां की जाती हैं।

हालांकि पहली जनवरी हो या पहली अप्रेल (अप्रेल फूल) २५ दिसम्बर बड़ा दिन हो या गुड फ़्राइडे, इन सब का इस्लाम और मुसलमानों से कोई तअ़ल्लुक़ नहीं बल्कि इनको अहमियत देना या त्योहार समझना 'ईसाईयत' है और काफ़िरों और ग़ैर मुस्लिमों का तरीक़ए कार। मुसलमानों को चाहिए इस्लामी त्योहार मनायें और इस्लामी दिनों को अहमियत दें ईसाईयत न अपनायें कहीं ऐसा न हो कि आपका हश्र ईसाईयों के साथ हो।

हदीस शरीफ़ में है अल्लाह तआ़ला के रसूल सय्यिदे आलम हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा ﷺ फ़रमाते हैं "जो जिस क़ौम का तरीक़ए कार अपनाए वह उन्हीं में से है।"

आजकल मुसलमानों में बच्चों की सालगिरह मनाने का रिवाज भी बहुत ज़ोर पकड़ गया है और इसमें ग़ैर ज़रूरी अख़राजात किये जाते हैं और क़ेक काटे जाते हैं। यह सब भी इस्लामी नुक़तए नज़र से कुछ अच्छा नहीं मालूम होता इसमें अंग्रेज़ी तहज़ीब और ईसाईयत की बू आती है।

ग़ैर ज़रूरी जाहिलाना सवालात

आजकल अवाम में ग़ैर ज़रूरी सवालात मालूम करने का रिवाज भी आम हो गया है वह भी अमल व इस्लाह की ग़रज़ से नहीं बल्कि उलमा को आजिज़ करने या और किसी फ़ासिद मक़सद से।

एक साहब को मैंने देखा कि वह मालदार हो कर कभी कुर्बानी नहीं करते थे और मौलवी साहब से मालूम कर रहे थे हज़रते इस्माईल अलैहिस्सलाम की जगह ज़िबह करने के लिए जो दुम्बा लाया गया था वह नर था या मादा और उसका गोश्त किसने खाया था वहीं उन्हीं के जैसे दूसरे साहब बोले कि वह दुम्बा अन्डुआ था या ख़स्सी?

एक साहब को नमाज़ याद नहीं थी और वुज़ू भी ठीक से करना नहीं जानते थे और उन्हें जो मौलाना साहब मिलते उनसे यह ज़रूर पूछते थे कि मूसा अलैहिस्सलाम की मां का क्या नाम था? और हज़रते ख़दीजा रदियल्लाहु तआला अन्हा का निकाह किस ने पढ़ाया था?

ग़रज़ कि इस क़िस्म के ग़ैर ज़रूरी सवालात करने का माहौल बन गया है। अवाम को चाहिए कि तारीख़ी बातों में न पड़ कर नमाज़, रोज़ा वग़ैरा अहकामे शरअ सीखें और इस्लामी अक़ीदे मालूम करें यही चीज़ें अस्ल इल्म हैं।

और जो बात कुर्आन व हदीस व फ़िक़्ह से मालूम हो जाए तो ज़्यादा कुरेद और बारीकी में न पड़ें न बहस करें अगर अक़्ल में न आए तो अक़्ल का कुसूर जाने न कि मआज़ल्लाह कुर्आन व हदीस का या फ़ुक़हाए मुजतहिदीन का।

और ख़्वाहम ख़्वाह ज़्यादा सवालात करने की आदत अच्छी नहीं है। फ़ी ज़माना अमल करने का रिवाज बहुत कम है पूछने का ज़्यादा और अन्धा होकर बारीक राहों पर चलने में सख़्त ख़तरा है।

अपनी तरफ़ से न करके औरों के नाम से कुर्बानी करना

कुछ लोग जिन पर मालदार साहिबे निसाब होने की बिना पर कुर्बानी वाजिब होती है वह कुर्बानी में ब-वक़्ते ज़िबह अपने नाम के बजाए अपने मां, बाप या बुज़ुर्गाने दीन का नाम लेकर उनकी तरफ़ से कुर्बानी करते हैं हालांकि यह ग़लत है। जिस पर कुर्बानी वाजिब है वह पहले अपने नाम से करे। उसके बाद अगर मौक़ा है तो बड़े जानवर में और हिस्से लेकर या दूसरे जानवर बुज़ुर्गाने दीन या अपने ज़िन्दा या मुर्दा मां बाप की तरफ़ से ज़िबह करे और हुज़ूर सय्यिदे आलम अहमदे मुजतबा मुहम्मद मुस्तफ़ा ﷺ के नाम से कुर्बानी करना बड़ी फ़ज़ीलत है लेकिन जब उस पर ख़ुद कुर्बानी वाजिब है तो यह फ़ज़ीलतें उसी के लिए हैं जो ख़ुद अपनी तरफ़ से पहले करे, वरना कुर्बानी न करने का गुनाह होगा।

क्या क़व्वाली सुनना जाइज़ है?

इस्लामी भाईयो! आज कल बुज़ुर्गाने दीन के मज़ारात पर उनके उर्सों का नाम लेकर ख़ूब मौज मस्तियां हो रही हैं और अपनी रंग रंगेलियों, बाजों, तमाशों, औरतों की छेड़छाड़ के मज़े उठाने के लिए अल्लाह वालों के मज़ारों को इस्तेमाल किया जा रहा है और ऐसे लोगों को न ख़ुदा का ख़ौफ़ है, न मौत की फ़िक्र और न जहन्नम का डर।

आज कुफ़्फ़ार व मुशरिकीन यह कहने लगे हैं कि इस्लाम भी दूसरे मज़हबों की तरह नाच, गानों, तमाशों, बाजों और बेपर्दा औरतों को स्टेजों पर लाकर बे हयाई का मुज़ाहिरा करने वाला मज़हब है लिहाज़ा अहले कुफ़्र के इस्लाम क़बूल करने की जो

रफ़्तार थी उसमें बहुत बड़ी कमी आ गई है।

मज़हबे इस्लाम में बतौर लहव व लइब ढोल, बाजे और मज़ामीर हमेशा से हराम रहे हैं। बुख़ारी शरीफ़ की हदीस है कि रसुलुल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया :

"ज़रूर मेरी उम्मत में ऐसे लोग होने वाले हैं जो ज़िना, रेशमी कपड़ों, शराब और बाजों ताशों को हलाल ठहरायेंगे।"

(सही बुख़ारी, जिल्द २, किताबुल अशरिबह, सफ़हा ८३७)

दूसरी हदीस में हुज़ूर नबीए करीम ﷺ ने क़ियामत की निशानियां बयान करते हुए फ़रमाया :

"क़ियामत के क़रीब नाचने गाने वालियों और बाजे ताशों की कसरत हो जाएगी।"

(तिर्मिज़ी, मिश्कात, बाबे अशरातुस्साअह, सफ़हा ४७०)

फ़तावा आलमगीरी जो अब से साढ़े तीन सौ साल पहले बादशाहे हिन्दुस्तान मुहीयुद्दीन औरंगज़ेब आलमगीर रहमतुल्लाहि तआला अ़लैह के हुक्म से उस दौर के तक़रीबन सभी मुसतनद व मोतबर उलमाए किराम ने जमा होकर मुरत्तब फ़रमाई जो अरबी ज़बान (भाषा) में तक़रीबन तीन हज़ार सफ़हात और छह जिल्दों पर फैला हुआ एक अज़ीम इस्लामी इन्साइक्लोपीडिया है। उस में लिखा है :

"सिमाअ़, क़व्वाली और रक़्स (नाच कूद) जो आज कल के नाम निहाद सूफ़ियों में राइज है यह हराम है इस में शिरकत जाइज़ नही।" (फ़तावा आलमगीरी, जिल्द ५, किताबुल कराहियह, बाब १७, सफ़हा ३५२)

आलाहज़रत मौलाना शाह अहमद रज़ा ख़ाँ साहब रदियल्लाहु तआला अ़न्हु का फ़तवा अरब व अजम में माना जा रहा है उन्होंने मज़ामीर के साथ क़व्वालियों को अपनी किताबों में कई जगह हराम लिखा है। कुछ लोग कहते हैं मज़ामीर के साथ क़व्वाली

चिश्तिया सिलसिले में राइज और जाइज़ है। यह बुज़ुर्गाने चिश्तिया पर उनका खुला बोहतान है बल्कि उन बुज़ुर्गों ने भी मज़ामीर के साथ क़व्वाली सुनने को हराम फ़रमाया है। सय्यिदना महबूबे इलाही निज़ामुद्दीन देहलवी रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैह ने अपने ख़ास ख़लीफ़ा सय्यिदना फ़ख़रुद्दीन ज़रदारी से मसअलए क़व्वाली के मुतअ़ल्लिक़ एक रिसाला लिखवाया जिसका नाम 'कश्फ़ुल क़िनाअ़ अ़न उसूलिस्सिमाअ़' है। इसमें साफ़ लिखा है : हमारे बुज़ुर्गों का सिमाअ़ इस मज़ामीर के बोहतान से बरी है (उनका सिमाअ़ तो यह है) सिर्फ़ क़व्वाल की आवाज़ अशआ़र के साथ हो जो कमाल सनअ़ते इलाही की ख़बर देते हैं।

कुतबुल अक़ताब सय्यिदना फ़रीदुद्दीन गंज शकर रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैह के मुरीद और सय्यिदना महबूबे इलाही निज़ामुद्दीन देहलवी रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैह के ख़लीफ़ा सय्यिदना मुहम्मद बिन मुबारक अ़लवी किरमानी रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैह अपनी मशहूर किरताब 'सैरुल औलिया' में तहरीर फ़रमाते हैं :

''महबूबे इलाही ख़्वाजा निज़ामुद्दीन देहलवी अ़लैहिर्रहमतु वर्रिद़वान ने फ़रमाया कि चन्द शराइत के साथ सिमाअ़ हलाल है :

(१) सुनाने वाला मर्द कामिल हो छोटा लड़का और औरत न हो।

(२) सुनने वाला यादे ख़ुदा से ग़ाफ़िल न हो।

(३) जो कलाम पढ़ा जाए, फ़हश, बेहयाई और मसख़रगी न हो।

(४) आलए सिमाअ़ यानी सारंगी मज़ामीर व रुबाब से पाक हो।

(सैरुल औलिया, बाब ६, दर सिमाअ़, वज्द व रक़्स, सफ़हा ५०१)

इसके अलावा 'सैरुल औलिया' शरीफ़ में एक और मक़ाम पर है कि एक शख़्स ने हज़रते महबूबे इलाही ख़्वाजा निज़ामुद्दीन रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैह से अर्ज़ किया कि इन अय्याम में बाज़ आस्तानादार दुरवेशों ने ऐसे मजमे में जहाँ चंग व रुबाब व मज़ामीर था, रक़्स किया तो हज़रत ने फ़रमाया कि उन्होंने अच्छा

काम नहीं किया जो चीज़ शरअ़ में नाजाइज है वह नापसन्दीदा है। उसके बाद किसी ने बताया कि जब यह जमाअ़त बाहर आई तो लोगों ने उन से पूछा कि तुम ने यह क्या किया वहाँ तो मज़ामीर थे तुम ने सिमाअ़ किस तरह सुना और रक़्स किया? उन्होंने कहा हम इस तरह सिमाअ़ में डूबे हुए थे कि हमें यह मालूम ही नहीं हुआ कि यहाँ मज़ामीर हैं या नहीं। हज़रत सुल्तानुल मशाइख़ ने फ़रमाया यह कोई जवाब नहीं इस तरह तो हर गुनाहगार हरामकार कह सकता है।

(सैरुल औलिया, बाब ६, सफ़हा ५३०)

यानी कि आदमी ज़िना करेगा और कह देगा कि मैं बेहोश था मुझको पता नहीं कि मेरी बीवी है या ग़ैर औरत, शराबी कहेगा कि मुझे होश नहीं कि शराब पी या शरबत।

इसके अलावा उन्हीं हज़रते सय्यिदना महबूबे इलाही निज़ामुद्दीन हक़ वालिदैन अ़लैहिर्रहमतु वर्रिद़वान के मलफ़ूज़ात पर मुशतमिल उन्हीं के मुरीद व ख़लीफ़ा हज़रत ख़्वाजा अमीर हसन अ़लाई सन्जरी की तसनीफ़ 'फ़वाइदुल फ़वाद शरीफ़' में है।

हज़रते महबूबे इलाही की ख़िदमत में एक शख़्स आया और बताया कि फ़लां जगह आपके मुरीदों ने महफ़िल की है और वहाँ मज़ामीर भी थे हज़रत महबूबे इलाही ने इस बात को पसन्द नहीं फ़रमाया। और फ़रमाया कि मैंने मना किया है मज़ामीर (बाजे) हराम चीज़ें वहाँ नहीं होना चाहिए इन लोगों ने जो कुछ किया अच्छा नहीं किया इस बारे में काफ़ी ज़िक्र फ़रमाते रहे। इसके बाद हज़रत ने फ़रमाया कि अगर कोई किसी मक़ाम से गिरे तो शरअ़ में गिरेगा और अगर कोई शरअ़ से गिरा तो कहाँ गिरेगा। (फ़वाइदुल फ़वाद, जिल्द ३, मजलिस पन्जुम, सफ़हा ५१२ मतबूआ़ उर्दू अकादमी, देहली, तर्जमा ख़्वाजा हसन निज़ामी)

मुसलमानो! ज़रा सोचो यह हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन देहलवी

रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु का फ़तवा है जो तुमने ऊपर पढ़ा। इन अक़वाल के होते हुए क्या कोई कह सकता है कि ख़ानदाने चिश्तिया में मज़ामीर के साथ क़व्वाली जाइज़ है? हाँ यह बात वही लोग कहेंगे जो चिश्ती हैं, न क़ादरी उन्हें तो मज़ेदारियां और लुत्फ़ अन्दोज़ियां चाहिए।

और अब जबकि सारे के सारे क़व्वाल बे नमाज़ी और फ़ासिक़ व फ़ाजिर हैं। यहाँ तक कि बाज़ शराबी तक सुनने में आए हैं। यहाँ तक कि औरतों और अमरद लड़के भी चल पड़े हैं ऐसे माहौल में इन क़व्वालियों को सिर्फ़ वही जाइज़ कहेगा जिसको इस्लाम व कुर्आन, दीन व ईमान से कोई महब्बत न हो और हरामकारी, बेहायाई, बदकारी उसके रग व पय में सराहत कर गई हो। और कुर्आन व हदीस के फ़रामीन की उसे कोई परवाह न हो। क्या इसी का नाम इस्लाम है कि मुसलमान औरतों को लाखों के मजमे में लाकर उनके गाने बजाने कराए जायें फिर उन तमाशों का नाम बुज़ुर्गों का उर्स रखा जाए। काफ़िरों के सामने मुसलमानों और मज़हबे इस्लाम को ज़लील व बदनाम किया जाए?

कुछ लोग कहते हैं कि क़व्वाली अहल के लिए जाइज़ और नाअहल के लिए नाजाइज़ है। ऐसा कहने वालों से हम पूछते हैं कि आजकल जो क़व्वालियों की मजलिसों में जो लाखों लाख के मजमे होते हैं क्या यह सब अल्लाह वाले और असहाबे इसतग़राक़ हैं? जिन्हें दुनिया व मताए दुनिया का क़तअ़न होश नहीं? जिन्हें यादे ख़ुदा और ज़िक्रे इलाही से एक आन की फ़ुरसत नहीं?

ख़र्राटे की नींदों और गप्पों, शप्पों में नमाज़ों को गंवा देने वाले, रात दिन नंगी फ़िल्मों, गन्दे गानों में मस्त रहने वाले, मां बाप की नाफ़रमानी करने और उनको सताने वाले, चोर लकोर, झूटे फ़रेबी, गिरेहकाट वग़ैरा क्या सब के सब थोड़ी देर के लिए

वालियों की मजलिस में शरीक हो कर अल्लाह वाले हो जाते और उसकी याद में महव हो जाते हैं? या पीर साहब ने अहल बहाना तलाश करके अपनी मौज मस्तियों का सामान कर [illegible]ा है? कि पीरी भी हाथ से न जाए और दुनिया की मौज मस्तियों में भी कोई कमी न आए। याद रखो क़ब्र की अँधेरी कोठरी में कोई हीला व बहाना न चलेगा।

कुछ लोगों को यह कहते सुना गया है मज़ामीर के साथ क़व्वाली नाजाइज़ होती तो दरगाहों और ख़ानक़ाहों में क्यूं होतीं?

काश यह लोग जानते कि रसूले पाक की हदीसों और बुज़ुर्गाने दीन के मुक़ाबले में आजकल के फ़ासिक़ दाढ़ी मुन्डाने वाले नमाज़ों को क़सदन छोड़ने वाले बाज़ ख़ानक़ाहियों का अमल पेश करना दीन से दूरी और सख़्त नादानी है जो हदीसें हमने ऊपर लिखीं और बुज़ुर्गाने दीन के अक़वाल नक़ल किये गए उनके मुक़ाबिल न किसी का क़ौल मोतबर होगा न अमल। आजकल ख़ानक़ाहों में किसी काम का होना उसके जाइज़ होने की शरई दलील नहीं है।

बाज़ ख़ानक़ाहों की ज़बानी यह भी सुना कि हम क़व्वालियां इसलिए कराते हैं कि ज़्यादा लोग जमा हो जायें और उर्स भारी हो जाए। यह भी सख़्त नादानी है गोया आपको अपनी नामवरी की फ़िक्र है आख़िरत की फ़िक्र नहीं। आपको कोई जानता न हो, आपके पास कोई बैठता न हो, आप गुमनाम हों और हरामकारियों से बचते हो। नमाज़ों के पाबन्द हों, बीवी बच्चों के लिए हलाल रोज़ी कमाने में लगे हों और आपका परवरदिगार आप से राज़ी हो यह हज़ार दर्जे बेहतर है इससे कि आप मशहूरे ज़माना शख़्सियत हों। आपके हज़ारों मुरीद हों, हर वक़्त हज़ारों मोअ़तक़िदीन का झमगटटा लगा रहता हो या लाखों मजमे में बोलने वाले ख़तीब और मुक़र्रिर हों। बड़े अल्लामा व मौलाना शुमार किये

जाते हों लेकिन हरामकारियों में इनहिमाक, नमाज़ों से ग़फ़लत, शोहरत व जाह तलबी, दौलत की नाजाइज़ हवस की वजह से मैदाने महशर में ख़ुदाए तआ़ला के सामने शर्मिन्दगी हो। क़ियामत के दिन ख़िफ़्फ़त उठानी पड़े। वलइयाज़ु बिल्लाहि तआ़ला कहीं जहन्नम का रास्ता न देखना पड़े।

मेरे भाईयो! दिल में यह तमन्ना रखे यही ख़ुदाए क़दीर से दुआ किया करो कि ख़्वाह हम मशहूरे ज़माना पीर और दिलों मे जगह बनाने वाले ख़तीब हों या न हों लेकिन हमारा रब हम से राज़ी हो जाए ईमान पे मौत हो जाए और जन्नत नसीब हो जाए। और ख़ुदाए तआ़ला हमें चाहे थोड़ों में रखे लेकिन अच्छों और सच्चों में रखे। फ़क़ीरी और दुरवेशी भीड़ और मजमा जुटाने का नाम नहीं है। फ़क़ीर तो तन्हाई पसन्द होते हैं और भीड़ से भागते हैं अकेले में यादे ख़ुदा करते हैं।

उनकी याद उनका तसव्वुर है उन्हीं की बातें
कितना आबाद मेरा गोशए तन्हाई है

अख़ीर में एक बात यह भी बता देना ज़रूरी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया कि "जो कोई ख़िलाफ़े शरअ़ काम की बुनियाद डालते है तो उस पर अपना और सारे क़रने वालों को गुनाह होता है।" लिहाज़ा जो मज़ामीर के साथ क़व्वालियां कराते हैं और दूसरों को भी इसका मौक़ा देते हैं उन पर अपना, क़व्वालों और लाखों तमाशाइयों का गुनाह है और मरते ही उन्हें अपनी करतूतों का अन्जाम देखने को मिल जाएगा।

हमारी इस तहरीर को पढ़ कर हमारे इस्लामी भाई बुरा न मानें बल्कि ठन्डे दिल से सोचें अपनी और अपने भाईयों की इस्लाह की कोशिश करें।

अल्लाह तआ़ला प्यारे मुस्तफ़ा ﷺ के सदक़े व तुफ़ैल तौफ़ीक़ बख़्शे।

क्या दरख़्तों और ताक़ों में शहीद मर्द रहते हैं

कुछ लोग कहते हैं कि फ़लां दरख़्त पर शहीद मर्द रहते हैं या फ़लां ताक़ में शहीद मर्द रहते हैं और उस दरख़्त और उस ताक़ के पास जाकर फ़ातिहा दिलाते हैं हार फूल खुशबू वग़ैरा डालते हैं लोबान अगरबत्ती सुलगाते हैं और वहाँ मुरादे मांगते हैं यह सब ख़िलाफ़े शरअ़ और ग़लत बातें है। जो बर बिनाए जहालत अवाम मे राइज हो गईं हैं इनको दूर करना निहायत ज़रूरी है। हक़ यह है कि ताक़ों, महराबों, दरख़्तों वग़ैरा पर महबूबाने खुदा का क़ियाम क़रार देकर वहाँ हाज़िरी नियाज, फ़ातिहा, अगरबत्ती, मोमबत्ती जलाना, हार फूल डालना, खुशबूयें मलना, चूमना, चाटना हरगिज़ जाइज़ नहीं। आलाहज़रत रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु इन बातों के मुतअ़ल्लिक़ फ़रमाते हैं :

''यह सब वाहियात व खुराफ़ात और जाहिलाना हिमाक़ात व व बतलात हैं इनका इज़ाला लाज़िम है।''

(अहकामे शरीअ़त, हिस्सा अव्वल, सफ़हा ३२)

आजकल कुछ लोग इन हरकतों से रोकने वालों को वहाबी कह देते हैं हालांकि किसी मुसलमान को वहाबी कहने में जल्दी नहीं करना चाहिए जब तक कि उसके अक़ाइद की ख़ूब तहकीक़ न हो जाए और ख़िलाफ़ शरअ़ हरकतों और बिदअ़तों से रोकना तो अहले सुन्नत का ही काम है वहाबी तो उसको कहते हैं जो अल्लाह और उसके महबूब हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा ﷺ और बुज़ुर्गाने दीन की शान में गुस्ताख़ी व बेअदबी करता हो या जान कर गुस्ताख़ों की तहरीक में शामिल हो उनको अच्छा जानता हो। वहाबी किसे कहते हैं इसको तफ़सील के साथ मैंने अपनी किताब ''दरमियानी उम्मत'' में लिख दिया है यह किताब उर्दू और हिन्दी में अलग अलग छप चुकी है हासिल करके मुतालआ़ कर लिया जाए।

कुछ ग़लत नामों की निशानदेही

कुछ लोग अपने बच्चों के नाम, अहमद नबी, मुहम्मद नबी, रसूल अहमद, नबी अहमद रख देते हैं, यह ग़लत है इसके बजाय गुलाम मुहम्मद या गुलाम रसूल या गुलाम नबी कर लें या मुहम्मद नबी और अहमद नबी में नबी के आगे 'ह' बढ़ा कर मुहम्मद नबीह या अहमद नबीह कर लें।

ग़फ़ूरुद्दीन नाम रखना भी ग़लत है क्यूँकि ग़फ़ूर के मअ्ना मिटा देने वाले के हैं लिहाज़ा ग़फ़ूरुद्दीन के माअ्ना हुए 'दीन को मिटाने वाला'। लाहौला वला .कुव्वता इल्ला बिल्लाह। अल्लाह ज़ल्ला शानुहू का नाम ग़फ़ूर इसलिए है कि वह गुनाहों को मिटाता है, नाम रखने से मुताल्लिक़ क्या जाइज़ है और क्या नाजाइज़ इसको तफ़सील से जानने के लिए आलाहज़रत मौलाना शाह इमाम अहमद रज़ा ख़ाँ अलैहिर्रहमतो वर्रिद़वान की तसनीफ़ मुबारक अहकामे शरीअ़त में सफ़ा ७२ से सफ़ा ९८ तक का मुतालआ़ करना चाहिए।

नोट :- कुछ लोगों के नाम इस क़िस्म के होते हैं जिनमें अल्लाह तआ़ला के मख़सूस नामों के साथ 'अब्द' लगा होता है जैसे अब्दुल्लाह, अब्दुर्रहमान, अब्दुर्रज़्ज़ाक़, अब्दुल ख़ालिक़ वग़ैरहा तो इन नाम वालों को बग़ैर 'अब्द' लगाये ख़ाली रहमान, रज़्ज़ाक़ या ख़ालिक़ हरगिज़ नहीं कहना चाहिए और यह इस्लाम में बहुत बुरी बात है जिसका ध्यान करना निहायत ज़रूरी है। वलइयाज़ुबिल्लाहि तआ़ला।

मख़्लूक़े ख़ुदा को सताना और दुआ तावीज़ कराना

आज कितने ही लोग हैं जो लोगों पर ज़ुल्म व ज़्यादती करते हैं और फिर पीरों, फ़क़ीरों के यहाँ दुआ तावीज़ात कराते हैं और मज़ारों पर मुरादें मांगते घूमते हैं और मस्जिदों में जाकर लम्बी लम्बी दुआयें मांगते हैं।

कितने शौहर हैं जो बीवियों पर ज़ुल्म ढाते और उनका ख़्याल नहीं रखते उन्हें बान्दियों और नौकरानियों से बदतर ज़िन्दगी गुज़ारने पर मजबूर कर देते हैं न उन्हें तलाक़ देते हैं और न उनका हक़ अदा करते हैं।

कितनी बीवियां हैं जो अपने शौहरों का ख़ून पीती उनके लिए घरों को जहन्नम का नमूना बना देती हैं। सासों और नन्दों के साए से जलती हैं, कितनी सास और नन्दें हैं जो अपने घरों में आने वाली दुल्हनों के लिए जीना मुश्किल कर देती हैं शौहर बीवी के दरमियान महब्बत उन्हें कांटों की तरह खटकती और कलेजे में चुभती है।

कितने अमीर कबीर रईस ज़मींदार व मालदार लोग हैं जो मज़दूरों का गला घोंटते, नौकरों को मारते, पीटते, झिड़कते, उनकी मज़दूरियां और तनख़्वाहें रोकते और खुद ऐश करते और उनके घर वालों बीवी बच्चों की बददुआयें लेते हैं। कितने ही लोग वह हैं जो जानवरों को पालते हैं लेकिन उनकी भूक, प्यास, जाड़े, गर्मी की परवाह नहीं करते उन्हें बेरहमी से मारते पीटते हैं उनकी ताक़त से ज़्यादा उनसे काम लेते और बोझ लादते हैं। ख़ास कर ज़िबह का पेशा करने वाले ज़िबह करने से पहले उन्हें भूका प्यासा

रखते हैं और उन पर ऐसे ऐसे ज़ुल्म करते हैं कि जिन्हें देखा नहीं जा सकता।

ख़ुलासा यह कि कोई भी ज़ालिम अत्याचारी बे रहम हो जो अपने ऐश व आराम और मालदारी की ख़ातिर दूसरों को सताता और उनका ख़ून पीता है उसकी न ख़ुद अपनी दुआ क़बूल होती है न उसके हक़ में दूसरों की। यह मर्द हों या औरतें, यह शौहर हों या बीवियां, यह सासें और नन्दें हों या बहुएं और भावजें, यह मालदार और ज़मींदार हों या हुक्काम व अधिकारी। अगर यह ज़ालिम व बेरहम और अत्याचारी हैं तो उन्हें चाहिए कि यह लम्बी लम्बी दुआयें मांगने, पीरों फ़क़ीरों और मज़ारात पर चक्कर लगाने और दुआ तावीज़ कराने से पहले जिसको सताया है उससे माफ़ी मांग लें जिसका हक़ दबाया है। वह उसे लौटा दें और ज़ुल्म व ज़्यादती व बेरहमी की आदत छोड़ दें फिर आयें ये मस्जिदों में दुआओं के लिए और ख़ानक़ाहों में मुरादें मांगने और मियां और मौलवियों के पास गन्डे तावीज़ कराने के लिए। जिस ने किसी ग़रीब, कमज़ोर को सताया है और जिसके पीछे किसी मज़लूम की बददुआ लगी है उसके लिए न कोई दुआ है न तावीज़।

हदीस में है कि फ़रमाया रसुलुल्लाह ﷺ ने "अल्लाह तआला उस पर रहम नहीं फ़रमाता जो लोगों पर रहम नहीं करता।"

और फ़रमाते हैं :

मज़लूम की बददुआ से बचा वह अल्लाह से अपना हक़ मांगता है और ख़ुदाए तआला हक़ वाले को उसका हक़ अता फ़रमाता है। (मिश्कात, सफ़हा ४३५)

पढ़ने पढ़ाने से मुतअ़ल्लिक़ कुछ ग़लतफ़हमियाँ

आज कल कसरत से मुसलमान अपने बच्चों को ईसाईयों और बुत परस्तों मुश्रिकों के स्कूलों, पाठशालाओं में पढ़ने भेज रहे हैं जबकि मुसलमानों को चाहिए कि वह हिन्दी, अंग्रेज़ी, हिसाब व साइंस वग़ैरा की अदना (छोटी) व आ़ला (बड़ी) तालीम के लिए भी अपने स्कूल खोलें जिनमें दुनियवी तालीम के साथ साथ ज़रूरत के लाइक़ दीनी तालीम भी हो या दीनी इस्लामी उलूम के साथ साथ ज़रूरत के लाइक़ दुनियवी उलूम भी पढ़ाये जायें और तालीम अगरचे दुनियवी भी हो लेकिन माहौल व तहज़ीब इस्लामी हो और गवर्नमेंट से मन्ज़ूरशुदा निसाब की किताबें भी पढ़ाई जायें लेकिन उनमें अगर कहीं कोई बात ऐसी हो जो इस्लामी नज़रियात के ख़िलाफ़ हों तो पढ़ाने वाले उस पर तम्बीह करके बच्चों के ईमान व अ़क़ीदे को बचायें क्यूँकि ईमान हर दौलत से बड़ी दौलत है।

मगर अफ़सोस कि मुसलमानों में भी हर क़िस्म के लोग मौजूद हैं, दौलतमन्दों और अमीरों की तादाद भी काफ़ी है, अगर चाहते तो आसानी से दुनियवी तालीम के लिए भी अपने स्कूल खोल देते मगर वहाँ तो ईसाईयत और मुशरिकाना तहज़ीब का नशा सवार है। ख़्याल रहे कि वक़्त अब क़रीब आता मालूम हो रहा है और यह नशे जल्दी ही उतर जायेंगे। अस्ल बात यह कि जिस क़ौम के दिन पूरे हो चुके हों, उसे कोई समझा नहीं सकता। अभी जल्दी ही एक इस्लामी मुल्क इराक़ में अमरीकी ईसाईयों ने क़ब्ज़ा कर लिया और यह इसलिए हुआ कि वहाँ के लोगों ने ईसाई तहज़ीब और कल्चर को अपना लिया था और मुसलमान जिस क़ौम की तहज़ीब अपनाता है, उस क़ौम को उस पर हाकिम बना दिया जाता है।

इराक़ी मुसलमान गले में टाई बाँधने लगे थे, इनके मर्दों औरतों ने इस्लामी लिबास छोड़कर ईसाइयों और अंग्रेज़ों का लिबास पहनना शुरू कर दिया था, शराब आ़म हो गई थी, नमाज़ रोज़ा बराए नाम रह गया था। आज लोग चीख़ रहे हैं कि इराक़ से इस्लामी हुकूमत चली गई लेकिन भाईयों चीख़ने से क्या फ़ायदा सही बात यह है कि पहले इस्लाम गया है, हुकूमत बाद में। अमरीकी फ़ौजें बहुत बाद में आईं हैं, अमरीकी तहज़ीब पहले आ गई है।

.कुर्आने करीम हिफ़्ज़ करने से मुतअ़ल्लिक़ कुछ ज़रूरी बातें

बग़ैर मआनी व मत़लब समझे हुए सिर्फ़ .कुर्आने करीम को ज़बानी याद कर लेना यह एक फ़ज़ीलत व बरतरी की बात है लेकिन सिर्फ़ इसे ही इल्म नहीं कहा जा सकता।

लिहाज़ा बच्चों को पूरा .कुर्आने करीम हिफ़्ज़ कराने के बजाय उनको दीनी उलूम अ़क़ाइदे इस्लामिया और फ़िक़्ह के मसाइल सिखाये जायें तो यह ज़्यादा बेहतर है।

हज़रत सदरुश्शरीअह मौलाना अमजद अली साहब अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं- "कुछ .कुर्आन मजीद याद कर चुका है और उसे फ़ुरसत है तो अफ़ज़ल यह है कि इल्मे फ़िक़्ह सीखे कि .कुर्आन मजीद हिफ़्ज़ करना फ़र्ज़े किफ़ाया है और फ़िक़्ह की ज़रूरी बातों का जानना फ़र्ज़े ऐन है।"

(बहारे शरीअ़त हिस्सा १६, सफ़ा २३३)

नोट : फ़र्ज़े किफ़ाया वह फ़र्ज़ है कि शहर का एक भी मुसलमान कर ले तो सब पर से फर्ज़ उतर गया और अगर सबने छोड़ दिया तो सब गुनहगार हुए।

खुलासा यह कि हर शहर और इलाक़े में कुछ न कुछ हाफ़िज़ होना भी ज़रूरी है क्यूँकि इसके ज़रिये क़ुर्आन के अल्फ़ाज़ की हिफ़ाज़त है लेकिन इसके साथ साथ हमारी राय यह है कि जो बच्चे ज़हीन और याद्दाश्त के पक्के हों उन्हें अगर कम उम्री में हिफ़्ज़ कराया जा सकता है तो करा दिया जाये वरना १५, १५ और २०, २० साल की उम्र तक का सारा वक़्त क़ुर्आने करीम हिफ़्ज़ कराने में ख़र्च करा देना ज़्यादा बेहतर नहीं है।

क्यूँकि आजकल उमूमन ग़रीबों और मुफ़्लिसों के बच्चे दीनी मदारिस में आते हैं। उन्हें इस लाइक़ कर देना भी ज़रूरी है कि रोज़ी कमाने पर क़ादिर हों और दीनी और ज़रूरत के लाइक़ दुनियवी उलूम भी हासिल किये हुए हों जिन्हें पढ़ा लिखा कहा जा सके।

क्या मछली और अरहर की दाल पर फ़ातिहा नहीं होगी?

हमारे कुछ अवाम भाई अपनी नावाक़िफ़ी की वजह से यह ख़्याल करते हैं कि मछली और अरहर की दाल पर फ़ातिहा नहीं पढ़ना चाहिए हालाँकि यह उनकी ग़लतफ़हमी है। इस्लाम में जिस चीज़ को खाना हलाल और जाइज़ है तो उस पर फ़ातिहा भी पढ़ी जा सकती है। लिहाज़ा अरहर की दाल और मछली चूंकि इनका खाना हलाल व जाइज़ है तो उन पर फ़ातिहा पढ़ने में हरगिज़ कोई बुराई नहीं हैं, बल्कि मछली तो निहायत उम्दा और महबूब ग़िज़ा है।

जैसा कि हदीस में आया है कि जन्नत में अहले जन्नत को पहली ग़िज़ा मछली ही मिलेगी और जो खाना जितना उम्दा और लज़ीज़ होगा फ़ातिहा में भी उसकी फ़ज़ीलत ज़्यादा होगी।

सुअर के नाम लेने को बुरा जानना

मज़हबे इस्लाम में सुअर खाना हराम है और उसका गोश्त पोस्त, ख़ून, हड्डी, बाल, पसीना, थूक वग़ैरा पूरा बदन और उससे ख़ारिज होने वाली हर चीज़ नापाक है और इस मअ़ना कर सुअर से नफ़रत करना ईमान की पहचान और मोमिन की शान है, लेकिन कुछ लोग जिहालत की वजह से इसका नाम भी ज़बान से निकालने को बुरा जानते हैं। यहाँ तक कि बाज़ निरे अनपढ़ गंवार यह तक कह देते हैं कि जिसने अपने मुँह से सुअर का नाम लिया, चालीस दिन तक उसकी ज़बान नापाक रहती है। जहालत यहाँ तक बढ़ चुकी है कि एक मरतबा एक गाँव में इमाम साहब ने मस्जिद में तक़रीर के वक़्त यह कह दिया कि शराब पीना ऐसा है जैसे सुअर खाना, तो लोगों ने इस पर ख़ूब हंगामा किया कि इन्होंने मस्जिद में सुअर का नाम क्यूँ लिया यहाँ तक कि इस जुर्म में बेचारे इमाम साहब का हिसाब कर दिया गया।

भाईयो! किसी बुरी से बुरी चीज़ का भी बुराई के साथ नाम लेना बुरा नहीं है। हाँ अगर कोई किसी बुरी चीज़ को अच्छा कहे, हराम को हलाल कहे तो यह यक़ीनन ग़लत है बल्कि बुरी चीज़ की बुराई बग़ैर नाम लिए हो भी नहीं सकती। शैतान, इब्लीस, फ़िरऔ़न, हामान, अबूलहब और अबूजहल का नाम भी तो लिया जाता है। ये हों या और दूसरे ख़ुदा व रसूल के दुश्मन वह सबके सब सुअर से बदरजहा बदतर हैं, बल्कि इब्लीस, फ़िरऔ़न, हामान और अबूलहब का नाम तो .क़ुर्आन में भी है और हर क़ुर्आन पढ़ने वाला उनका नाम लेता है। ख़ुदाए तआ़ला और उसके महबूब स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम के जितने दुश्मन हैं और उनकी बारगाहों में गुस्ताख़ी और बेअदबी करने वाले हैं, ये सब सुअर से कहीं ज़्यादा बुरे हैं। ये सब जहन्नम में जायेंगे और जानवर कोई भी हो हराम हो हलाल हो वह हरगिज़

जहन्नम में नहीं जायेगा बल्कि हिसाब व किताब के बाद फ़ना कर दिये जायेंगे।

ख़ुलासा यह है कि सुअर का नाम लेकर उसके बारे में हुक्मे शरअ् से आगाह करना हरगिज़ कोई बुरा काम नहीं, ख़्वाह मस्जिद में हो या ग़ैरे मस्जिद में, वाज़ व तक़रीर में हो या गुफ़्तगू में। आख़िर .क़ुर्आन में भी तो उसका नाम कई जगह आया है, क्यूँकि अरबी में जिसको ख़िन्ज़ीर कहते हैं उसी को हिन्दुस्तान वाले सुअर कहते हैं, तो अगर नमाज़ में वही आयतें तिलावत की गईं जिनमें सुअर के हराम फ़रमाने का ज़िक्र है तो उसका नाम नमाज़ में आयेगा और मस्जिद में भी।

क्या जो इस्लामी बातों की जानकारी न होने की वजह से अमल नहीं करते उनकी पकड़ न होगी?

आजकल काफ़ी लोग ऐसे हैं जो दीनी बातों, इस्लामी अक़ीदों, पाकी, नापाकी, नमाज़ व रोज़ा और ज़कात वग़ैरहा के मसाइल नहीं जानते और सीखने की कोशिश भी नहीं करते और ख़ुदा व रसूल ने किस बात को हराम फ़रमाया और किसे हलाल, किसे जाइज़ और किसे नाजाइज़ उन्हें इसका इल्म नहीं और न इल्म सीखने की परवाह, और ख़िलाफ़े शरअ़ हरकतें करते हैं। ग़लत सलत नमाज़ अदा करते हैं, लेन देन ख़रीद व फ़रोख़्त और रहन सहन में मज़हबे इस्लाम के ख़िलाफ़ चलते हैं और उनसे कोई कुछ कहे या उन्हें ग़लत बात से रोके, ख़िलाफ़े शरअ़ पर टोके तो वो कहते हैं, हम जानते ही नहीं हैं लिहाज़ा हम से कोई मुआख़ज़ा और सुवाल न होगा और हम बरोज़े क़ियामत छोड़ दिये जायेंगे।

यह उन लोगों की सख़्त ग़लतफ़हमी है, सही बात यह है कि अन्जान ग़लतकारों की डबल सज़ा होगी, एक इल्म हासिल न करने की और उलमा से न पूछने की और दूसरे ग़लत काम करने की। और जो जानते हैं लेकिन अमल नहीं करते, उन्हें एक ही अज़ाब होगा यअ़नी अमल न करने का, इल्म न सीखने का गुनाह उन पर न होगा।

आजकल आदमी अगर कोई सामान गाड़ियाँ, कपड़े, ज़ेवरात, खाने पीने की चीज़ ख़रीदे और उसको उस चीज़ के ग़लत व ख़राब या उसमें धोखेबाज़ी का शुबह हो जाये तो जाँच परख करायेगा, लोगों से मशवरा करेगा, जानकारों को लाकर दिखायेगा, ख़ूब छान फटक करेगा लेकिन इस्लाम के मुआ़मले में मनमानी करता रहेगा, उल्टी सीधी नमाज़ पढ़ता रहेगा। वुज़ू व गुस्ल, नहाने धोने में इस्लामी तरीक़े का ख़्याल नहीं रखेगा, लेन देन और मुआ़मलात में हराम को हलाल और हलाल को हराम समझता रहेगा लेकिन आलिमों मौलवियों से मालूम नहीं करेगा कि मैं जो करता हूँ यह ग़लत है या सही?

यह इसलिए हुआ कि अब इन्सान को दुनिया के नुक़सान की तो फ़िक्र है लेकिन आख़िरत के घाटे की कोई फ़िक्र नहीं हालाँकि वह मौत से किसी सूरत बच न सकेगा और क़ब्र व हश्र व जहन्नम के अज़ाब से भाग निकलना उसके बस की बात न होगी।

दुनियवी हुकूमतों और सल्तनतों की ही मिसाल ले लीजिए अगर कोई शख़्स किसी हुकूमत के किसी क़ानून के ख़िलाफ़ वर्ज़ी करे और फिर कह दे कि मैं जानता ही नहीं हूँ तो हुक्काम और पुलिस उसकी बात नहीं सुनेंगे और उसे सज़ा दी जायेगी। मिसाल के तौर पर कोई शख़्स बग़ैर लाइसेंस के ड्राइवरी करे या बग़ैर रोड टैक्स जमा करे गाड़ियाँ और मोटर चलाये और जब

पकड़ा जाये तो कहे मुझको पता नहीं था कि गाड़ी चलाने के लिए ये काम करना पड़ते हैं, तो हरगिज़ उसकी बात नहीं सुनी जायेगी। ऐसे ही कोई शख़्स बग़ैर टिकट के रेल में सफ़र करने लगे या पैसेन्जर का टिकट ले और एक्सप्रेस में सफ़र करने लगे, सेकेन्ड क्लास का टिकट लेकर फर्स्ट क्लास में बैठ जाये और जब पकड़ा जाये तो कह दे कि मैं जानता ही नहीं रेल में सफ़र के लिए टिकट लेना पड़ता है या यह एक्सप्रेस है मैं नहीं पहचान सका और यह फर्स्ट क्लास है मुझको नहीं मालूम तो क्या चेक करने वाले उसको छोड़ देंगे? हरगिज़ नहीं। ऐसे ही दीन के मुआमले में जो लोग ग़लत सलत करते हैं वो भी यह कहने से नहीं छूटेंगे कि हम जानते ही न थे और क़ियामत के दिन उन्हें दुहरी सज़ा होगी, एक न जानने की और दूसरी न करने की। इन सबकी तफ़सील व तहक़ीक़ के लिए देखिए आलाहज़रत के फ़रमूदात अलमलफ़ूज़ हिस्सा अव्वल सफ़ा २७ पर। इस सिलसिले में जो लोग कोई दीनी इस्लामी मालूमात हासिल करना चाहें वह हमसे ख़त व किताबत के ज़रिये राब्ता कर सकते हैं हमें जो मालूमात होगी, हम उन्हें बता देंगे। हमारा पता किताब के टाइटिल पर है।

घर वालों को तंगी और परेशानी में छोड़ कर नफ़्ल इबादत करना

कुछ लोगों को देखा गया है कि वह इबादत व रियाज़त में लगे रहते हैं। इशराक़, चाश्त, अव्वाबीन और तहज्जुद की नमाज़ों को अदा करते, तस्बीह व वज़ीफ़े पढ़ते हैं और उनके बीवी बच्चे या बूढ़े और मुफ़लिस माँ बाप रोटी के टुकड़ों के लिए मुहताज और तेरा मेरा मुँह देखते नज़र आते हैं। यह ऐसे लोगों की भूल

है और वह नहीं जानते, बन्दगाने ख़ुदा में से हक़ वालों के हक़ अदा करना भी ख़ुदाए तआ़ला की इबादत और उसकी ख़ुशनूदी हासिल करने का ज़रीया है। नफ़्ल इबादत में मशग़ूलियत अगर बीवी बच्चों और मुफ़लिस माँ बाप के ज़रूरी इख़राजात से रोकती हो तो पहले बीवी बच्चों की किफ़ालत करे फिर वक़्त पाये तो नवाफ़िल में मशग़ूल हो। अलबत्ता पाँचों वक़्त की फ़र्ज़ नमाज़ हरगिज़ किसी सूरत माफ़ नहीं, उसकी अदाएगी हर हाल हर एक पर निहायत लाज़िम व ज़रूरी है, ख़्वाह कैसे भी करे और कुछ भी करे।

और आजकल इस दौर में अगर कोई शख़्स सिर्फ़ फ़र्ज़ नमाज़ों को पाबन्दी के साथ बाजमाअ़त अदा करता हो, रमज़ान के रोज़े रखता हो अगर ज़कात फ़र्ज़ हो तो ज़कात निकालता हो, हज फ़र्ज़ हुआ हो तो ज़िन्दगी में सिर्फ़ एक बार हज़ कर चुका हो, और हराम काम मसलन शराब, जुआ, चोरी, ज़िनाकारी, सूदख़ोरी, ग़ीबत व बदकारी, ख़यानत व बदअ़हदी, सिनेमा, गाने बाजे और तमाशों वग़ैरह से बचता हो और हत्तल इमकान यअ़नी जहाँ तक हो सके सुन्नतों का पाबन्द हो और इसके साथ साथ जाइज़ पेशे के ज़रीए बीवी बच्चों की किफ़ालत करता हो और ईमान व अक़ीदा दुरुस्त रहे तो यक़ीनन वह अल्लाह वाला है, अल्लाह का प्यारा है और वह अल्लाह का मुक़द्दस व नेक बन्दा है। ख़्वाह वह नफ़्ल नमाज़ें और नफ़्ली इबादत अदा न कर पाता हो, वज़ीफ़े और तस्बीह, इश्राक़ व चाश्त व अव्वाबीन वग़ैरहा में मशग़ूल न रहता हो। हदीस पाक में है रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया :-

''फ़र्ज़ इबादत के बाद हलाल रोज़ी की तलाश फ़र्ज़ है।''

(मिश्कात शरीफ़ सफ़ा २४२)

और फ़रमाते हैं :-

"सबसे ज़्यादा उ़म्दा व अफ़ज़ल वह माल है जो तुम अपने घर वालों पर ख़र्च करो।" (मिश्कात सफ़ा १७०)

सदरुश्शरीआ़ हज़रत मौलाना अमजद अली अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं, "इतना कमाना फ़र्ज़ है जो अपने लिए और अहल व अ़याल के लिए और जिन का नफ़क़ा उसके ज़िम्मे वाजिब है, उनके नफ़क़े के लिए और क़र्ज़ अदा करने के लिए किफ़ायत कर सके।" (बहारे शरीअ़त हिस्सा १६ सफ़ा २१८)

और फ़रमाते हैं, "क़द्रे किफ़ायत से ज़्यादा इसलिए कमाता है कि फ़ुक़रा व मसाकीन की ख़बरगीरी कर सके या क़रीबी रिश्तेदारों की मदद करे तो यह मुसतहब है और यह नफ़्ल इबादत से अफ़ज़ल है।" (बहारे शरीअ़त हिस्सा १६ सफ़ा २१८)

फिर फ़रमाते हैं जो लोग मसाजिद और ख़ानक़ाहों में बैठ जाते हैं और बसर औक़ात (गुज़ारे) के लिए कुछ काम नहीं करते और ख़ुद को मुतवक्किल बताते हैं हालाँकि उनकी निगाहें इसकी मुन्तज़िर रहती हैं कि कोई हमें कुछ दे जाये, वह मुतवक्किल नहीं। इससे बेहतर यह था कि वह कुछ काम करते और उससे बसर औक़ात यअ़नी गुज़ारा करते।

इसी तरह आजकल बहुत से लोगों ने पीरी, मुरीदी को पेशा बना लिया है। सालाना मुरीदों में दौरा करते हैं और मुरीदों से तरह तरह की रक़में खसोटते हैं और उनमें कुछ ऐसे हैं कि झूट फ़रेब से भी काम लेते हैं, यह नाजइज़ है।

(बहारे शरीअ़त हिस्सा १६ सफ़ा २१८)

क्या औरतों को जानवर ज़ुबह करना नाजाइज़ है?

औरत भी जानवर ज़ुबह कर सकती है और उसके हाथ का ज़ुबह किया हुआ जानवर हलाल है। मर्द और औरत सब उसे खा सकते हैं। मिश्कात शरीफ़ कितावुस्सैद वलज़िबाह सफ़ा ३५७ पर बुख़ारी शरीफ़ के हवाले से इसके जाइज़ होने की साफ़ हदीस मौजूद है जिसमें यह है कि रसूलुल्लाह सल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने एक लड़की के हाथ की ज़ुबह की हुई बकरी का गोश्त खाने की इजाज़त दी।

मज़ीद तफ़सील के लिए देखिए सय्यिदी मुफ़्ती आज़म हिन्द अलैहिर्रहमह का फ़तावा मुस्तफ़विया जिल्द सोम सफ़ा १५३ और फ़तावा रज़विया जिल्द ८ सफ़ा ३२८ और सफ़ा ३३२, — ख़ुलासा यह कि औरतों के लिए भी मर्दों की तरह हलाल जानवरों और परिन्दों को ज़ुबह करना जाइज़ है जो इसे ग़लत कहे, वह ख़ुद ग़लत और निरा जाहिल बल्कि शरीअत पर इफ़्तिरा करने वाला है।

समझदार बच्चे का ज़ुबह किया हुआ जानवर भी हलाल है और मुसलमान अगर बदकार और हरामकार हो तो ज़बीहा उसका भी जाइज़ है, नमाज़, रोज़े का पाबन्द न हो, उसके हाथ का भी ज़ुबह किया हुआ जानवर हलाल है। हाँ नमाज़ रोज़ा छोड़ना और हराम काम करना इस्लाम में बहुत बुरा है।

दुर्रेमुख़्तार में है :

ज़िबह करने वाले के लिए मुसलमान और आसमानी किताबों पर ईमान रखने वाला होना काफ़ी है अगरचे औरत ही हो।

(दुर्रेमुख़्तार, किताबुज़्ज़बाएह, जिल्द २, सफ़हा २२८, मतबअ़ मुजतबाई)

आलाहज़रत मौलाना शाह अहमद रज़ा ख़ाँ अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं :-

ज़ुबह के लिए दीने समावी (आसमानी दीन) शर्त है, आमाल शर्त नहीं। (फ़तावा रज़विया जिल्द ८, सफ़ा ३३३)

हाँ जो लोग काफ़िर ग़ैर मुस्लिम हों या उनके अक़ीदे की ख़राबी या रसूलुल्लाह सल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की शान में गुस्ताख़ी की वजह से उन्हें इस्लाम से ख़ारिज व मुरतद क़रार दिया गया है, उनके हाथ का ज़बीहा हराम व मुरदार है।

औरत का नामहरम मनिहारों के हाथ से चूड़ियाँ पहनना

यह हरामकारी काफ़ी राइज है। औरतों को मनिहारों के हाथों में हाथ देकर चूड़ियाँ पहनना सख़्त हराम है। बल्कि इसमें दो हराम हैं, एक ग़ैर मर्द को हाथ दिखाना और दूसरा उसके हाथ में हाथ देना।

हमारी इस्लामी माँ बहनों को चाहिए कि अल्लाह तआला से डरें, उसके अज़ाब से बचें और इस फ़ेले हराम को फ़ौरन छोड़ दें। बाज़ार से चूड़ियाँ ख़रीद लिया करें और घर में या तो औरतें एक दूसरे को पहना दें या घर वालों में से किसी महरम से पहन लें या शौहर अपनी बीवी को पहना दें तो गुनाह से बच जायेंगी।

जो मर्द अपनी औरतों को मनिहारों से चूड़ियाँ पहनवाते हैं या उससे मना नहीं करते वह बहुत बड़े बेग़ैरत और दय्यूस हैं।

सय्यिदी आलाहज़रत अलैहिर्रहमह इस मसअले के मुताल्लिक़ फ़रमाते हैं : हराम हराम हराम हाथ दिखाना ग़ैर मर्द को हराम, उसके हाथ में हाथ देना हराम, जो मर्द अपनी औरतों के साथ उसे रवा रखते हैं दय्यूस हैं।

(फ़तावा रज़विया जिल्द १० निस्फ़ आख़िर सफ़ा २०८)

मर्द और औरतों का एक दूसरे की मुशाबहत करना

आजकल मर्दों में औरतों की और औरतों में मर्दों की मुशाबहत इख़्तियार करने और उनके अन्दाज़ व लिबास व चाल ढाल अपनाने का मर्ज़ पैदा हो गया है हालाँकि हदीसे पाक में ऐसे लोगों पर रसूलुल्लाह ﷺ ने लानत फ़रमाई है जो मर्द होकर औरतों की और औरत होकर मर्दों की वज़अ़ क़तअ़ अपनायें।

एक हदीस में है कि हुज़ूर ने फ़रमाया कि हमारे गिरोह से नहीं वह औरत जो मर्दाना रखरखाव अपनाये और वह मर्द जो ज़नाना ढंग इख़्तियार करे।

अबू दाऊद की हदीस में है कि एक औरत के बारे में सय्यिदा आइशा सिद्दीक़ा रदियल्लाहु तआ़ला अ़न्हा को बताया गया कि वह मर्दाना जूता पहनती है तो उन्होंने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह ﷺ ने मर्दानी औरतों पर लानत फ़रमाई है।

खुलासा यह है कि जो वज़अ़ क़तअ़ रखरखाव लिबास वग़ैरह मर्दों के साथ ख़ास हों उनको औरतें न अपनायें और जो औरतों के साथ ख़ास हो उसको मर्द न अपनायें।

आजकल कुछ औरतें मर्दों की तरह बाल कटवाने लगी हैं यह उनके लिए हराम है और यह मरने के बाद सख़्त अज़ाब पायेंगी।

ऐसे ही कुछ मर्द औरतों की तरह बाल बढ़ाते हैं सूफ़ी बनने के लिए लम्बी लम्बी लटें रखते हैं, चोटियाँ गूँधते और जूड़े बना लेते हैं, ये सब नाजाइज़ व ख़िलाफ़े शरअ़ है। तसव्वुफ़ और फ़क़ीरी बाल बढ़ाने और रंगे कपड़े पहनने का नाम नहीं बल्कि रसूलुल्लाह ﷺ की सच्ची पैरवी करना और ख़्वाहिशाते नफ़सानी को मारने का नाम है। (बहारे शरीअ़त हिस्सा १६ सफ़ा १६८)

अक़ीक़े का गोश्त दादा दादी और नाना नानी के लिए नाजाइज़ समझना

कुछ लोग अक़ीक़े का गोश्त दादा दादी और नाना नानी के लिए खाने को नाजाइज़ ख़्याल करते हैं यह बहुत बड़ी जहालत नादानी और ग़लतफ़हमी है। अक़ीक़े का गोश्त दादा दादी और नाना नानी के लिए खाना बिला शुबा जाइज़ है बल्कि जहाँ इस खाने को बुरा जानते हों वहाँ उनके लिए खाना ज़रूरी है।

और वह खायेंगे तो रिवाज मिटाने का सवाब पायेंगे। आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत मौलाना अहमद रज़ा ख़ाँ साहब अलैहिर्रहमतु वर्रिद्‌वान से इस बारेमेंपूछा गया तो फ़रमाया :

सब खा सकते हैं, उक़ूदुददरिया में है :-

احکامها احکام الاضحیة

(अलमलफ़ूज़ हिस्सा अव्वल सफ़ा ४६)

नस्ब और बिरादरी बदलना

यह बीमारी भी काफ़ी आम हो गई है कि हैं किसी क़ौम और बिरादरी के और ख़ुद को दूसरी क़ौम व बिरादरी का ज़ाहिर कर रहे हैं और चाहते हैं कि इस ज़रीए से बरतरी, फ़ज़ीलत और इज़्ज़त हासिल होगी हालाँकि ऐसा करने से न इज़्ज़त मिलती है न फ़ज़ीलत। इज़्ज़त व ज़िल्लत तो अल्लाह तआला के दस्ते कुदरत में है जिसे जो चाहता है अता फ़रमाता है। ये अपना नस्ब बदलने वाले बहुत बड़े बेवकूफ, अहमक़, जाहिल, बेग़ैरत व बेशर्म हैं।

हदीस शरीफ़ में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया जो जानते हुए अपने बाप के सिवा दूसरे को अपना बाप बताये, उस पर जन्नत हराम है।

(सहीह बुख़ारी जिल्द २ सफ़ा १००१, सहीह मुस्लिम जिल्द १ सफ़ा ४४२)

और एक दूसरी हदीस में अपना नस्ब बदलने वाले और अपने बाप के अलावा किसी दूसरे को बाप बताने वालों के बारे में हुज़ूर ने फ़रमाया कि उन पर अल्लाह तआ़ला और फ़िरिश्तों और सारे लोगों की लानत है। (सहीह मुस्लिम जिल्द १ सफ़ा ४६५)

आजकल खुद को सय्यिद कहलाने और आले रसूल बनने का शौक़ बहुत ज़ोर पकड़ गया है। देखते ही देखते हज़ारों लाखों जो सय्यिद नहीं थे वह सय्यिद बन गये जिसकी वजह से अब सय्यिदों का इहतिराम भी मुश्किल होता जा रहा है क्यूँकि नक़ली सय्यिदों की भरमार है। खुद मेरी मालूमात में ऐसे काफ़ी लोग हैं जो अब तक कुछ और थे और अब चालीस और पचास की उम्र में वह सय्यिद और आले रसूल बन गये। ये सब बहुत बड़े वाले मक्कार और धोकेबाज़, अ़य्यार, फ़रेबी और जालसाज़ हैं जिन पर खुदाए तआ़ला की लानत है।

मुरादाबाद शहर में अभी जल्द ही एक मौलवी ने ५५ साल की उम्र में खुद को आले रसूल और सय्यिद कहलवाना शुरू कर दिया है और कहना है कि मेरे पीर ने मुझे सय्यिद बना दिया गोया कि सियादत के साथ मज़ाक़ हो रहा है।

और इसमें काफ़ी दख़ल हमारी क़ौम के बाज़ अफ़राद की इस बेजा अ़क़ीदत का भी है कि उनकी नज़र में इ़ल्म व अमल, तक़वा व तहारत की कोई क़द्र नहीं बस जो किसी बड़े बाप का बेटा है वही सब कुछ है। हालाँकि इस्लामी नुक़्तए नज़र से और तो और खुद सादाते किराम, जिनका इहतिराम व अदब ईमान की पहचान है। आलिमे दीन जो तफ़सीर व हदीस व फ़िक़्ह का इ़ल्म काफ़ी रखता हो वह उन सादात से अफ़ज़ल है जो आलिम न हों।

हदीस में है रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया :-

"जिसका अमल उसे पीछे ढकेल दे, वह नस्ब से आगे नहीं बढ़ सकता।" (सहीह मुस्लिम जिल्द २ सफ़ा ३४५)

आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत मौलाना अहमद रज़ा ख़ाँ साहब अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं, फ़ज़्ले इल्म फ़ज़्ले नस्ब से अशरफ़ व आज़म है। सय्यिद साहब कि आलिम न हों अगरचे सालेह हों आलिम सुन्नी सहीहुल अक़ीदा के मरतबे को नहीं पहुँच सकते। (फ़तावा रज़विया जिल्द ६ सफ़ा ५६)

बैआ़ना (एडवान्स) ज़ब्त करना

आजकल अक्सर ऐसा होता है कि एक शख़्स किसी से कोई माल ख़रीदता है और बेचने वाले को कुछ रक़म पेशगी देता है जिसको बैआ़ना कहते हैं। फिर किसी वजह से वह माल लेने से इन्कार कर देता है तो बेचने वाला बैआ़ने की रक़म ख़रीदार को वापस नहीं करता बल्कि ज़ब्त कर लेता है और पहले से यह तय किया जाता है कि अगर सौदा न ख़रीदी तो बैआ़ना ज़ब्त कर लेंगे। यह बैआ़ना ज़ब्त करना शरअ़ के मुताबिक़ मना है और यह बैआ़ने की रक़म इस तरह उसके लिए हलाल नहीं बल्कि हराम है।

आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

बैआ़ना आजकल तो यूँ होता है कि अगर ख़रीदार बादे बैआ़ना देने के, न ले तो बैआ़ना ज़ब्त, और यह क़तअ़न हराम है। (अलमलफ़ूज़ हिस्सा ३ सफ़ा २७)

हाँ अगर बैअ़ तमाम हो ली थी और बिला किसी शरई वजह के ख़रीदार ख़्वामख़्वाह ख़रीदने से फिरता है तो बेचने वाले को हक़ हासिल है कि वह बैअ़ को लाज़िम जाने और माल उसके हवाले करे और क़ीमत उससे हासिल करे ख़्वाह क़ाज़ी व हाकिम या पंचायत वग़ैरह की मदद से लेकिन उसको माल न देना फिर उसकी रक़म वापस न करना हराम है।

आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

बैअ़ न होने की हालत में बैआ़ना ज़ब्त कर लेना जैसा कि जाहिलों में रिवाज है ज़ुल्मे सरीह है (खुला हुआ ज़ुल्म है)

मज़ीद फ़रमाते हैं :

यह कभी न होगा कि बैअ़ को फ़स्ख़ (रद्द) हो जाना मानकर मबीअ़ (सौदा) ज़ैद को न दे और उसके रुपये इस जुर्म में कि तू क्यूँ फिर गया, ज़ब्त कर ले।

(फ़तावा रज़विया जिल्द ७ सफ़ा ७)

भाईयो! हराम खाने से बचो सुकून व चैन जिसे अल्लाह देता है उसे मिलता है दौलत और पैसे से नहीं। आप ने बहुत से मालदारों को बेचैन व परेशान देखा होगा और बहुत से ग़रीबों को चैन व सुकून में आराम से सोते देखा होगा और असली चैन की जगह तो जन्नत है।

.कुर्आने करीम गिर जाये तो उसके बराबर तोल कर अनाज ख़ैरात करना

.कुर्आने करीम अगर हाथ या अलमारी से गिर जाये तो कुछ लोग उसको तोल कर बराबर वज़न का आटा, चावल वग़ैरा ख़ैरात करते हैं, और उस ख़ैरात को उसका कफ़्फ़ारा ख़्याल करते हैं, यह उनकी ग़लतफ़हमी है।

.कुर्आने करीम जानबूझ कर गिरा देना या फेंक देना तो बहुत ही ज़्यादा बुरा काम है। किसी भी मुसलमान से इसकी उम्मीद नहीं की जा सकती कि वह ऐसा करेगा और जो तौहीन व तहक़ीर के लिए ऐसा करेगा वह तो खुला काफ़िर है। तौबा करे, फिर से कलिमा पढ़े, निकाह हो गया हो तो फिर से निकाह करे।

लेकिन अगर धोके से भूल में .कुर्आन शरीफ़ हाथ से छूट गया या अलमारी वग़ैरह से गिर गया तो उस पर कोई गुनाह नहीं है। भूल चूक माफ़ है। लेकिन फिर भी अगर बतौरे ख़ैरात कुछ राहे ख़ुदा में ख़र्च कर दे तो अच्छी बात है और निहायत मुनासिब व बेहतर है। लेकिन .कुर्आन शरीफ़ को तोलना और उसके वज़न के बराबर कोई चीज़ ख़ैरात करना और उस ख़ैरात को कफ़्फ़ारा समझना नासमझी और बेइल्मी है। .कुर्आने करीम को तोलने और वज़न के बराबर सदक़ा करने का इस्लाम में कोई हुक्म नहीं है। .कुर्आन व हदीस और फ़िक़्ह की किताबों में कहीं ऐसा हुक्म नहीं आया है। हाँ सदक़ा व ख़ैरात एक उम्दा काम है। लिहाज़ा जो कुछ आप से हो सके थोड़ा या ज़्यादा राहे ख़ुदा में ख़र्च कर दें, सवाब मिलेगा और नहीं किया तब भी गुनाह व अ़ज़ाब नहीं होगा।

जानवरों को लड़ाना

कुछ लोग तफ़रीह व तमाशे के लिए मुर्ग़, बटेर, तीतर, हाथी, मेंढे और रीछों वग़ैरह को लड़ाते हैं। यह जानवरों को लड़ाना इस्लाम में हराम है। हदीस में है :

''रसूलुल्लाह ﷺ ने जानवरों को लड़ाने से मना फ़रमाया।'' (जामेअ़ तिर्मिज़ी जिल्द १ सफ़ा २०४, सुनन अबू दाऊद जिल्द १ सफ़ा ३४६)

और यह जानवरों को लड़ाना, उन पर ज़ुल्म है। आपकी तो तफ़रीह हो रही है, और उनका लड़ते लड़ते काम हुआ जा रहा है। मज़हबे इस्लाम इसका रवादार नहीं। बेज़बानों पर ज़ुल्म व ज़्यादती से इस्लाम मना फ़रमाता है। कबूतरबाज़ी भी नाजाइज़ है।

आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

तमाशे के लिए कबूतरों को भूका उड़ाना, जब उतरना चाहें, उतरने न देना और दिन भर उड़ाना, ऐसा कबूतर पालना हराम है। (फ़तावा रज़विया जिल्द १० किस्त १ सफ़ा १६५) और ये तमाशे देखना, इनमें शिरकत करना भी नाजाइज़ है।

(बहारे शरीअ़त हिस्सा १६ सफ़ा १३१)

जानवरों से उनकी ताक़त से ज़्यादा काम लेना

आजकल आमतौर से लोग इस बात का ख़्याल नहीं रखते। जानवरों पर उनकी ताक़त से ज़्यादा बोझ लाद देना और मार मार कर उन्हें चलाना, ज़ुल्म है। यूँ ही उन बेज़बानों के चारा पानी और गर्मी व जाड़े की फ़िक्र न करना भी ज़ुल्म है। दूध देने वाले जानवरों का सारा दूध खींच लेना और फिर उसके बच्चे को दिन दिन भर के लिए भूंका प्यासा रखना ज़ुल्म है। ऐसा करने वाले ज़ालिम हैं और ये ज़्यादा कमाई और आमदनी के लिए ये सब करते हैं। लेकिन कमाई के बाद भी ऐसे लोग परेशान रहते हैं और उन्हें ज़िन्दगी में सुकून मयस्सर नहीं आता और हमेशा बेचैन व परेशान रहते हैं।

सदरुश्शरीआ हज़रत मौलाना अमजद अली साहब अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं :

जानवर से काम लेने में ज़रूरी है कि उसकी ताक़त से ज़्यादा काम न लिया जाये। बाज़ यक्का और तांगे वाले इतनी ज़्यादा सवारियाँ बिठाते हैं कि घोड़ा मुसीबत में पड़ जाता है, यह नाजाइज़ है।

जानवर पर ज़ुल्म करना, ज़िम्मी काफ़िर पर ज़ुल्म से ज़्यादा बुरा है और ज़िम्मी काफ़िर पर ज़ुल्म मुसलमान पर ज़ुल्म करने से भी ज़्यादा बुरा है। क्यूँकि जानवर का कोई मुईन व मददगार अल्लाह तआला के सिवा नहीं। इस ग़रीब को इस ज़ुल्म से कौन बचाये। (बहारे शरीअत हिस्सा १६ सफ़ा २८५)

क्या उल्लू कोई मनहूस परिन्दा है?

उल्लू एक परिन्दा है जिसको लोग मनहूस ख़्याल करते हैं हालाँकि इस्लामी नुक़्तए नज़र से यह एक ग़लत बात है। उल्लू को मनहूस ख़्याल करना एक जाहिलाना अक़ीदा है।

सहीह बुख़ारी की हदीस में है :

"रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, छुआछूत कोई चीज नहीं, उल्लू में कोई नहूसत नहीं और सफ़र (चेहलम) का महीना भी मनहूस नहीं।" (मिश्कात बाब उल फ़ाल वत्तैर सफ़ा ३६१)

सदरुश्शरीआ हज़रत मौलाना अमजद अली साहब फ़रमाते हैं :

'हाम्मह' से मुराद उल्लू है। ज़मानए जाहिलियत में अहले अरब इसके मुतअल्लिक़ क़िस्म क़िस्म के ख़्यालात रखते थे और अब भी लोग इसको मनहूस समझते हैं। जो कुछ भी हो हदीस ने इसके मुतअल्लिक़ हिदायत की कि इसका एतिबार न किया जाये। माहे सफ़र को लोग मनहूस जानते हैं, हदीस में फ़रमाया, यह कोई चीज़ नहीं। (बहारे शरीअत हिस्सा १६, सफ़ा १२४)

ख़ुलासा यह है कि उल्लू को मनहूस समझना ग़लत है। नफ़ा नुक़सान का मालिक सिर्फ़ अल्लाह तबारक व तआला हैं। जो वह चाहता है, वही होता है।

धोबी के यहाँ खाना खाना जाइज़ है

कुछ लोग धोबी के यहाँ खाना खाने को बुरा जानते हैं, यह बहुत बुरी बात है। धोबी हो या कोई मुसलमान उसके यहाँ खाना खाने में कोई हर्ज नहीं और बिला शुबह जाइज़ है। जो लोग धोबियों के यहाँ खाने को बुरा जानते हैं और उनके यहाँ के खाने को नापाक बताते हैं, वो निरे जाहिल हैं।

आलाहज़रत अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं :

धोबी के यहाँ खाना खाने में कुछ हर्ज नहीं, यह जो जाहिलों में मशहूर है कि धोबी के यहाँ का खाना नापाक है, महज़ बातिल (झूठ) है। (अलमलफ़ूज़ हिस्सा अव्वल सफ़ा १३)

क्या बुराई और भलाई का तअ़ल्लुक़ सितारों से भी है?

कुछ लोग समझते हैं कि बुराई भलाई और नफ़ा नुक़सान का तअ़ल्लुक़ सितारों से है हालाँकि ऐसा कुछ नहीं है।

आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

मुसलमान मुतीअ़ पर कोई चीज़ नहस (मनहूस) नहीं और काफ़िरों के लिए कुछ सअ़द (भलाई) नहीं। बाक़ी कवाकिब (सितारों) में कोई सआ़दत व नहूसत नहीं अगर उनको खुद मुअस्सिर जाने मुश्रिक (काफ़िर) है और उनसे मदद माँगे तो हराम है और उनकी रिआयत ज़रूर ख़िलाफ़े तवक्कुल है।

(फ़तावा रज़विया जिल्द १० क़िस्त २ सफ़ा २६५)

बाज़ नुकूश व तावीज़ात के बारे में सितारों का हिसाब लगा कर कुछ औक़ात को ख़ास किया जाता है तो उसके बारे में मुसलमान को यह अक़ीदा रखना चाहिए कि ख़ुदाए तआ़ला ने बाज़ औक़ात को बाज़ कामों के लिए बाज़ दूसरे औक़ात के मुक़ाबले में पसन्द फ़रमाया है और किसी साअ़त और घड़ी को किसी दूसरे से किसी ख़ास काम के लिए अफ़ज़ल व बेहतर बनाया है। लेकिन मनहूस किसी वक़्त को नहीं समझना चाहिए और होता वही है जो अल्लाह तआ़ला चाहता है और ख़ुदा व रसूल पर ईमान और उनकी इताअ़त से बढ़कर कोई सआ़दत व बरकत, नफ़ा और भलाई नहीं और उनकी नाफ़रमानी और कुफ़्र से बढ़कर कोई नहूसत नहीं ---- और ऐसे ही बाज़ कामों के लिए

बाज़ दिनों की फ़ज़ीलत आई है जैसे सफ़र के लिए जुमेरात या पीर का दिन और नाख़ुन तरशवाने और बाल कटवाने के लिए जुमे का दिन। इसका मतलब यह नहीं कि और दिन मनहूस हैं या उनमें वह काम नाजाइज़ व गुनाह है बल्कि किसी दिन भी सफ़र करना और किसी दिन नाख़ुन और बाल कटवाना नाजाइज़ व गुनाह नहीं है, हर दिन ज़ाइज़ है। हाँ मख़सूस और वो दिन जो ऊपर ज़िक्र हुए उनमें ये काम दूसरे दिनों से ज़्यादा बेहतर व अफ़ज़ल व पसन्दीदा हैं।

बाज़ जगह औरतें बुध के दिन घर से निकलने और सफ़र करने को मना करती हैं। यह उनकी जहालत है। बुध के दिन की तो ख़ास तौर पर हदीस में फ़ज़ीलत आई है। रसूलुल्लाह ﷺ का इरशाद है :-

''जो काम बुध के दिन शुरू किया जाता है, पूरा होता है।''

यह हदीस आलाहज़रत इमामे अहले सुन्नत ने फ़तावा रज़विया जिल्द १२ सफ़ा १६० पर नक़ल फ़रमाई है।

सदरुश्शरीअ़ा हज़रत मौलाना अमजद अली साहब अलैहिर्रहमह फ़रमाते हैं :

नजूम की इस क़िस्म की बातें जिनमें सितारों की तासीरात बताई जाती हैं कि फ़लाँ सितारा तुलूअ़ होगा तो फ़लाँ बात होगी, यह भी बेशरअ़ है। इसी तरह नक्षत्रों का हिसाब कि फ़लाँ नक्षत्र से बारिश होगी, यह भी ग़लत है। हदीस में इस पर सख़्ती से इन्कार फ़रमाया है। (बहारे शरीअ़त हिस्सा १६ सफ़ा २५७)

बहुत से लोग मंगल के दिन कोई नया काम शुरू करने को बुरा जानते हैं और औरतें इस दिन नहाने को बुरा जानती हैं, ये सब भी उनकी ग़ैर इस्लामी और जाहिलाना बातें हैं।

हाथों के डोरे और कड़े

बाज़ मज़ारात के मुजाविर और सज्जादानशीन लोग ज़ाइरीन के हाथों में सुर्ख़ या पीले रंग के डोरे बाँध देते हैं। ऐसे काम हिन्दुओं के ब्राबा और साधू लोग करते थे, वह तीरथ यात्रियों के हाथों में लाल पीले डोरे बाँध देते हैं अब मज़ारात के मुजाविर और सज्जादों में भी इसका रिवाज हो गया है। यह बात मुनासिब नहीं है और मुसलमानों को ग़ैर मुस्लिमों की नक़ल और उनकी मुशाबहत से बचना चाहिए और हाथों में डोरे और कड़े न डालना चाहिए और न डलवाना चाहिए।

मुस्तहब्बात को फ़र्ज़ व वाजिब समझना और फ़राइज़ को अहमियात न देना

आजकल अवाम अहले सुन्नत में एक बड़ी तादाद उन लोगों की है जिन्होंने नमाज़, रोज़ा, ज़कात वग़ैरह इस्लाम में ज़रूरी बातों को छोड़ कर नियाज़, नज़्र, फ़ातिहा वग़ैरह बिदआते हसना को लाज़िम व ज़रूरी समझ लिया है, यह एक ग़लतफ़हमी है। इसमें कोई शक नहीं कि नियाज़, फ़ातिहा, मीलाद शरीफ़ मुरव्वजा सलात व सलाम यअ़नी जैसे आजकल पढ़ा जाता है, बारह रबीउ़लअव्वल को जुलूस निकालना, ग्यारहवीं शरीफ़, २२ रजब और १४ शाबान और १० मुहर्रम वग़ैरह को खाने, खिचड़े, पूड़ी, हलवे, पुलाव और मालीदे पर फ़ातिहा दिलाना, उ़र्स करना, बुज़ुर्गों के मज़ारात पर हाज़िरी देना, क़ब्र पर अज़ान देना, हुज़ूर के नाम को सुनकर अँगूठे चूमना, मुर्दों के तीजे, दसवें और चालीसवें करना, ये सब अच्छे काम हैं, इन्हें करने में कोई हर्ज और गुनाह नहीं। जो इन्हें ग़लत कहते हैं, वो ख़ुद ग़लत हैं

लेकिन जो इन्हें फ़र्ज़ और वाजिब (शरअ़न लाज़िम व ज़रूरी) ख़्याल करते हैं, वो भी भूल में हैं। इस मज़मून से हमारा मक़सद सिर्फ़ उनकी इस्लाह करना है।

सुन्नी भाईयों! नियाज़, फ़ातिहा, उ़र्स, मीलाद वग़ैरह् ऊपर ज़िक्र की हुई बातों में मुन्किरीन वहाबियों से इख़्तिलाफ़ सिर्फ़ यह है कि वो इनको बुरा कहते हैं और उलेमाए अहले सुन्नत इन सब कामों को अच्छा काम बताते हैं। लेकिन फ़र्ज़ व वाजिब (शरअ़न लाज़िम व ज़रूरी) ये भी नहीं क़हते। फ़र्ज़ और वाजिब तो इस्लाम में ये काम हैं :-

पाँचों वक़्त नमाज़ बाजमाअ़त की सख़्ती के साथ पाबन्दी करना। रमज़ान के महीने के रोज़े रखना। साहिबे निसाब को साल में एक बार ज़कात निकालना। जिसके बस की बात हो उसके लिए पूरी ज़िन्दगी में एक बार हज करना। ज़िना, शराब, जुए, सूद, झूट, ग़ीबत, ज़ुल्म, पिक्चर, गाने, तमाशे वग़ैरह् से बचना। माँ बाप की फ़रमाबरदारी करना। जिसका आप पर जो हक़ है उसको अदा करना। क़र्ज़ लेकर जल्द से जल्द देने की कोशिश करना। मज़दूर की मज़दूरी देने में देर न करना वग़ैरह्। हक़ यह है अगरचे हक़ कड़वा होता है कि नियाज़ व नज़्र; मीलाद व फ़ातिहा, उर्स व मज़ारात की हाज़िरी का फ़ैज़ और फ़ाइदा सही मअ़नों में उन्हीं को हासिल होता है जो उन कामों पर अमल करते हैं जिनका हमने अभी ऊपर ज़िक्र किया है। जो लोग नमाज़ रोज़े को छोड़ कर हराम कमाते, हराम खाते, हराम करते और फिर बुज़ुर्गों की नियाज़ दिलाते, उनके नाम पर बड़ी बड़ी देगें पकाते, मज़ारात पर हाज़िरी देते हैं उनकी वजह से मज़हब ए अहले सुन्नत बदनाम हो रहा है।

यह जान लेना भी ज़रूरी है कि दूसरे फ़िरक़ों में जिन लोगों को इस्लाम से ख़ारिज और काफ़िर कहा गया है वह नियाज़ व फ़ातिहा न दिलाने की वजह से नहीं बल्कि रसूलुल्लाह सल्लाहु

तआ़ला अ़लैहि वसल्लम और दीगर अम्बियाए इज़ाम की शान में गुस्ताख़ी करने की वजह से उन्हें गुमराह व बदमज़हब या काफ़िर वग़ैरहा क़रार दिया गया है।

अलबत्ता इसमें भी कोई शक नहीं कि नियाज़ व फ़ातिहा, उर्स व मीलाद वग़ैरा आजकल अहले हक़ की अ़लामत निशान और पहचान बन गई हैं लिहाज़ा इन कामों को आ़म तौर से छोड़ा न जाये और फ़र्ज़ व वाजिब भी न समझा जाये। बस अच्छे काम समझ कर शरीअ़ते इस्लामिया के दाइरे में रह कर क़रते रहें। और किसी के ईसाले सवाब के लिए उसकी फ़ातिहा को किसी ख़ास दिन के साथ लाज़िम व ज़रूरी समझना भी ग़लतफ़हमी है। बल्कि हर एक की फ़ातिहा हर दिन और हर वक़्त हो सकती है और किसी निसबत से किसी दिन को ख़ास कर लेने में भी कोई हर्ज नहीं जबकि उसको लाज़िम और ज़रूरी न समझे।

आलाहज़रत फ़रमाते हैं :

यह तअ़य्युनात (दिनों को फ़ातिहा के लिए ख़ास करना) उ़र्फ़ी है इनमें असलन हर्ज नहीं जबकि इन्हें शरअ़न लाज़िम न जाने। यह न समझे कि इन्हीं दिनों में सवाब पहुँचेगा, आगे पीछे नहीं। (फ़तावा रज़विया जिल्द ४ सफ़ा २१६)

ख़ुलासा यह कि दिनों को तय कर लेना अपनी सुहूलत और रिवाज के तौर पर है और इसमें हर्ज नहीं मगर इसे लाज़िम न जाने कि हम दिन तय कर लेंगे तभी सवाब पहुँचेगा और दिन आगे पीछे हो जाने से सवाब न पहुँचेगा यह ग़लत है।

और दूसरी जगह फ़रमाते हैं :

ईसाले सवाब हर दिन मुमकिन है और ख़ुसूसियत के साथ किसी एक तारीख़ का इल्तिज़ाम (पाबन्दी) जबकि उसे शरअ़न लाज़िम न जाने मुज़ाइक़ा (हरज) नहीं।

(फ़तावा रज़विया जिल्द ४ सफ़ा २२४)

छींक आ जाये तो बदशगुन मानना

कुछ जगहों पर बाज़ हमारे अनपढ़ मुसलमान भाई छींक आने को बुरा जानते हैं और उससे बदशगुनी लेते हैं हालांकि छींक आना इस्लाम में अच्छी बात है और छींक अल्लाह को पसन्द है। लिहाज़ा जिसको छींक आये, वह अल्लाह तआ़ला का शुक्र करे। हदीस शरीफ़ में है, हुज़ूर ﷺ फ़रमाते हैं :

बेशक अल्लाह तआ़ला छींक को पसन्द और जमाही को नापसन्द फ़रमाता है तो जिसको छींक आये वह ''अल्हम्दु लिल्लाह'' कहे और जो दूसरा शख़्स उसको सुने वह जवाब दे (यअ़नी ''यरहमुकल्लाह'' कहे) और जमाही शैतान की तरफ़ से है इसको जहाँ तक बस चले न आने दे और जमाही में जो मुँह से आवाज़ निकलती है, उसको सुन कर शैतान हँसता है।

(बुख़ारी जिल्द १ सफ़ा ६१६)

बोहनी के मुतअ़ल्लिक़ ग़लत ख़्यालात

ख़रीद व फ़रोख़्त के मुआ़मले में सवेरे को जो सबसे पहली रक़म हासिल होती है, उसको 'बोहनी' कहते हैं। आ़मतौर से लोग पहली सौदा न पटे और पहला ग्राहक वापस चला जाये तो इस बात को बुरा मानते हैं और कहते हैं कि बोहनी ख़राब हो गई और इससे सारे दिन की दुकानदारी के लिए बदशगुन लेते हैं। ये सब काफ़िरों और ग़ैर मुस्लिमों की बातें और वहमपरस्तियाँ हैं, जो मुसलमानों में भी पैदा हो गई हैं। एक मुसलमान के लिए ज़रूरी है कि वह इन ख़्यालात को दिल में जगह न दे और यह अक़ीदा रखे कि नफ़ा नुक़सान का मालिक अल्लाह तआ़ला है जब जिसको जो चाहे अता फ़रमाये और बोहनी ख़राब होने से कुछ नहीं होता।

क्या इस्लाम में ताज़ियादारी जाइज़ है?

कुछ लोग मुहर्रम और सफ़र के महीने में ताज़िये बनाते उन्हें ढोल बाजों के साथ घुमाते और उनके साथ सीना पीटते,मातम करते हुये उन्हें नक़्ली और फ़र्ज़ी कर्बला में ले जा कर दफन करते हैं। यह सब बातें इस्लाम में मना हैं, नाजाइज़ व गुनाह हैं।

प्यारे इस्लामी भाइयो! हमारा आपका प्यारा मज़हब जो "इसलाम" है,वह एक साफ़ सुथरा, संजीदा और शरीफ़ अच्छा भला,सीधा सच्चा मज़हब है। वह खेल तमाशों, गाने बाजों,ढोल ढमाकों,नाच,कूद फांद,मातम और सीना कूबी वाला मज़हब नहीं हैं। आजकल की ताज़ियेदार और उसको जाइज़ बताने वाले,दुनिया को यह ज़हिन दे रहे हैं कि इस्लाम भी दूसरे धर्मों की तरह मेलों ठेलों और खेल तमाशों वाला मज़हब हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि ताज़िये बनाना जाइज़ है, उसको घुमाना वगै़रा नाजाइज़ है। यह बात भी एक दम दुरूस्त नहीं बल्कि आजकल जो ताज़िया बनाया जाता है,उस को बनाना भी मना है क्योंकि यह हज़रत इमाम हुसैन के रौज़े और मज़ार का सही नुक्शा नहीं। बल्कि इजाज़त सिर्फ़ इतनी है कि हज़रत इमाम हुसैन रदियल्लाहु तआला अन्हु के मज़ार पुर अन्वार का सही नक्शा किसी कागज़ वगैरा पर बना हुआ अपने पास या घर में रखे जैसे ख़ाना–ए–काबा,गुंबदे ख़ज़रा,बगदाद शरीफ़,अजमेर शरीफ़ वगैरा के बने हुये नक्शे कलन्डरों वगैरा में और अलग से भी आते हैं और लोग बरकत हासिल करने के लिए उन्हें घरों में टांगते हैं।(हवाले और तफ़सील से जानने के लिए देखिये,फ़तावा रज़विया जि.10 किस्त अव्वल स.36)

मुहर्रम के महीने की 7,12,13 तारीख़ को जो मेहंदी बनाई या निकाली जाती है,यह भी एक बेकार और गढ़ी हुई रस्म है,राफ़ज़ी और शीआ मज़हब की पैदावार है, इस्लाम का इस से कोई तअल्लुक़ नहीं,जिहालात का नतीजा है।

अहले सुन्नत वलजमाअत का मज़हब यह है कि हज़रत इमाम हुसैन और दूसरे शहीदाने करबला और बुज़ुर्गाने दीन से सच्ची मोहब्बत यह है कि उनके नक्शे क़दम पर चला जाये और उनके रास्ते तरीक़े,ढंग और चाल चलन को अपनाया जाये। औरउसके साथ साथ उनकी रूह को सवाब पहुँचाने के लिए नफ़िल पढ़े जायें,रोज़े रखे जायें,कुरआने करीम की तिलावत की जाये या सदक़ा ख़ैरात कर के अहबाब दोस्तों,रिशतेदारों या ग़रीबों मिस्कीनों को खाना,खिचड़ा,हलवा,मलीदा जो मयस्सर हो वह खिला कर उस का सवाब उनकी पाक रूहों को पहुँचाया जाये,जिस को फ़ातिहा कहते हैं,तो यह बे शक़ जाइज़ उम्दा और अच्छा काम है और उस से अल्लाह तआला राज़ी होता है। और अपने रब की रज़ा हासिल करना हर मुसलमान के लिए हर ज़रूरत से ज़्यादा ज़रूरी है। और न्याज़,फातिज़ा,सदक़ा,ख़ैरात में भी यह ज़रूरी है कि अपने नाम शोहरत और दिखावे के लिए न हो। बल्कि जो भी और जितना भी हो,ख़ालिस अल्लाह की रज़ा हासिल करने और बुज़ुर्गों को सवाब पहुँचाने के लिए हो। आजकल कुछ लोग लम्बी लम्बी न्याज़ें दिलाते ख़ूब देगें पका पका कर खिलाते हैं और उनका मक़सद अपनी नामवरी और शौहरत होता है और वह दिखावे के लिए ऐसा करते हैं। उनकी यह नियाज़ें क़बूल नहीं होंगी।

यह भी सुन्ने में आया है कि कोई शख़्स ताज़ियेदारी

और उसके साथ की जाने वाली ख़ुराफ़ात से मना करे तो कुछ लोग उसे वहाबी कह देते हैं और समझते हैं कि ताज़ियेदारी सुन्नियों का काम है और उस से मना करना वहाबियों का त़रीक़ा है। हांलाकि ऐसा नहीं बल्कि कभी भी किसी सह़ी सुन्नी आ़लिम ने ताज़ियेदारी को जाइज़ नहीं कहा है बल्कि सब ने हमेशा नाजाइज़ व गुनाह लिखा है और आ़ला ह़ज़रत मौलाना अह़मद रज़ा ख़ाँ फ़ाज़िले बरेलवी रह़मतुल्लाहि तआ़ला अ़लैहि की किताबों में तो जगह जगह उसको ह़राम बताया गया है और उस बारे में उनके फ़तावा का मजमूआ़ा एक किताब की शक्ल में छप भी चुका है जिस का नाम रिसाला–ए–ताज़िये दारी है। लिहाज़ा जो हमारे भाई तफ़सील से इस मसअले को पढ़ना चाहें वह सुन्नी कुतुब ख़ानों से इस रिसाले को ह़ासिल कर के पढ़ें।

और जो मौलवी ताज़ियेदारी को जाइज़ कहते हैं,वह ऐसा पब्लिक को ख़ुश करने और उन से प्रोग्रामो के ज़रिए नज़राने वगै़रा ह़ासिल करने के लिए करते हैं। उन्हें चाहिए कि पब्लिक को ख़ुश रखने के बजाये अल्लाह और उस के रसूल को राज़ी रखने की फ़िक्र करे क्योंकि ह़राम को ह़लाल बताने वालों की जब क़ब्र व हश्र में पिटाई होगी तो यह पब्लिक बचाने नहीं जायेगी और उन जलसों प्रोग्रामो और नज़रानों की रक़मों के ज़रीए वहाँ जान नहीं छुटेगी। बल्कि यही ताज़ियेदार जिन को ख़ुश रखने के लिए यह मौलवी ग़लत़ मसअले बताते हैं,क़यामत के दिन उनका दामन पकड़ेंगे।

यह भी मुम्किन है कि ताज़ियेदारी और उस के साथ की जाने वाली ख़ुराफ़ातों को जाइज़ कहने वाले मौलवी वहाबियों के एजेन्ट हों और उनसे ख़ुफ़िया समझौता किए हुये हों क्योंकि वहाबियत को उस ज़रिये से फायदा पहुँचता

है और काफी लोग अपनी जिहालत की वहज से हमारे माहौल में खिलाफ़ शरअ हरकात देख कर वहाबियों की तारीफ़ करने लगते हैं हांलाकि यह उन की भूल है और सुन्नी उलमा की किताबें न पढने का नतीजा है।

हाँ इतना जानना ज़रूरी है कि वहाबी ताज़ियेदारी को शिर्क और ताज़ियेदारों को मुशिरक व काफ़िर तक कह देते हैं। लेकिन सुन्नी उलमा उन्हें मुसलमान और अपना भाई ही ख़्याल करते हैं। बस बात इतनी है कि वह एक गुनाह कर रहे हैं। ख़ुदाए तआला उन्हें इस से बचने की तौफ़िक़ अता फ़रमाये। ताज़ियेदारी से मुतअल्लिक़ तफ़सीली मालूमात हासिलकरने के लिए मेरी किताब मुहर्रम में क्या जाइज़ क्या नाजाइज़ का मुताला करें।

बेवुज़ू अज़ान पढ़ने का मसअला

बेवुज़ू अज़ान नहीं पढ़ना चाहिए। लेकिन अगर कोई पढ़ दे तो अज़ान दुरूस्त हो जाती है और उस अज़ान के बाद जो नमाज़ पढ़ी जायेगी वह भी दुरूस्त है। लेकिन बेवुज़ू अज़ान पढ़ने की आदत डाल लेना मुनासिब नहीं है।

आला हज़रत फ़रमाते हैं

"बेवज़ू अज़ान पढ़ना जाइज़ है,बई माना कि अज़ान हो जायेगी लेकिन चाहिए नहीं।फ़तावा रज़विया,जि.5स.373

ख़ुलासा यह कि कभी बे वुज़ू भी अज़ान पढ़ी जा सकती है। लेकिन बेहतर और अच्छा तरीक़ा यहीहै कि अज़ान बावुज़ू पढ़ी जाये।

इस ज़माने की एक बड़ी नेकी

अगर आप अपनी,अपने बेटे या भाई की शादी करना चाहते हैं। और आप के अज़ीज़ों,क़रीबों,रिशते दारों या अहले मुहल्ला में कोई ग़रीब लड़की है। जिस से आपका रिशता

शरअन दुरूस्त है,तो उस से बग़ैर ख़र्चा कराये हुये और बग़ैर बारात वग़ैरा चढ़ाये हुये और बग़ैर जहेज़ लिए एक दम सादा निकाह कीजिए जैसे कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहिवसल्लम ने किए थे। और उस को साथ इज़्ज़त के अपने घर में बीवी बना कर रखिये। यह इस ज़माने की बहुत बड़ी हमदर्दी और नेकी है। और ऐसा करने वालों को जिहाद का सवाब मिलेगा। आज लोग ख़्वाह मख़्वाह की हमदर्दियाँ तो दिखाते हैं। अज़ीज़ों,रिशते दारों और ख़ान्दान वालों की तरफ़ सें लड़ने मरने को तैयार हो जाते हैं। लेकिन जवान लड़किया घरों में पल रही हैं। उनकी वजह से लोग परेशान हैं और यह उनके रिशते मन्ज़ूर नहीं करते। हमदर्दी इस का नाम है कि आप के अज़ीज़ को जो परेशानी हो वह दूर की जाये। जब्कि वह आप के बस की बात है। यह कहाँ की हमदर्दी,रिशते दारी और क़राबत है कि आप दौलत और मालदारी की वजह से इधर उधर रिशते तलाश कर रहे हैं। और आप के अज़ीज़ अपनी लड़की के लिए परेशान और दुखी हैं।

सब से बेहतर मुसलमान

आजकल कुछ लोग तो वह हैं कि दुनिया के काम धंधों में लग कर दीन को बिलकुल भुला बैठे हैं। जैसे कि उन्हें सब दिन दुनिया में रहनाहै। और कुछ वह हैं कि दीन दार बने तो काम धंदा छोड़ बैठे,काहिल,सुस्त और आराम तल्ब हो गये या इस चक्कर में हैं कि इसी दीनदारी के नाम पर लोग हमें कुछ दे जायें। इन दोनों क़िस्म के लोगों से इस्लाम कीसही तरजुमानी नहीं होती। सब से बेहतर मुसलमान वह है जो अपना कुछ काम धंधा करता हो और साथ ही साथ नमाज़ रोज़े का पाबन्द, दीनदार मुसलमानहो,हलाल व हराम में फ़र्क़ रखता हो।

इस्लाम में सब से अच्छा काम

इस्लाम में सब से अच्छा काम पाँचों वक़्त की नमाज़ की पाबन्दी है और मस्जिदों को बनाना और उन्हें नमाज़ व अज़ान से आबाद करना और आबाद रखने के लिए कोशिश करना है मस्जिद के साज़ व सामान लौटे चटाई वज़ू का इन्तिज़ाम इस की देख भाल सफ़ाई करने वाले अज़ान देने वाले मुअज़्ज़िनों और नमाज़ पढ़ाने वाले इमामों का ख़्याल करना और उन्हे हर तरह ख़ुश रखना,बेहतरीन काम है और इस सिलसिले में जो ख़र्चा हो वह बेहतरीन खर्चा है।

आला हज़रत मौलाना अहमद रज़ा ख़ाँ बरेलवी रहमतुल्लाहि तआला अलैहि फ़रमाते हैं।

"ईमान के बाद पहली शरीअत नमाज़ है।"

(फ़तावा रज़विया जदीद जि.5स83)

ग़मी का चान्द ग़मी की ईद

इस्लाम में तीन(3)दिन से ज़्यादा किसी मैयत का ग़म मुनाना यानी जान बूझ कर ऐसे काम करना जिस से ग़म ज़ाहिर हो नाजाइज़ है ऐसे ही किसी के ग़म में चान्द को ग़म का चान्द या किसी महीने का ग़म को महीना कहना मना है।

जिस घर में किसी का इन्तिक़ाल हो गया हो उस के बाद जब पहली ईद आती है तो इस ईद को इस घर वालों के लिए कुछ औरतें ग़मी की ईद कहती हैं कहती हैं ईद के दिन मैयत के घर की औरतों से मिल जुल कर ख़ूब रोती हैं यह सब ग़ैर इस्लामी बातें हैं।

ईद का दिन इस्लामी त्यौहार और ख़ुशी का दिन है न कि रोने और पीटने का दिन। उस दिन कोई ग़म हो भी तो इस को ज़ाहिर न करे दिल में रहने दे चेहरे पर ग़म व

रंज के आसार ज़ाहिर न होने दे चेहरे से ख़ुशी ज़ाहिर करे और हंस मुख रहे।

हदीस पाक में है हुज़ूर पाक सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम जब मदीने तशरीफ़ लाये तो मदीने के लोग साल में दो मर्तबा ख़ुशी मनाते थे।(महरगान और नीरोज़)हुज़ूर ने पूछा यह कौन से दिन हैं? लोगों ने कहा:ज़माना–ए–जाहिलियत में हम इन दिनों में ख़ुशी मनाते थे हुज़ूर ने फ़रमाया अल्लाह तआला ने उनसे बेहतर तुम्हें दो(2)दिन अता फ़रमाये हैं ईदुल फित्र और ईदुज़्ज़हा।(अबूदाऊद बाब सलातुल ईदैन हदीस1134स.161)

इस हदीस से खूब ज़ाहिर हो गया कि ईद का दिन ख़ुशी मनाने का दिन है ग़म मनाने रोने पीटने का दिन नहीं। सदरूश्शरीआ मौलाना अम्जद अली साहब आज़मी रहमतुल्लाहि तआला अलैहि फ़रमाते हैं:

ईद के दिन खुशी ज़ाहिर करना मुस्तहब है।
(बहारे–ए–शरीअत4/781 मतबूआ मकतबतुलमदीना देहली)

कुछ जगहों पर शबे बरात और मुहर्रम के चाँद को औरतें ग़मी का चाँद कहती हैं और नई दुलहन के लिए ज़रूरी ख़्याल किया जाता है कि वह यह चाँद सुसराल में न देखे बल्कि मैके में आकर देखे तो यह सब जाहिल औरतों की मन गढ़ंत वहम परस्ती की बातें हैं उन से बचना ज़रूरी है कोई भी औरत कोई सा चाँद कही भी देख सकती है हाँ जवान लड़कियों और औरतों को खुली छत्तों पर चाँद देखने के लिए चढ़ना मना है ताकि बे पर्दगी न हो।

जूते चप्पल पर खड़े हो कर जनाज़े की नमाज़ पढ़ने का मसअला

जनाज़े की नमाज़ आम तौर पर ख़ाली पड़े मैदानो,रास्तों,और खेतों वग़ैरा में पढ़ी जातीहै। कुछ लोग इन ज़मीनों को नापाक ख़्याल करते हुये जूते चप्पल उतार कर उन पर खड़े हो कर नमाज अदा कर लेते हैं तो ऐसा करना जाइज़ वल्कि वेहतर है और नमाज़ दुरूस्त हो जायेगी किसी चीज़ मिटटी,कपड़े,बदन ज़मीन वग़ैरा के पाक और नापाक होने की तीन सूरतें हैं।

1– यक़ीन से पता है कि वह पाक है।

2– यक़ीन से पताहै कि वह नापाक है।

3– इस के पाक और नापाक होने में शकहै। पंता नहीं कि पाक है या नापाक है।

पहली सूरत में तो वह पाक है ही लेकिन तीसरी सूरत में भी जब कि उसके पाक और नापाक होने में शक हो तब भी इस को पाक माना जायेगा नापाक नहीं,नापाक तभी कहेंगे जब नापाकी का यक़ीन हो या ग़ालिबे गुमान।

कोई भी ज़मीन जब तक़ इस के नापाक होने का पता न हो वह पाक कहलायेगी आप इस पर खड़े हो कर बग़ैर कुछ बिछाये भी नमाज़ पढ़ सकते हैं।

जूते का तला भी जब ख़ूब पता हो कि इस पर कोई नापाक चीज़ लगी है तभी उस को नापाक कहा जायेगा सिर्फ़ शक व शुब्ह की बिना पर नापाक नहीं कहा जा सकता जूते के तला पाक हो सकता है उ़लमा–ए–किराम ने फ़रमाया कि जूते की तले पर अगर कोई नापाक चीज़ लगी भी हो, उस को पहन कर चला। घास या मिटटी पर कुछ देर चलने से जो रगढ़ पैदा हुई उस से भी जूते का तला पाक हो सकता है।

अब इस सिलसिले में मसाइल की तफ़सील हस्बे ज़ैल है।

ज़मीन अगर नापाक है यानी उस के नापाक होने का यक़ीन है उस के ऊपर नंगे पैर खड़े हो कर बग़ैर कुछ बिछाये नमाज़ पढ़ी नमाज़ नहीं होगी।

ज़मीन अगर पाक है या उस के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता कि पाक है या नापाक तो उस पर बग़ैर कुछ बिछाये नंगे पैर खड़े हो कर नमाज़ पढ़ी जा सकती ह

ज़मीन नापाक है लेकिन जूते पहन कर नमाज़ पढ़ी और जूते का तला पाक है नमाज़ सही हो जायेगी।

ज़मीन भी नापाक है जूते का तला भी नापाक है लेकिन जूते उतार कर उन पर खड़े हो कर नमाज़ पढी नमाज़ हो जायेगी क्योंकि अब उस नापाकी का बदन जिस्म से कोई तअल्लुक़ नहीं और अगर पहने हो तो वह नापाकी जिस्म का हिस्सा मानी जायेगी।

ख़ुलासा यह है कि ज़्यादा एहतियात उसी में है कि जूते उतार कर उन पर खड़े हो कर नमाज़ अदा करे यह सब से बेहतर और मुहतात तरीक़ा है।

आला हज़रत फ़रमाते हैं:

अगर वह जगह पेशाब वग़ैरा से नापाक थी या जिस के जूतों के तले नापाक थे और उस हालतमें जूता पहने हुये नमाज पढ़ी उन की नमाज़ न हुई। एहतियात यही है कि जूता उतार कर उस पर पाव रख कर नमाज़ पढ़ी जाये कि ज़मीन या तला अगर नापाक हो तो नमाज़ में ख़लल न आये।(फ़तावा रज़विया जदीद 9/188)

और एक मकाम पर लिखते हैं:

अगर कोई शख़्स बहालते नमाज़ निजासत पर खड़ा

हुआ और उस के दोनों पैरों में जूते या जुराबें हैं तो उसकी नमाज़ सही न होगी और अगर यह चीज़ें जुदा हैं तो हो जायेगी। (फ़तावा रज़विया जदीद962)

एक जगह लिखते हैं:

शुबह से कोई चीज़ नापाक नहीं होती कि असल तहारत है।(फ़तावा रज़विया जदीद जि4स.394)

हिजड़े की नमाज़े जनाज़ा

कुछ लोग हिजड़े की नमाज़े जनाज़ा पढ़ने न पढ़ने के बारे शक करते हैं कि पढ़ना जाइज़ है या नहीं तो मसअला यह है कि हिजड़ा अगर मुसलमान है तो उस की नमाज़े जनाज़ा पढ़ी जायेगी और उस को मुसलमानों के क़ब्ररिस्तान में दफ़न किया जायेगा।

कुछ लोग पुछते हैं कि हिजड़े की नमाज़ की नियत और उस में जो दुआ पढ़ी जायेगी वह मरदों वाली हो या औरतों वाली शायद उन लोगों को यह मालूम नहीं कि मरदों और औरतों की नमाज़े जनाज़ा और उस की नियत में कोई फ़र्क़ नहीं दोनों का तरीक़ा एक ही है और वही तरीक़ा हिजड़े के लिए भी रहेगा। हाँ नाबालिग़ बच्चे और बच्ची की दुआ म फ़र्क़ है और वह बहुत मामूली ज़मीरों का फ़र्क़ है तो अगर हिजड़ा नाबालिग़ बच्चा हो तो उस के लिए लड़के वाली दुआ पढ़ दें या लड़की वाली हर तरह नमाज़ दुरूस्त हो जायेगी।(फ़तावा रज़विया जदीद जि.9स.174 फ़तावा बहरुल उ़लूम जि.5स.174)

क्या इमाम के लिए मुक़तदियों की नियत करना ज़रूरी है

बाज़ जगह कुछ ना ख़्वान्दे जाहिल लोग इमामों को परेशान करते हैं और उन से इमामत की नियत पूछते हैं हांलाकि इमाम के लिए अलग से मुक़तदियों की इमामत की

नियत करने की कोई जरूरत नहीं।

फ़तावा आलम गिरी में है:

والاما ينوى ماينوى المنفرد ولا يحتاج الى نيت الامامة.

और इमाम भी वही नियत करेगा जो अकेला आदमी नियत करता है और इमाम को इमामत की नियत की कोई ज़रूरत नहीं।(फ़तावा आलम गिरी जि.1बाब 3फ़स्ल4स.66) और ज़बान से नियत के अल्फ़ाज़ अदा करना तो किसी के लिए भी किसी नमाज़ में ज़रूरी नहीं क्योंकि नियत दिल के इरादा का नाम है। उस की तफ़सील हम ने अपनी किताब इमाम और मुक़तदी में लिखी है।

हज़रत बिलाल के अज़ान न देने का वाक़िआ

हज़रत बेलाल रदियल्लाहु तआला अन्हु के मुतअल्लिक़ एक वाक़िआ बयान किया जाता है कि एक मर्तबा कुछ हज़रात ने उन की अज़ान पर एतेराज़ किया वह शीन को सीन कहते हैं हुज़ूर ने उन को माज़ूल कर दिया और किसी दूसरे साहब ने अज़ान दी तो सुबह न हुई जब अज़ान हज़रत बिलाल ने दी तब सुबह हुई।

यह वाक़िआ बे असल है मुस्तनद व मोअतबर हदीस व तारीख़ की किताबों में कही नहीं जो साहब बयान करें उन से मालूम करना चाहिए कि उन्होंने यह वाक़िआ कहाँ देखा।

और यह हदीस कि हज़रत रसूल पाक सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

سين بلال عند الله شين:

बिलाल की सीन भी अल्लाह के नज़दीक शीन है।

इस हदीस को हज़रत मौलाना अली क़ारी मक्की रहमतुल्लाहि तआला अलैहि ने गढ़ी हुई फ़रमाया है।

(मौज़ूआत कबीर स 43 फ़तावा बहरूल उलूम जि.5स.380)

क्या औ़रत पीर हो सकती

औ़रत का पीर बन्ना मुरीद करना जाइज़ नहीं न मरदों को न औ़रतों को। आज कल तो यह तक सुन्ने में आया है कि औरतें पीर बन कर मुरीदों में दौरे तक करने लगी हैं।

यह सब ग़लत बातें और औ़रतो का पीरी मुरीदी करना स़ही नहीं।

इमाम अ़ब्दुलवहाब शोअ़रानी अपनी मशहूर किताब मीज़ानुश्शरीअ़तुलकुबरा में तह़रीर फ़रमाते हैं:

قد اجمع اهل الكشف على اشتراط الذكورة في كل داع الى الله.

बुज़ुर्गों का इस बाबत पर इत्तिफ़ाक़ है कि दाई़ इलल्लाह होने के लिए मर्द होना शर्त़ है।(मीज़ानुश्शरीअ़तुल कुबरा बाबुल अक़्जि़या जि.2स189)

आज कल औ़रतों के जलसे हो रहे हैं और औ़रतों को मुबल्लेग़ा और मुक़र्रिरा बना कर जगह जगह घुमाया जा रहा है यह भी सब मेरी समझ में नहीं आता।

और इमाम अ़ब्दुलवहाब शोअ़रानी का जो क़ौल हम ने नक़ल किया उस से भी हमारे ख़्याल की ताईद होती है। वल्लाहु तआ़ला अअ़लमु

आ़ला ह़ज़रत फ़रमाते हैं:

सलफ़ सालेह़ीन से ले कर आज तक कोई औ़रत न पीर बनी न बैअ़त किया(फ़तावा रज़विया जदीद जि.21स494)

क्या क़ब्र पर तख़्ते रखने में मर्द व औ़रत पर में फ़र्क़ है?

कुछ लोग पूछंते हैं कि मय्यत को क़ब्र में रखने के बाद अगर मर्द हो तो तख़्ते लगाना किधर से शुरू करना चाहिए सिरहाने या पाइंती से और औ़रत के लिए किधर से

मसअला यह है कि मर्द हो या औ़रत तख़्ते सिरहाने से लगाना शुरूअ़ करें और दोनों में फ़र्क़ समझना ग़लती है।(फ़तावा मुस्त़फविया स.271 मत़बूआ़ रज़ा एकेडमी मुम्बई)यानी दोनों के तख़्ते सिरहाने से शुरू कियें जायें।

नूर नामा और शहादत नामे

"नूर नामा"नाम से एक किताब उर्दू नज़्म में ख़ूब पढ़ी जाती है उस में हुज़ूर की पैदाइश का वाक़िआ और आप के नूर का क़िस्सा जिस त़रह़ बयान किया गया है वह बे अस़ल और ग़लत़ है किसी मुस्तनद व मोअ़तबर ह़दीस व तारीख़ की किताब में उस का ज़िक्र नहीं।

ऐसे ही शहादत नामा नाम से जो किताबें ह़ज़रत सय्यदिना इमाम हस्न और सय्यदिना इमाम हुसैन रद़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुमा के वाक़िआ़त व ह़ालात से मुत़अ़ल्लिक़ राइज हैं वह भी अकसर ग़लत़ बे स़रोपा वाक़िआ़त व हिकायत पर मुश्तमिल हैं।

आ़ला ह़ज़रत फ़रमाते हैं:

नूर नामे के नाम से जो रिसाला मशहूर है उस की रिवायत बे अस़ल है उसको पढ़ना जाइज़ नहीं(फ़तावा रज़विया जदीद जि.26 स610)

और फ़रमाते हैं:

शहादत नामे नज़्म या नसर जो आज कल अ़वाम में राइज हैं अकसर रिवायते बात़िला व बे सरोपा से ममलू और अकाज़ीब मोज़ूआ़(गढ़ी हुई झूटी हिकायतें)पर मुश्तमिल हैं ऐसे बयान का पढ़ना सुनना मुत़लक़न ह़राम व नाजाइज़ है। (फ़तावा रज़विया जदीद जि24 स513)

तीजे के चनों का मसअला

न्याज़ व फ़ातिह़ा तीजे दस्वीं,चालीसवीं,और तबारक

वग़ैरा यह सब सिर्फ़ जाइज़ अच्छे और मुस्तहब काम हैं न शरअन फ़र्ज़ हैं न वाजिब न सुन्नत कोई न करे तब भी कोई हर्ज व गुनाह नहीं लेकिन आज कल उन कामों को इतना ज़रूरी समझ लिया गया है कि ग़रीब से ग़रीब आदमी के लिए भी उन का करना इतना ज़रूरी हो गया है कि ख़्वाह कही से करे कैसे ही करे उधार क़र्ज़ लेकर मगर करे ज़रूर यह सुन्नियत के नाम पर ज़्यादती हो रही है।

हक़ यह है कि हुज़ूर स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम और आप के स़हाबा व ताबेईन के ज़माने में मय्यत को सवाब पहुँचाते और उसकी मग़फ़िरत की दुआ़ के लिए सिर्फ़ जनाज़े की नमाज़ होती थी और किसी चीज़ का रिवाज न था यह सब काम बहुत बाद में राइज हुये कुछ मौलवियों ने उन्हें एक दम नाजाइज़ व ह़राम कह दिया सिर्फ़ इसलिए कि यह सब नये काम हैं लेकिन उ़लमा–ए–अहले हक़ अहले सुन्नत वलजमाअ़त ने फ़रमाया कि यह सब काम अगर्चे नये हैं मगर अच्छे हैं बुरे नहीं लिहाज़ा जाइज़ हैं मुस्तहब हैं लेकिन उन्होने भी फ़र्ज़ या वाजिब या शरअ़न लाज़िम व ज़रूरी नहीं कहा मैंने इस बयान को तफ़स़ील व तह़क़ीक़ के साथ अपनी किताब। "बारहवीं शरीफ़ जलसे जुलूस" और दरमियान उम्मत में भी लिख दिया है।

आज कल बाज़ जगह तो ग़रीब से ग़रीब आदमी के लिए भी इस न्याज़ व फ़ातिह़ा के रिवाजों को जो ज़रूरी ख़ियाल किया जा रहा है यह बड़ी ज़्यादती है।

तीजे के मौक़े पर जो चनों पर कलमा पढ़ने का

मुआमला है इस की हकीकत सिर्फ इतनी है कि एक हदीस में यह आया है कि जो सत्तर हजार 70000/मर्तबा कलमा पढ़े या किसी दूसरे को पढ़ कर बख्शे तो इस की मग्फिरत हो जाती है।

आला हज़रत फ़रमाते हैं:

कलमा तय्यबा सत्तर हज़ार मर्तबा मअ दुरूद शरीफ़ पढ़ कर बख़्श दिया जाये इन्शाअल्लाह पढ़ने वाले और जिस को बख़्शा है दोनों के लिए ज़रीआ निजात होगा। (अलमलफूज़ जि.1स.103/मतबूआ रज़वी किताब घर देहली)

हज़रत मौलाना अ़ली क़ारी मक्की रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैहि ने भी मिरक़ात शरह़ मिश्कात किताबुस्सलात बाब मा अ़ललमामूमे मिनलमुताबअ़त फ़स्ले सानी स.102में इस ह़दीस को नक़ल किया है:

अन्वारे सातिआ़ स.232/पर भी मिरक़ात शरह़ मिश्कात के ह़वाले से यह सत्तर हज़ारकी ह़दीस मन्कूल है बुज़ुर्गों ने इस गिन्ती को पूरा करने के लिए साढ़े बारा सेर दरमियानी क़िस्म के चनों का अन्दाज़ा लगाया था।

आज कल की नई तोल के मुताब्रिक चुंकि"किलो" इस सेर से कुछ छोटा होता है लिहाज़ा साढ़े चौदह किलो या फिर ज़्यादा से ज़्यादा पन्द्रह किलो चनों में पूरा सोयम यानी सत्तर हज़ार बार क़लमा मुकम्मल हो जायेगा।

बरेली शरीफ़ से शाइअ़ फ़तावा मरकज़ी दारूलइफता में है।

चने की मिक़दार शरअ़न मुतअ़य्यन नहीं हाँ ह़दीस पाक में यह आया है कि"जिस ने या जिस के लिए सत्तर हज़ार कलमा शरीफ़ पढ़ा गया अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़ल व करम से उसे बख़्श देता है। लोगों ने अपनी आसानी के लिए चने इख़्तियार कर लिए कि उस में शुमारे

कलमा है और बाद में सदक़ा भी और मशहूर है कि साढ़े बारह सेर चने में यह तादाद पूरी हो जाती है।
(फ़तावा मरकज़ी दारूलइफता स.302)

कुछ मुल्लाजी लोग 32 बत्तीस किलो चने ख़रीदवाते हैं यह उन की ज़्यादती है ख़ास कर ग़रीबों मज़दूरों पर तो एक तरह का ज़ुल्म है और वह सोयम के चने पढ़ने की मज्लिस हो या कोई और आम लोगों को जमा कर के बहुत देर तक बैठाना भी इस्लामी मिज़ाज के ख़िलाफ़ है।

आला हज़रत फ़रमाते हैं:

शरीअत मुत्तहरा रिफ़्क़ व तय्सीर(नर्मी और आसानी)को पसन्द फ़रमाती है न कि मआज़ल्लाह तदीक़ व तशदीद(तंगी और सख़्ती)(फ़तावा रज़विया जदीद11/151)

आला हज़रत फ़रमाते हैं:

गुर्दे खाने का मसअला

गुर्दे खाना जाइज़ है लेकिन हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम ने पसन्द न फ़रमाया इस वजह से कि पेशाब इस में हो कर मसाने में जाता है।(अलमलफूज़ स.341 रज़वी किताब घर देहली)

इस का ख़ुलासा यह है कि हलाल जानवर के गुर्दे खाये जा सकते हैं उन्हें खाना हराम नहीं लेकिन हुज़ूर को ना पसन्द थे इस लिए न खाना बेहतर है।

छोटी तक़तीअ़ में क़ुरआन

कुछ लोग बहुत ज़्यादा बारीक ख़त में लिखे हुये और बहुत छोटे साइज़ में क़ुरआन छापते हैं जिन्हें हमाइल शरीफ़ कहा जाता है बच्चों के गले में डालने के लिए तावीज़ की तरह पूर क़ुरआन को बहुत बारीक और छोटा कर देते हैं यह नाजाइज़ है।

दुर्रे मुख़्तार में है:

بکرہ تصغیر مصحف

यानी कुरआने करीम को छोटा बनाना मकरुह है।(दुर्रे मुख़्तार किताब हज्र वल इबाहत फ़स्ल फिलबैअ जि2 स245)

आला हज़रत फ़रमाते हैं:

हज़रत उमर फ़ारूके आज़म रदियल्लाहु तआला अन्हु ने एक शख़्स के पास कुरआन मजीद लिखा हुआ देखा इस को मकरूह रखा और उस शख़्स को मारा(फ़तावा रज़विया जि4स610)

नमाज़ में अत्तहियात वग़ैरा से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ना

नमाज़ में अलहम्दु शरीफ़ से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ना सुन्नत है और उस के बाद जब कोई सूरत शुरू करे तब भी बिस्मिल्लाह पढ़ना मुस्तहब है। उस के अलावा रुकूअ़ सजदे,क़ादा वग़ैरा में बिस्मिल्लाह पढ़ने की इजाज़त नहीं अत्तहियात से पहले या दुआ़ये कुनूत या दुरूद शरीफ़ और उस के बाद की दुआ़ से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ना मना है क्यों कि बिस्मिल्लाह कुरआन की आयत है और नमाज़ में क़ियाम की हालत में अलहम्दु शरीफ़ और उस के बाद किरअत कुरआन मशरुअ है उसके अ़लावा करअत मम्नूअ़ है।(फ़तावा रज़विया जदीद जि6 स350)

होली,दीवाली की फ़ातिहा

होली,दीवाली यह ख़ालिस ग़ैर मुस्लिमों के त्यौहार हैं इस्लाम और मुस्लमानों का उन से कोई तअ़ल्लुक़ नहीं। मुसलमानों को उन दिनों में ऐसे रहना चाहिए जैसे आज कुछ है ही नहीं और इन दिनों को किसी क़िस्म की कोई ख़ुसूसियत नहीं देना चाहिए।

कही कही कुछ लोग होली के मौक़ा पर होलिका नाम की औरत की फ़ातिहा दिलाते हैं कुछ लोगों ने

होलीका का नाम मुराद बीवी रख लिया है और उस नाम से फ़ातिहा दिलाते हैं और कहते हैं कि होलीका हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम पर आशिक़ हो गई थी और उन पर ईमान लाई थी तो यह सब गढ़ी हुई हिकायतें और झूटी कहानियाँ हैं जिनका हक़ीक़त से किसी क़िस्म को कोई तअल्लुक़ नहीं और हरगिज़ होली का कोई हैंसियत देते हुये इस से मुतअल्लिक़ किसी क़िस्म की कोई फ़ातिहा नहीं करना चाहिए (फ़तावा बहरुलउ़लूम जि 1 स 162)

दीवाली के मौक़े पर कुछ लोग मछली पका कर फ़ातिहा पढ़वाते हैं यह भी ग़लत़ है कहते हैं कि दीवाली के मौक़े पर करने धरने और टूटके बहुत होते हैं और मछली पर फ़ातिहा पढ़ने से वह बे असर हो जाते हैं तो यह सब जाहिलाना ख़्यालात और वहम परस्ती की बातें और एक मुसलमान को उन सब से बचना ज़रूरी है अगर दीवाली के मौक़ा पर मछली पर फ़ातिहा का रिवाज़ पड़ गया तो कभी यह भी हो सकता है कि घरों को सजाना और रोशनिया करना हिन्दूओं की दीवाली होगी और मछली पर फ़ातिहा मुसलमानों की दीवाली लिहाज़ा इन दिनों में किसी क़िस्म का कोई नया काम नहीं करना चाहिए और आ़म हा़लात में जैसे रहते हैं वैसे ही रहना चाहिए।

खाने के शुरूअ़ में नमक या नमकीन

बाज़ रिवायात में है कि जब खाना खाओ तो नमक से शुरू करो और नमक पर ख़त्म करो यह सत्तर बीमारियों का एलाज है।

कुछ हज़रात इस सुन्न्त की अदायेगी के लिए खाने से पहले और बाद में नमक चाटना ज़रूरी ख़्याल करते हैं हांलाकि इस सुन्नत की अदायेगी के लिए नमक चाटना ज़रूरी नहीं बल्कि नमकीन खाना पहले और बाद में खाया

जाये तब भी यह सुन्नत अदा हो जायेगी क्योंकि नम्कीन खाने में भी नमक ज़रूर होता है और नमक जिसे अ़रबी में (मिल्ह)ملح कहते हैं इस के मअ़ना नम्कीन और ख़ारी चीज़ के भी आते हैं कुरआन करीम में समन्दर के पानी के लिए फ़रमाया गया।

﴿هذا ملح أجاج﴾[الفرقان]

यह खारी है निहायत तल्ख़(कन्ज़ूल ईमान)

मौलवी मुहम्मद हुसैन साहब मेरेठी रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैहि फ़रमाते हैं कि आ़ला हज़रत के लिए सेहरी में फिरीनी और चटनी लाई गई,मैंने पूछा हुज़ूर चटनी फिरीनी का किया जोड़। फ़रमाया नमक से खाना शुरू करना और नमक पर ही ख़त्म करना सुन्नत है इस लिए यह चटनी आई है। (हयाते आ़ला हज़रत जि1 स151 मतबूआ़ बरकात रज़ा पूरबन्दर)

तो आ़ला हज़रत के नज़दीक भी इस सुन्नत की अदायेगी के लिए नम्कीन खाना पहले और बाद में खाना काफ़ी है नमक चाटना ज़रूरी नहीं वरना वह चटनी के बजाये नमक मंगवाते।

अ़ल्लामा आ़लम फ़क़री लिखते हैं,हज़रत इब्ने अ़ब्बास रदि़यल्लाहु तआ़ला अ़न्हुमा से मरवी है कि रसूलुल्लाह स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि तीन लुक़मे नम्कीन खाने से पहले और तीन लुक़मे खाने के बाद बनी आदम को बहत्तर बलाओ से महफ़ूज़ रखते हैं। (आदाब सुन्नत 94)

खुलासा यह कि जब दसतर ख़्वान पर नमकीन और मीठा सब तरह का खाना मौजूद हो तो सुन्नत है कि पहले नम्कीन खाये फिर मीठा और बाद में फिर नम्कीन और इस सुन्नत की अदायेगी के लिए यही काफ़ी है दसतर ख़्वान

पर नमक रखने या उस को मंगा कर चाटने की ज़रूरत नहीं।

क्या हज़रत फ़ातमा की रूह मलकुलमौत ने नहीं क़ब्ज़ की ?

कुछ लोग कहते हैं कि ख़ातूने जन्नत हज़रत सय्यदा फ़ातमा ज़हरा रदियल्लाहु तआला अन्हुमा की रूहे मुबारक अल्लाह तआला ने बज़ाते ख़ुद क़ब्ज़ फ़रमाई मलकुलमौत ने आप की रूह क़ब्ज़ नहीं की यह बात शायद इसलिए कही जाती है कि हज़रत सय्यदा फ़ातमा रदियल्लाहु तआला अन्हा बहुत बा हया और पर्दे वाली थीं तो मालूम होना चाहिए कि फिरिशते बे नफ़्स बे गुनाह और मासूम हैं उन से पर्दा नहीं फ़िरिश्ते तो उन के घर में उनकी ख़िदमत के लिए आते रहते थे हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के काशाना–ए–नबूवत में बे शुमार फिरिश्ते ख़ास कर हज़रत जिब्राईल अकसर आते जाते रहते थे कभी हुज़ूर ने किसी अपनी ज़ौजए मोहतरमा से नहीं फ़रमाया कि यह फ़लाँ फिरिश्ता इस वक़्त मेरे पास है तुम उस से पर्दा करो एक मर्तबा हुज़ूर पाक की पहली रफ़ीक़ाए मोहतरमा सय्यदा ख़दीजतुल कुबरा रदियल्लाहु तआला अन्हा सय्यदा फ़ातमा की वालिदा मोहतरमा भी हैं वह हाज़िरे ख़िदमत थीं हज़रत जिब्राईल अमीन हाज़िर हुये तो हुज़ूर ने सय्यदा ख़दीजातुल कुबरा से यह तो फ़रमाया यह जिब्राईल मेरे पास हैं यह तुम्हें अल्लाह का सलाम पहुँचाने आये हैं,लेकिन यह न फ़रमाया कि तुम उन से पर्दा करो। यह सब बातें अहादीस की किताबों में आसानी से देखी जा सकती हैं और इल्म वालों से छुपी हुई नहीं हैं।

ख़ुलासा यह है कि यह बात बे सनद और रिवयतन

सही नहीं कि हज़रत फ़ातमा की रूह अल्लाह तबारक व तआला ने बग़ैर मलकुल मौत ख़ुद क़ब्ज़ फ़रमाई।

मलकुलमौत फ़िरिश्ते के ज़रीअे नहीं

हज़रत बहरुल उलूम से एक मर्तबा यह सवाल किया गया तो उन्होंने जवाब में फ़रमाया तमाम इंसानों की रूह क़ब्ज़ करने वाले मलकुलमौत हैं कुरआन शरीफ़ में है:

﴿قل يتوفاكم ملك الموت الذى وكل بكم ثم الىٰ ربكم ترجعون﴾[السجده ۱۱]

तुम सब लोगों की रूह क़ब्ज़ करने के लिए लकुलमौत मुक़र्रर हैं। (फ़तावा बहरुल उलूम 2/.76)

माथे या मांग में सींन्दूर

मुसलमान औरतों को माथे पर सीन्दूर लगाना और सर की मांग में सीनदूर भरना जाइज़ नहीं क्योंकि यह ग़ैर मुस्लिमों की औरतों में राइज है लिहाज़ा ऐसा करने में उनकी मुशाबहत है और हदीस पाक में है जो जिस क़ौम की मुशाबहत करे वह उन्हीं में है। (फ़तावा अजमलिया जि.4 स.101)

बुज़ुर्गों के नाम के चिराग़ जलाना

आंज कल इस का काफ़ी रिवाज हो गया, किसी बुज़ुर्ग के नाम का चिराग़ जला कर उस के सामने बैठते हैं यह ग़लत है हाँ अगर इस चिराग़ जलाने का कोई मक़सद हो इस से किसी राह गीर वग़ैरा को फ़ाइदा पहुँचे या दीनी तालीम हासिल करने पढ़ने पढ़ाने वालो को राहत मिले या किसी जगह ज़िक्र व शुक्र इबादत व तिलावत करने वालों को इस से नफ़अ पहुँचे तो ऐसी रोशनियाँ करना बिलाशुब्हा जाइज़ बल्कि कारे सवाब है और जब इस में सवाब है तो उस से किसी बुज़ुर्ग की रूहे पाक को सवाब पहुँचाने की नियत भी की जा सकती है आमाल और वज़ाइफ़ की

किताबों में जो आसेब वग़ैरा के इलाज के लिए छोटा चिराग़ और बड़ा चिराग़ रोशन करने के लिए लिखा है वह अलग चीज़ है वह किसी बुज़ुर्ग के नाम से नहीं रोशन किया जाता।

खुलासा यह है कि यह जो हुज़ूर ग़ौसे पाक वग़ैरा किसी बुज़ुर्ग के नाम के चिराग़ जला कर उस के सामने बैठने का मामूल है यह बे सनद बे सुबूत बे मक़सद है और बे असल है।

हदीस पाक में है हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

من احدث فی امرنا ھذا مالیس منه فھو رد.

जो हमारे दीन में कोई ऐसी बात निकाले जिस की उस में असल न हो तो वह क़बूल नहीं है। (इब्ने माजा 3हदीस 17)

दलाली का पेशा

बेचने और ख़रीदने वाले के दरमियान सौदा कराने वाले को दलाल कहते हैं इस मुआमले में उस को कुछ मेहनत और दौड़ धूप भी करना पड़ती है वक़्त भी ख़र्च होता है लिहाज़ा वह उस की उजरत ले सकता है बेचने वाले से या ख़रीद ने वाले से या दोनों से जैसा भी वहाँ रिवाज हो हर तरह जाइज़ है लेकिन यह पेशा कोई अच्छा काम नहीं अगर्चे हराम व नाजाइज़ भी नहीं।(शामी जि.7स.93बहारे शरीअत जि.11स639 मकतबतुल मदीना)

रिशवत लेने और देने का मसअला

हदीस पाक में है:

لعن رسول الله صلی الله تعالیٰ علیه وسلم الراشی و المرتشی.

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने रिशवत देने और लेने वाले पर लअनत फ़रमाई। (मिश्कात बाब रिज़्क़ुलवला स.326)

लेकिन यह रिशवत लेने देने की चार सूरतें हैं।

(1) कोई मनसब या ओहदा क़बूल करने के लिए रिशवत देना और लेना दोनों हराम हैं।

(2) अपने हक़ में फ़ैसला कराने के लिए हाकिम को रिशवत दे यह भी दोनों के लिए हराम है ख़्वाह वह फ़ैसला हक़ पर हो या न हो क्योंकि फ़ैसला करना हाकिम की ज़िम्मे दारी है इस के लिए इस को कुछ लेना या किसी का उस को कुछ देना हराम है। अफ़सरों को कोई काम करने के लिए कुछ माल देना और उनका लेना दोनों हराम हैं।

(3) अपने जान व माल इज़्ज़त व आबरू की हिफ़ाज़त के लिए किसी ज़ालिम को कुछ देना पड़ जाये तो यह देना जाइज़ है लेकिन लेने वाले के लिए यह भी हराम है।

मैं समझता हूँ कि इस का मतलब यह है कि अगर कोई शख़्स आप को गाली गलोज करता हो,लूटने मारने की धम्की देता हो,उस वक़्त उसको कुछ दे कर आप अपने जान व माल की हिफ़ाज़त कर लें तो यह जाइज़ है हाकिमों अफसरों को जो कुछ दिया जाता है यह तो बहर हाल सब रिशवत है और हराम है ख़्वाह अपना हक़ हासिल करने या अपने हक़ में सही फ़ैसला कराने के लिए दे क्यो कि हक़ फ़ैसला करना इस के डियूटी है।

(4) किसी शख़्स को इसलिए रिशवत दी कि वह उसको बादशाह या हाकिम तक पहुँचा दे तो यह देना जाइज़ है लेकिन लेने वाले के लिए हराम है।(फ़तावा रज़विया जदीद जि.18 स.496शरह सही मुस्लिम मौलाना गुलाम रसूल सईदी [5 स.70)

दो बे सनद हदीसे

حب الوطن من الایمان۔

वतन की मोहब्बत ईमान से है।

2 ज़ाबेह़ बक़र और क़ातेअ़ शजर वाली हदीस यानी जिस हदीस में गाये ज़िबह़ करने वाले या पेड़ काटने वाले की बख़्शिश नहीं बयान किया जाता है।

आला हजरत फ़रमाते है:

حب الوطن من الایمان.

वतन की मोहब्बत ईमान का ह़िस्सा है न हदीस से साबित है न हर गिज़ उस के यह मअ़ना(फ़तावा रज़विया जदीद जि.15 स292)

और फ़रमाते हैं:

ज़िबह़ का पेशा शरअ़न मम्नूअ़ नहीं न उस पर कुछ मुवाख़िज़ा है वह जो हदीस लोगों ने दरबार–ए–ज़ाबेह़ बक़र व क़ातिअ़े शजर बना रखी है मह़ज़ बात़िल व मोज़ूअ़ है। (फ़तावा रज़विया जदीद जि.20स.250)

ज़रूरी नोट

दीनी इस्लामी किताबों का अदब कीजिये। किताब के ऊपर कभी कोई घरेलू सामान मत रखिये। यह भी न हो कि आप ऊपर हों और क़रीब में किताब आपके नीचे। जिसके पास अदब है वह बे-पढ़ा होकर भी अच्छा है पढ़े लिखे बे-अदब से।

यह किताब उर्दू ज़बान में छप चुकी है। उर्दू जानने वाले उर्दू वाला नुस्ख़ा हासिल करके पढें। दीनी इस्लामी किताबें पढ़ने का जो मज़ा उर्दू में है वह हिन्दी में नहीं।

.कुर्आने करीम अल्लाह का कलाम है। वह अरबी ज़बान में नाज़िल हुआ उसको अरबी के अलावा किसी ज़बान में नहीं पढ़ना चाहिए। उसका तर्जमा (अनुवाद) किसी भी ज़बान में पढ़ सकते हैं लेकिन ख़ास .कुर्आन को अरबी क़े अलावा किसी भी ज़बान में पढ़ना या लिखना या छापना बहुत बुरी बात है।

कानूने
शरीअत

غلط فہمیاں اور اُن کی اِصلاح

مُکمّل

مولانا تطہیر احمد رضوی بریلوی

اِسلامی کتب خانہ
دھونرہ، بریلی شریف (یوپی)

عُبَیْدِ غوث وخواجہ رضا وکُل اولیاء
مُحَمَّدْ جمالُ الدِّیْن خانْ قادرِی رَضوی
ضِلَعْ بہرائچ شریف یو. پی. الہند
مُوبائل نمبر : ← 7860520899

ग़लत फ़हमियाँ
और उनकी
इस्लाह
(मुकम्मल)
मुरत्तिब
मौलाना तत्हीर अहमद बरेलवी
www.jannatikaun.com